Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अश्वघोष कालीन भारत

लेखक
डॉ० अंजनि लाल
एम०ए० (गोल्ड मैडलिस्ट),
पी-एच०डी० साहित्यरत्न
लखनऊ विश्वविद्यालय

प्रकाशक

कैलाश प्रकाशन, लखनऊ

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

238

राज्य संग्रहालय पुस्तकालय
प्रो० बी० एन० पुरी संग्रह
लखनऊ

जिनके निर्देशन में लिखित
इस शोध प्रबन्ध पर
लेखक को स्वर्णपदक
मिला था उन्हीं
पूजनीय डॉ- बैज नाथ पुरी जी
के
कर कमलों में
सादर
समर्पित

सिंगनेलाल

State Museum Library
7129
Lucknow

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अश्वघोष कालीन भारत

State Museum Library
7129
Lucknow

लेखक

डॉ० अँगने लाल

एम०ए० (गोल्ड मेडलिस्ट),
पी-एच०डी०, सहित्यरत्न
लखनऊ विश्वविद्यालय

राज्य संग्रहालय पुस्तकालय
प्रो० बी० एन० पुरी
संग्रह
लखनऊ

प्रकाशक

कैलाश प्रकाशन, लखनऊ

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

● प्रकाशक
कैलाश प्रकाशन
७६, खुर्शेद बाग,
लखनऊ

● अधिकार
सर्वाधिकार लेखकाधीन

● प्रथम संस्करण : १९७३ ई०

● मूल्य : रु० १५·००

● मुद्रक
साहु आर्ट प्रिंटर्स
१५५, साहु-सदन, हरीनगर,
लखनऊ

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

शिक्षा और दीक्षा के समन्वय

प्रबुद्ध जगत के आशा पुञ्ज

अश्वघोष से धर्मघोषी

भिक्षुचर्या के प्रतीक

श्रद्धेय

भदन्त आनन्द कौसल्यायन

की

सेवा में सादर

समर्पित

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

भूमिका

प्रस्तुत ग्रन्थ का कलेवर बौद्धाचार्य अश्वघोष की कृतियों में यत्र-तत्र विश्रृंखलित सांस्कृतिक सामग्री पर ही मूलतः आधारित है। अस्तु उस महाकवि के जीवन-वृत्त और कृतियों का संक्षिप्त विवेचन प्रथम अध्याय में किया गया है। पृथ्वी पर मनुष्य अपने नाना प्रकार के कार्य-कलापों का सम्पादन करता है। पृथ्वी के अभाव में उसकी स्थिति संभव नहीं है। यह सोच कर ही भूगोल (पृथ्वी) को प्रथम अध्याय के तुरन्त बाद में स्थान दिया गया है। इस दूसरे अध्याय में अश्वघोष की कृतियों के आधार पर महीतल, भारत और उसके जनपदों, नगरों, ग्रामों, पर्वतों और नदियों का वर्णन किया गया है। प्राप्त भौगोलिक सामग्री की पुष्टि तत्कालीन साहित्यिक और पुरातात्त्विक साक्ष्यों से भी की गई है। मानव के क्रिया-कलापों का क्षेत्र समाज है। समाज समुदायवाची शब्द है, जिससे उसके सभी कार्य सम्बद्ध रहते हैं। इसीलिए तीसरे अध्याय में सामाजिक संगठन और संस्थाओं, खाद्य-पेय, वस्त्र, आभूषण, श्रृंगार और आमोद-प्रमोद का वर्णन किया गया है।

धर्म और दर्शन समाज की अभिलाषाओं और आदर्शों का प्रतिबिम्ब है। अतः इसे समाज के बाद चौथे अध्याय में रखा गया है। धार्मिक जीवन में ब्राह्मण, बौद्ध और जैन धर्मों का महत्वपूर्ण स्थान था। जीवन-यापन के लिए कोई न कोई उपाय अवश्य ही अपनाना पड़ता है। इनमें कृषि, पशु-पालन, वाणिज्य और शिल्प प्राचीन भारत में मान्य जीविका-साधन रहे हैं। अर्थ के अभाव में मानव की स्थिति भी कठिन होती है। इसीलिए अर्थ की आवश्यकता और महत्ता का वर्णन पाँचवें अध्याय में किया गया है। छठवें अध्याय में अश्वघोष कालीन राजनीतिक दिग्दर्शन कराया गया है। राज्य, उसके अंग, राजत्व, मंत्री, राष्ट्र, कोष, बल तथा मित्र के साथ-साथ प्रचलित शासन-पद्धति का भी वर्णन किया गया है। सातवें अध्याय में शिक्षा और साहित्य का उल्लेख है। इसमें शिक्षा का उद्देश्य, शिक्षा के केन्द्र और संस्थाएँ, विद्यारम्भ, विद्यार्थी-जीवन, गुरु-शिष्य सम्बन्ध, अध्ययन के विषय आदि सम्मिलित हैं। आयुर्वेद और चिकित्सा शिक्षा का एक भाग था। चिकित्सा-शास्त्र उन्नत दशा में था। आयुर्वेद के महान ग्रन्थ 'चरक संहिता' के रचयिता चरक को

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अश्वघोष का समकालीन ही माना जाता है। आठवें अध्याय में भारतीय कला पर प्रकाश डाला गया है। भिन्न-भिन्न कलाएँ भिन्न-भिन्न शिल्पियों द्वारा सम्पन्न की जाती थीं, जिनका मानव-जीवन के आर्थिक पक्ष से घनिष्ठ सम्बन्ध था।

पुस्तक के अन्त में तीन परिशिष्टियाँ दी गई हैं। प्रथम परिशिष्ट में अश्वघोष द्वारा उल्लिखित राजाओं की तालिका (राजावली) दी गई है। द्वितीय परिशिष्ट (सहायक ग्रन्थ सूची) में उन ग्रन्थों का उल्लेख किया गया है जिनसे मैंने परोक्ष या अपरोक्ष रूप से सहायता ली है। तृतीय परिशिष्ट में पुस्तक में प्रयुक्त विशेष शब्दों को 'शब्दानुक्रमणिका' के रूप में अंकित किया गया है।

आवरण पृष्ठ पर अंकित अश्वघोष का चित्र पूज्य भिक्षु समधोंग रिनपोचे, प्रिंसिपल, सेन्ट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ टिबटन हायर स्टडीज, वाराणसी की सहृदयता से ही प्राप्त हो सका। एतदर्थ उनके प्रति मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ।

प्रस्तुत कृति मेरी १९५९ ई० की एम०ए० की परीक्षा के लिए स्वीकृत प्रबन्ध का संशोधित और परिवर्द्धित स्वरूप है। सर्वोत्तम प्रबन्ध होने के कारण लखनऊ विश्वविद्यालय ने इस पर लेखक को 'गोपाल दास मेमोरियल गोल्ड मेडल' प्रदान किया था। यह प्रबन्ध श्रद्धेय प्रो०, डॉ० बैजनाथ पुरी जी के निर्देशन में लिखा गया था। अपने व्यस्त जीवन से कुछ समय निकाल कर आदरणीय डॉ० पुरी ने सहृदयतापूर्वक इसकी पाण्डुलिपि को पढ़कर और आवश्यक सुधार करके अनुग्रहीत किया। डॉ० अवध बिहारी लाल अवस्थी ने समय-समय पर वहुमूल्य सुझाव दिये हैं तथा प्रोत्साहित किया है, जिसके लिए मैं कृतज्ञ हूँ। उत्तर प्रदेश शासन के प्रति भी आभार प्रकट करता हूँ जिसने आर्थिक सहायता देकर इसके प्रकाशन कार्य में शीघ्रता ला दी।

अन्त में मैं उन सभी लेखकों, अनुवादकों और सम्पादकों का कृतज्ञ हूँ जिनके ग्रन्थों अथवा पत्रिकाओं से इस पुस्तक के प्रणयन में सहायता मिली है।

डॉ० अँगने लाल
५१२/४३१, सिद्धार्थ पार्क,
निशातगंज, लखनऊ

धर्म विजय दशमी
१९७२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

संकेत-सूची

अभिधर्म	अभिधर्म कोष
अवदाम	अवदान शतक
आ०स०रि०	आर्क्योलॉजिकल सर्वे रिपोर्ट
आ०स०इ०ऐ०रि०	आर्क्योलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया ऐनुवल रिपोर्ट
इ०अ०कु०	इण्डिया अण्डर द कुषाणाज
इ०ऐज०अ०ग्री०रा०	इण्डिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई अर्ली ग्रीक राइटर्स
इण्डि०ऐण्टी०	इण्डियन ऐण्टीक्वेरी
इ०ऐ०नो०पा०	इण्डिया ऐज नोन टु पाणिनि
ए०इम्पी०यू०; इ०यू०	एज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी (हिस्ट्री ऐण्ड कल्चर ऑफ इण्डियन पीपुल जिल्द २)
एपी०इण्डि०	एपीग्राफिया इण्डिका
ऐ०ज्या०इ० (ऐ०ज्या०इण्डि०)	ऐंशेण्ट ज्याग्राफी ऑफ इण्डिया
क०अ०इ०	द क्लासिकल अकाउण्ट्स् ऑफ इण्डिया
करुणा०	करुणा पुण्डरीक
का०	काण्ड
का०इ०इ०	कार्पस इन्सक्रिप्शम इण्डिकेरम
कै०हि०इण्डि०	कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया
कै०म०म्यू०	कैटोलाग ऑफ मथुरा म्यूजियम् (वोगेल कृत)
कै०सांची	कैटालाग ऑफ सांची (मार्शल)
कै०म्यू०आ०सा०	कैटालाग ऑफ द म्यूजियम ऑफ आर्क्योलाजी ऐट सारनाथ (साहनी कृत)
च०मौ०हि०टा०	चन्द्रगुप्त मौर्य एण्ड हिज टाइम्स
चरक०	चरक संहिता

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

चौ०बु०च०	बुद्ध चरित (चौखम्भा संस्करण)
जि०	जिल्द (वाल्यूम)
जे०के०एच०आर०एस० (ज०क०हि०रि०सो०)	जर्नल ऑफ द कलिंग हिस्टारिकल रिसर्च सोसोइटी
ज०इ०हि०	जर्नल ऑफ इण्डियन हिस्ट्री
ज०रा०ए०सो०	जर्नल ऑफ रायल ऐशियाटिक सोसाइटी
ट्रा०इ०ऐ०इ०	ट्राइब्स इन ऐंशेण्ट इण्डिया
ट्रे०ह्वे०	ट्रेवेल्स ऑफ ह्वेन्सांग
डे०ज्या०डि०ऐ०मे०इ०	ज्याग्राफिकल डिक्शनरी ऑफ ऐंशेण्ट ऐण्ड मेडिवल इण्डिया
द०वा०गुप्त एज	दि वाकाटक गुप्ता ऐज
दिव्या०	दिव्यावदान
दीघ०	दीघनिकाय
पा०टि०	पाट टिप्पणी
पाणिनि०भा०	पाणिनिकालीन भारत
पो०हि०ऐ०इ०	पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ ऐंशेण्ट इण्डिया
प्रा०भा०भौ०स्व०	प्राचीन भारत का भौगोलिक स्वरूप
बु०च०	बुद्ध चरित
बु०का०भा०भू०	बुद्ध कालीन भारतीय भूगोल
बौ०द०	बौद्ध दर्शन
बौ०ध०द०	बौद्ध धर्म दर्शन
भा०सिक्के, भा०सि०	भारतीय सिक्के
म०भा०	महाभारत
महा०भा०	महाभाष्य
मज्झिम०	मज्झिम निकाय
महावस्तु	महावस्तु अवदान
मंजु श्री०	आर्य मंजु श्री मूल कल्प
मनु०	मनुस्मृति
मा०आ०सां	मानूमेण्ट ऑफ सांची
मार्क०पु०	मार्कण्डेय पुराण

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

मिलिन्द०	मिलिन्द पञ्ह
मित्रा, ललित	ललित विस्तर (राजेन्द्रलाल मित्रा संस्करण)
मे०आ०स०इण्डि०	मेम्वायर ऑफ द आर्क्योलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया
कर्न, मै०बु०	मैनुवल ऑफ इण्डियन बुद्धिज्म (कर्न)
युअन्च्वांग०	ऑन युअन्च्वांग्स ट्रेवल्स इन इण्डिया
ल०प्रा०म्यू०	लखनऊ प्राविंशियल म्यूजियम
ल०अश्वघोष	अश्वघोष
हि०ज्या०ऐ०इ०	हिस्टारिकल ज्याग्राफी ऑफ ऐंशेण्ट इण्डिया
लेफमैन ललित०	ललित विस्तर (लेफमैन संस्करण)
वज्र०	वज्र सूची
विनय०	विनय पिटक
वैद्य ललित०	ललित विस्तर (पी०एल०वैद्य संस्करण)
शास्त्री म० अश्वघोष	महाकवि अश्वघोष
शुक्र०	शुक्रनीति
संस्कृत इ०	संस्कृत साहित्य का इतिहास (कीथ)
सद्धर्म०	सद्धर्म पुण्डरीक सूत्र
सरकार, ज्या०ऐं०मे०इ०	ज्याग्राफी ऑफ ऐंशेण्ट ऐण्ड मेडिवल इण्डिया
से०इ०	सेलेक्ट इन्सक्रिप्शन्स
सौ०	सौन्दरनन्द
स्क० पु०	स्कन्द पुराण
स्ट०स्क०पु०	स्टडीज इन स्कन्द पुराण
स्ट०इ०इ०हि०ऐ०क०	स्टडीज इन इण्डियन हिस्ट्री ऐण्ड कल्चर
हिस्ट०इ०लि०	हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटरेचर भाग २
हि०लि०इ०	हिस्टारिकल ऐण्ड लिटरेरी इन्सक्रिप्शन्स
हि०क्ला०सं०लि०	हिस्ट्री ऑफ क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर
हिस्ट०संस्कृत०बुद्धि०	हिस्ट्री ऑफ संस्कृत बुद्धिज्म

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अनुक्रमणिका

अध्याय	विषय	पृष्ठ
अध्याय १	**अश्वघोष—जीवन-वृत्त और कृतियाँ**	**१-१२**
	अश्वघोष-त्रयी	१-२
	अश्वघोष की अन्य संज्ञाएँ	२-३
	माता-पिता और जन्म स्थान	३
	अश्वघोष के आचार्य	३-४
	अश्वघोष की कृतियाँ	४-५
	बुद्ध चरित	५
	सौन्दरनन्द	५-६
	सारिपुत्र प्रकरण	६
	सूत्रालंकार	६
	वज्र सूची	६
	गण्डी स्तोत्र (गाथा)	६-७
	अश्वघोष का समय	७-९
	अध्याय एक के सन्दर्भ	१०-१२
अध्याय २	**अश्वघोष का भौगोलिक वर्णन**	**१३-३५**
	महीतल	१३
	विश्वम्	१३-१४
	भौमिक विस्तार	१४
	बृहत्तर भारत	१४
	जनपद	१४-१७
	नगर और ग्राम	१७-२१
	पर्वत	२१-२४
	नदियाँ और जलाशय	२४-२५
	वन और उपवन	२५-२६
	अध्याय दो के सन्दर्भ	२७-३५

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय ३	**अश्वघोष कालीन सामाजिक दशा**	३६-७७
	सामाजिक क्रान्ति	३६-४२
	वर्ण भेद और बौद्ध दृष्टिकोण	४३-४४
	वर्ण व्यवस्था	४४-४५
	आश्रम व्यवस्था	४५-४६
	पुरुषार्थ चतुष्टय	४६-४७
	पुरुषार्थ और मानव जीवन	४७
	पारिवारिक जीवन	४७-४८
	अतिथि धर्म	४८-४९
	संस्कार	४९-५२
	गर्भाधान, पुंसवन, नामकरण, विवाह, अनुलोम विवाह, प्रतिलोम विवाह, बहु विवाह मृत संस्कार,	
	दीक्षा संस्कार	५२
	दीक्षा योग्य पात्र, पात्र की स्वीकृति, दीक्षास्थल, दीक्षा	
	भोजन और पेय	५३-५५
	शाकाहार, मांसाहार, फलाहार, सोमरस, सुरा, दुग्ध, मधु, इक्षु रस	
	वस्त्र	५६-५८
	पुरुषों के वस्त्र, सामान्य जनों के वस्त्र बौद्ध भिक्षुओं के वस्त्र, अन्य तपस्वियों के वस्त्र स्त्रियों के वस्त्र	
	आभूषण	५८-५९
	पुरुषों के आभूषण, स्त्रियों के आभूषण	
	शृंगार	५९-६०
	आमोद-प्रमोद	६१-६२
	समाज और उत्सव, पशु-पक्षी युद्ध, गायन, वादन और नृत्य, मृगया और बिहार, दोला और खिलौने	

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

	सामाजिक कुरीतियाँ	६३-६४
	चोरी, जुआं और मद्यपान	
	वेश्यावृत्ति, विधवा-प्रथा, सती-प्रथा, पर्दा-प्रथा	
	अध्याय तीन के सन्दर्भ	६५-७७
अध्याय ४	**धर्म और दर्शन**	**७८-१०९**
	धार्मिक सहिष्णुता	७८
	ब्राह्मण धर्म	७९-८४
	वैदिक यज्ञ	७९-८०
	गृहस्थों के पाँच महायज्ञ	८०
	सोम पान	८०
	देवी-देवता	८०-८१
	शैव सम्प्रदाय	८१
	वैष्णव सम्प्रदाय	८२
	तपश्चर्या एवं बौद्ध दृष्टिकोण	८२-८४
	बौद्ध धर्म	८५-९९
	बौद्ध धर्म के प्रमुख यान	८५
	हीनयान	८५-८६
	महायान	८६-८७
	मूल सिद्धान्त	८८-८९
	दो अन्त और मध्यम मार्ग	८९-९०
	चार आर्य सत्य	९०-९१
	दु:ख, दु:ख समुदय,	
	दु:ख निरोध, दु:ख निरोध गामिनी प्रतिपदा	
	अष्टांगिक मार्ग	९१
	प्रज्ञा सम्बन्धी मार्ग	९२
	शील सम्बन्धी मार्ग	९२
	समाधि सम्बन्धी मार्ग	९२-९३
	महत्व	९३
	निर्वाण मार्ग	९३
	चार फल, चार ध्यान	९३-९४

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

	बौद्ध दर्शन	९५-९६
	सर्वंअनित्यम्, सर्वं शून्यम्	
	सर्वंअनात्मनम्, सर्वंदु:खम्,	
	निर्वाणंशान्तम्	
	जन-प्रिय उपासना	९७-९९
	नाग पूजा, यक्ष पूजा	९७-९९
	अध्याय चार के सन्दर्भ	१००-१०९
अध्याय ५	**आर्थिक दशा**	**११०-१२९**
	अर्थ का महत्त्व	११०
	कृषि कर्म और पशुपालन	११०-११२
	क्षेत्र की तैयारी	११०
	बीज-वपन	११०-१११
	सिंचाई के साधन	१११
	उत्पादित अन्न	१११
	पशु-पालन	१११-११२
	उद्योग और व्यवसाय	११३-११८
	वर्द्धकि, बुनकर, चित्रकार, नापित,	
	शैलरूपकार, रजक, लौहकार,	
	स्वर्णकार और हिरण्यकार,	
	मणिकार, रजतकार, गान्धिक, वणिक,	
	सपेरे, मछुए, लुब्धक	
	श्रम-सेवा	११७-११८
	नारी-सेविकाएँ, पुरुष-सेवक	
	वाणिज्य और व्यापार	११९-१२२
	व्यापारी और सार्थवाह	११९
	व्यापारिक केन्द्र और बन्दरगाह	११९-१२०
	विनिमय का माध्यम	१२०
	तौल और नाप	१२०
	गमनागमन के साधन	१२१-१२२
	स्थल के साधन	

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

	जल के साधन	१२१-१२२
	अध्याय पांच के सन्दर्भ	१२३-१२९
अध्याय ६	**राजनैतिक दशा**	**१३०-१५०**
	राज्य	१३०
	राज्यांग	१३०
	राजत्व	१३०-१३१
	राजत्व का उदय, राजगुण, आचार, आर्यभाव, नीति, कार्य कौशल्य	
	राजवृत्त	१३१-१३३
	राष्ट्र रक्षण और प्रजा रंजन, शत्रु-निग्रह, सर्वधर्म व्यवस्था, राजविरुद, युवराज, उत्तराधिकार अभिषेक, राज्य-परित्याग राजपत्नी, राजदोष	
	मन्त्री	१३४-१३५
	मन्त्रिमण्डल	१३४
	अर्हताएँ और कोटियां	१३४-१३५
	मंत्रिपद और नियुक्ति	१३५
	राष्ट्र	१३५
	राजधानी	१३५
	कोष	१३५
	कर व्यवस्था	१३५-१३६
	बल	१३६
	हस्तिसेना, रथसेना अश्वसेना, पदाति	
	सेनाधिकारी	१३६
	व्यूह रचना और युद्ध	१३७
	आयुध	१३७-१३८
	मित्र	१३८

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

शासन व्यवस्था

	न्याय और दण्ड व्यवस्था	१३९
	दण्ड में कमी	१३९
	बन्दियों की मुक्ति	१४०
	चर व्यवस्था	१४०
	दूत व्यवस्था	१४०
	अधिकारियों की नियुक्ति	१४०
	उपाय	१४०-१४१
	राजपुरुष	१४१
	अध्याय छः के सन्दर्भ	१४२-१५०
अध्याय ७	**शिक्षा और साहित्य**	**१५१-१५८**
	शिक्षा का उद्देश्य	१५१
	शिक्षा के केन्द्र तथा संस्थाएँ	१५१-१५२
	विद्यारम्भ की आयु और प्रवेश	१५२
	लेखन-सामग्री	१५२
	विद्यार्थी-जीवन	१५२
	अध्यापकों की विभिन्न संज्ञाएँ	१५२
	गुरु-शिष्य-सम्बन्ध	१५३
	शिक्षा-शुल्क और गुरुदक्षिणा	१५३
	स्त्री-शिक्षा	१५३
	अध्ययन के विषय	१५३
	वेद-वेदांग-शिक्षा	१५४
	शास्त्र-और विद्यायें	१५४
	धातु-शिल्प प्रशिक्षण	१५४-१५५
	हस्तशिल्प की शिक्षा	१५५-१५६
	संगीत वाद्य और नृत्य की शिक्षा	१५६
	साहित्य और साहित्यकार	१५६
	चिकित्सा और आयुर्वेद	१५७-१५८
	आयुर्वेद का महत्व	१५७
	प्राचीनता	१५७

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

रोग, रोगोत्पत्ति, और निदान	१५७-१५८
रोगी और वैद्य के मध्य सम्बन्ध	१५८
चिकित्सक-संज्ञाएँ और कोटियां	१५८
अध्याय सात के सन्दर्भ	१५९-१६४
अध्याय ८ कला	**१६५-१७८**
कला का महत्व	१६५
चित्रांकन	१६५
प्रतिमाएँ	१६५-१६८
खिलौने	१६९
नगर नियोजन और भवन निर्माण	१६९-१७०
स्थापत्य कला	१६९
नगर नियोजन	१६९
राज मार्ग और हाट	१७०
उद्यान एवं जलाशय	१७०
जल कूप और धर्म शालाएँ	१७०
परिखा और प्राचीर	१७०
नगरों का उद्‌घाटन	१७०
भवन निर्माण	१७०-१७३
प्राचीनता	
भवन और उसके अंग	
विहार	१७१-१७२
स्तूप	१७२-१७३
चैत्य	१७३
स्तम्भ	१७३
अध्याय आठ के सन्दर्भ	१७४-१७८
परिशिष्ट १ राजावली	१७९-१८७
परिशिष्ट २ सहायक ग्रन्थ सूची	१८८-१९८
परिशिष्ट ३ शब्दानुक्रमणिका	१९९-२३८

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय १

अश्वघोष--जीवनवृत्त और कृतियाँ

प्राचीन भारतीय विचारक, कवि और लेखक अपने जीवन-चरित्र के विषय में प्राय: मौन ही रहे हैं। यही कारण है कि उनका जीवन-वृत्त जानने के लिए परोक्ष और अपरोक्ष साक्ष्यों का सहारा लेकर भी किसी निश्चित मत पर पहुँचना कठिन हो जाता है। बौद्धाचार्य अश्वघोष भी उसी प्राचीन परम्परा की एक कड़ी थे। उन्होंने अपनी जीवन-लीलाओं के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं लिखा और आधुनिक विद्वानों को अटकलें लगाने के लिए स्वतन्त्र छोड़ दिया। इस समय तक उनके समय के विषय में विद्वान एक मत नहीं हो सके हैं।

अश्वघोष त्रयी—काल-क्रम और भाषा-भाव के आधार पर अश्वघोष नामक तीन विद्वानों से साहित्य परिचित है। डॉ० बी० सी० ला ने अपने ग्रन्थ 'अश्वघोष' में इन तीनों के अलग-अलग अस्तित्व पर प्रकाश डाला है। वे प्रथम अश्वघोष 'महासूत्रालंकार शास्त्र' के लेखक को मानते हैं। उनका मत है कि इस ग्रन्थ में महायान बौद्ध-धर्म के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं है। ये महापरिनिर्वाण के ३०० या ३७० वर्ष बाद हुए। सूत्रालंकार शास्त्र का चीनी भाषा में अनुवाद ४०५ ई० में कुमारजीव द्वारा हुआ था।

इसी ग्रन्थ के आधार पर ला महोदय उक्त अश्वघोष को पश्चिमी भारत का मानते हैं जिसकी परम्परागत तिथि प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व मानी जाती है।[1] द्वितीय अश्वघोष जिसे स्थविर या भिक्षु कहना उचित होगा, हीनयानी भिक्षु थे। इनका आविर्भाव बुद्ध के महापरिनिर्वाण के ४०० वर्ष बाद हुआ था और वह पार्श्व स्थविर के शिष्य के शिष्य थे। स्थविर अश्वघोष को मध्यदेश का निवासी बताया गया है। डॉ० ला का मत है कि यह अश्वघोष साकेत वासी सुवर्णाक्षी के पुत्र महावादी अश्वघोष ही थे, जिन्होंने बुद्ध-चरित और सौन्दरनन्द काव्यों की रचना की। वह सम्राट कनिष्क (प्रथम) के समकालीन थे।[2] तृतीय अश्वघोष बोधिसत्व अश्वघोष थे, जिन्होंने 'महायान श्रद्धोत्पाद शास्त्र' ग्रन्थ की रचना की। यह महापरिनिर्वाण के ५०० से ७००

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वर्ष बाद हुए थे[३]। इस प्रकार ला महोदय अश्वघोष नाम के तीन भिन्न-भिन्न विद्वान मानते हैं।

डॉ० ला, प्रथम अश्वघोष की रचना 'सूत्रालंकार शास्त्र' बताते हैं और उसे बुद्ध-चरित से पहले की रचना माना गया है। परन्तु सूत्रालंकार शास्त्र में बुद्धचरित का उल्लेख मिलता है।[४] साथ ही बुद्ध-चरित के उदाहरण भी उसमें मिलते हैं।[५] ऐसी दशा में सूत्रालंकार को बुद्ध-चरित के पूर्व का नहीं माना जा सकता। दूसरी ओर महोदय सिलवां लेवी[६], जी० के० नारीमेन[७], विन्टरनित्ज[८], कीथ[९] आदि विद्वान इस ग्रन्थ को बुद्ध-चरित के रचयिता अश्वघोष की कृति मानते हैं। डॉ० ला उक्त प्रथम और द्वितीय दोनों अश्वघोष नामक विद्वानों को हीनयानी मानते हैं, जिनकी कृतियों में महायान के कोई चिह्न नहीं मिलते। अस्तु ऐसा प्रतीत होता है कि ये दोनों उपर्युक्त अश्वघोष अलग-अलग दो व्यक्ति न होकर एक ही थे जिन्होंने बुद्धचरित और सौन्दरनन्द आदि ग्रन्थों की रचना की थी। यदि कीथ[१०] तथा विन्टरनित्ज[११] महोदय का यह कथन मान लिया जाय कि अश्वघोष पहले हीनयान की 'सर्वास्तिवाद' शाखा के मानने वाले थे एवं बाद में बुद्ध की लोक-उद्धारक शक्ति से प्रभावित होकर महायान सम्प्रदाय को अपनाया और वह महायान सम्प्रदाय के प्रवर्तकों में से एक हुए, तो 'महायान श्रद्धोत्पाद' को स्थविर अश्वघोष की रचना मानने में कोई आपत्ति नहीं होगी। जहाँ तक डॉ० ला द्वारा उद्धृत समय का प्रश्न है वह चीनी और तिब्बती ग्रन्थों के अनुसार है जिनका आधार उन देशों के यात्रियों का भारत-यात्रा का विवरण है। उन यात्रियों ने भारत के लोगों से पूछ करके ही अश्वघोष का समय लिखा होगा, अतः उसमें समय सम्बन्धी दोष होना कोई अस्वाभाविक बात नहीं है।

इस प्रकार 'सूत्रालंकार शास्त्र' के रचयिता अश्वघोष, स्थविर अश्वघोष और बोधिसत्व अश्वघोष एक ही व्यक्ति थे जो अपने विचारों के क्रमिक परिवर्तन और परिवर्द्धन के कारण स्थविर और बोधिसत्व बने।

अश्वघोष की अन्य संज्ञाएँ—चीनी तथा तिब्बती बौद्ध ग्रन्थों में अश्वघोष के कई नाम मिलते हैं। निरुक्ति के अनुसार भदन्त शान्तिभिक्षु ने अश्वघोष की संज्ञा के विषय में लिखा है कि जिसके धर्मघोष को अश्वों ने भी स्वीकार किया हो।[१२] इससे कुषाण सम्राट कनिष्क द्वारा अश्वघोष की विद्वत्ता की परीक्षा की ओर संकेत है। चीनी भाषा में अश्वघोष के दो अन्य विरुद

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

पुण्यादित्य और पुण्यश्री मिलते हैं,[१३] जिन्हें डॉ० हरिदत्त शास्त्री ने सम्भवतः भ्रमवश एक ही उपाधि मानी है ।[१४]

तिब्बती इतिहासकार तारानाथ ने अश्वघोष के अन्य ९ विरुदों का उल्लेख किया है । उन्होंने मातृचेट और शूर को भी अश्वघोष का ही नाम बताया है ।[१५] परन्तु तारानाथ का यह कथन सत्य नहीं माना जा सकता क्योंकि मातृचेट, अश्वघोष के समय में ही एक दूसरे विद्वान थे, जिन्हें स्वयं अश्वघोष ने सम्राट कनिष्क के दरबार में आमंत्रित किया था ।[१६] अश्वघोष की कविता का मातृचेट पर विपुल प्रभाव पड़ा था ।[१७] शूर (आर्य शूर) भी अश्वघोष से भिन्न विद्वान माने जाते हैं, जिन्होंने 'जातक माला' ग्रन्थ की रचना की । स्वर्गीय डा० वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार आर्यशूर ने 'पारमितासमास' नामक ग्रन्थ की भी रचना की थी । इस ग्रन्थ की मूल प्रति नैपाल के महाराज के पुस्तकालय में सुरक्षित है ।[१८] इस प्रकार मातृचेट और आर्यशूर अश्वघोष के ही नाम नहीं हो सकते ।

माता-पिता और जन्म-स्थान—अश्वघोष के परिवार और जन्म-स्थान की भी एक समस्या है । विद्वान इन्हें 'घोड़ा' नामक स्त्री से उत्पन्न 'लोक' का पुत्र मानते हैं ।[१९] दूसरे विद्वानों के अनुसार वह 'संघगुह्य' नामक धनी ब्राह्मण के पुत्र थे ।[२०] सौन्दरनन्द, बुद्ध-चरित्र तथा शारिपुत्रप्रकरण के अन्तिम वाक्य से पता चलता है कि उनकी माता का नाम आर्य सुवर्णाक्षी था और वे साकेत[२१] (संचानकोट, जिला उन्नाव, उ० प्र०)[२२] के निवासी थे । महोदय विन्टरनित्ज ने पटना तथा बनारस में उनका निवास होने का संकेत किया है ।[२३]

अश्वघोष के आचार्य—डॉ० ला अश्वघोष को स्थविर पार्श्व अथवा उनके शिष्य का शिष्य मानते हैं ।[२४] इस आचार्य और शिष्य के विषय में महोदय एम० कृष्णम् चैरियर ने एक कथानक प्रस्तुत किया है, जिसके अनुसार अश्वघोष ने (बौद्ध दीक्षा लेने के पूर्व) अपने नगर में एक घंटा बंधवा दिया था जिसे कोई भी बौद्ध भिक्षु छू नहीं सकता था । एक समय भदन्त पार्श्व ने अश्वघोष से प्रश्न किया कि विश्व को शान्ति, शाही दीर्घ जीवन, विस्तृत भूभाग और सुख का आनन्द लेने के लिए क्या अपेक्षित है ?[२५] अश्वघोष इस प्रश्न का उत्तर न दे सके और उन्होंने पार्श्व का गुरुत्व स्वीकार कर लिया । पार्श्व ने अश्वघोष को बुद्ध-शिक्षा प्रदान की । चीनी भाषा के धर्मपिटक (शायद अभिधर्म पिटक) में अश्वघोष को पुण्ययश का शिष्य

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

बतलाया गया है। यह ज्ञातव्य है कि पुण्ययश भदन्त पार्श्व के शिष्य थे।[२६] इस प्रकार उपर्युक्त तीनों विद्वान—अश्वघोष, पार्श्व और पुण्ययश—समकालीन सिद्ध होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि जिस समय अश्वघोष का भदन्त पार्श्व से साक्षात्कार हुआ था उस समय स्थविर बहुत वृद्ध थे, जिससे अश्वघोष को बहुत कम समय गुरु-सेवा का अवसर मिल सका। महास्थविर के परिनिर्वाण के पश्चात पुण्ययश उनके ज्येष्ठ शिष्य होने के कारण पार्श्व के उत्तराधिकारी बने, जिससे अश्वघोष को पुण्ययश की भी सेवा करने का अवसर मिला। इस प्रकार दोनों आचार्यों—पार्श्व और पुण्ययश—तथा अश्वघोष के मध्य गुरु-शिष्य का सम्बन्ध स्थापित करने में कोई भी अवरोध प्रतीत नहीं होता।

अश्वघोष की कृतियाँ—बौद्धाचार्य अश्वघोष की कृतियों के विषय में मतभेद है। चीनी त्रिपिटक में कवि की ८ भिन्न-भिन्न कृतियों के अनुवाद उपलब्ध बताये गये हैं। बुन्यु नेन्जों की पुस्तक सूची में अश्वघोष के ६ निम्नलिखित ग्रन्थ बताये गये हैं[२७]:—

(१) आचार्य सेवा-विधि पर ५० छन्द, (२) सूत्रालंकार शास्त्र, (३) महायान श्रद्धोत्पाद शास्त्र, (४) महायानभूमिगुह्यवाचामूलशास्त्र, (५) बुद्ध-चरित काव्य, (६) दशदुष्टकर्ममार्ग सूत्र।

तिब्बती परम्परा में निम्नलिखित ११ ग्रन्थों का श्रेय अश्वघोष को प्रदान किया गया है[२८]:—

(१) अष्ट विघ्न कथा, (२) गण्डी स्तोत्र गाथा, (३) दशकुशल कर्म पथ निर्देश, (४) परमार्थ बोधिचित्त-भावना क्रम वर्ण संग्रह, (५) बुद्ध चरित महाकाव्य, (६) मणिदीप महाकारुणिक देवपंच स्तोत्र, (७) वज्रयान मूलपत्ति संग्रह, (८) शतपंचशतकनाम स्तोत्र, (९) शोक विनोदन, (१०) सम्वृत्त बोधिचित्त भावनोपदेश वर्ण संग्रह और (११) स्थूल पत्ति।

डॉ० एफ० डब्ल्यू० टामस[२९] ने अश्वघोष की केवल पाँच कृतियाँ बताई है—

(१) बुद्ध चरित काव्य, (२) शारि पुत्र प्रकरण, (३) सौन्दरनन्द, (४) गण्डी स्तोत्र और (५) वज्र सूची।

"वस्तुत: उपर्युक्त समस्त ग्रन्थों का कर्त्तव्य अश्वघोष को समर्पित करना कठिन है। अश्वघोष के नाम से इन सबके सम्बन्ध का कारण उनका बौद्ध-धर्म में पाण्डित्य, उनकी विलक्षण प्रतिभा तथा उनकी महा कवित्व-शक्ति है जिसमें सभी रचनायें अश्वघोष के नाम से प्रसिद्ध होकर ख्याति पाने लगीं"।[३०]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

उपर्युक्त ग्रन्थों में जिन ग्रन्थों की संस्कृत भाषा में पाण्डु-लिपियां प्राप्त हुई हैं और जिन्हें प्राय: एक मत से अश्वघोष की रचनाएँ माना जाता है, वे निम्नलिखित हैं :

(१) **बुद्ध-चरित**—महोदय विन्टर नित्ज के अनुसार महामानव बुद्ध के जीवन से सम्बन्धित एक वास्तविक महाकाव्य है जिसे एक वास्तविक कवि ने बनाया था जो स्वयं ही बुद्ध के उपदेश सागर में डूबा हुआ था और इसी कारण से वह तथागत के जीवन और सिद्धान्तों को समुचित एवं कलात्मक ढंग से सरल भाषा में प्रस्तुत कर सका।[३१]

वर्तमान बुद्ध-चरित में २८ सर्ग उपलब्ध हैं। चीनी और तिब्बती संस्करणों में भी २८ सर्ग मिलते हैं। "सन् १८८३ ई० में सर्वप्रथम सैमुअल बील ने बुद्ध-चरित के चीनी संस्करण का अंग्रेजी में अनुवाद किया। कावेल ने इसका संस्कृत संस्करण १८९३ ई० में प्रकाशित कराया। इसके बाद जर्मन और इटली भाषाओं में भी इसके अनुवाद हुए। १९२६ ई० में फ्रेडरिक ने १७सर्गों में इसका जर्मन अनुवाद प्रस्तुत किया। कावेल के दोषों को दूर करते हुए जान्सटन ने भूमिका सहित बुद्ध-चरित्र का प्रामाणिक संस्करण निकाला। यह भी १४ सर्गों में ही उपलब्ध है।[३२]" महोदय सूर्य नारायण चौधरी ने बुद्ध-चरित को २ भागों में प्रकाशित किया। प्रथम भाग, सर्ग १ से १४ तक में जन्म से बुद्धत्व प्राप्ति तक बुद्ध की जीवन-लीला है। किन्तु द्वितीय भाग १५ से २८ सर्गों तक केवल हिन्दी अनुवाद है। ग्रन्थ के अन्त में इसकी रचना का प्रयोजन बताते हुए अश्वघोष ने कहा है कि विद्वत्ता एवं काव्य कौशल के प्रदर्शन के लिए नहीं अपितु महामानव बुद्ध के शास्त्रानुकूल जीवन, मानव के सुख और कल्याण के लिए तथा मुनि श्रेष्ठ के प्रति सम्मान भाव से इस काव्य की रचना की गई है।[३३]

(२) **सौन्दरनन्द**—सौन्दरनन्द काव्य को अश्वघोष की द्वितीय रचना माना जाता है। नैपाल से प्राप्त पाण्डुलिपि के आधार पर सर्वप्रथम डॉ० हर प्रसाद शास्त्री ने १९२२ई० में इस ग्रन्थ को प्रकाशित कराया। डॉ० जान्सटन ने भी सन् १९२८ में इसका प्रामाणिक संस्करण निकाला। यह ग्रन्थ चीनी एवं तिब्बती भाषा में अप्राप्य है। १५वीं शताब्दी में इस ग्रन्थ को अमरकोष के टीकाकार सर्वानन्द बनर्जी ने प्रमाण रूप में उद्धृत किया।[३४]

सम्पूर्ण ग्रन्थ में १८ सर्ग हैं। सुन्दरी के मोहबन्धन में फँसे हुए नन्द के आज्ञानान्धकार को जिस प्रकार लोक नायक बुद्ध ने ज्ञान-प्रकाश से दूर किया उसी का वर्णन इस काव्य में है। इस कथानक के माध्यम से अश्वघोष ने

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

सम्पूर्ण बुद्ध उपदेश को इस ग्रन्थ में समाहित कर दिया है। दुरूह बातों को उपमाओं द्वारा समझा कर सरल बना दिया गया है। ग्रन्थ प्रणयन का उद्देश्य ही बुद्ध उपदेशों की व्याख्या और प्रचार करना था।

महोदय कीथ[३५], विन्टर नित्ज और जान्सटन सौन्दरनन्द को बुद्धचरित से पूर्व की अश्वघोष की पहली रचना मानते थे परन्तु काव्यत्व की दृष्टि से सौन्दरनन्द बुद्ध चरित्र से श्रेष्ठतर रचना है। इस समय प्रायः सभी विद्वान सौन्दरनन्द को बुद्धचरित्र के बाद की रचना मानते हैं।[३६]

(३) **शारिपुत्र प्रकरण**—यह ९ अंकों का प्रकरण है। प्रो० ल्यूडर्स ने १९११ ई० में मध्य एशिया में तुरफान नामक स्थान से ताड़ पत्रों पर हस्तलिखित इसकी पाण्डुलिपि के अवशेष प्राप्त किए थे। इसके साथ प्रतीक नाटक तथा सामाजिक नाटक के भी अवशेष उपलब्ध हुए थे।[३७] इस प्रकरण का पूरा नाम "शारद्वती पुत्र प्रकरण" है। "इसमें उन घटनाओं का वर्णन है जिनके परिणामस्वरूप मौदगल्यायन और शारिपुत्र बुद्ध द्वारा बौद्ध बनाए जाते हैं।"[३८]

(४) **सूत्रालंकार**—यह ग्रन्थ, जातकों से ली गई सुन्दर कथाओं का संग्रह है। ४०५ ई० में कुमारजीव ने इसका चीनी अनुवाद तैयार किया था। ७वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में चीनी यात्री इत्सिंग ने अश्वघोष-प्रणीत सूत्रालंकार का वर्णन किया है। लोग, "कल्पना मण्डितिका" और "सूत्रालंकार" को एक ही ग्रन्थ मानते हैं, जिसका कारण दोनों ग्रन्थों की कथा साम्य है।[३९]

(५) **वज्र सूची**—इस ग्रन्थ में रामायण, महाभारत और पुराणों तथा स्मृतियों में वर्णित वर्ण-व्यवस्था का खण्डन बड़ी चातुरी तथा विद्वतापूर्ण ढंग से किया गया है। डा० हरिदत्त शास्त्री के शब्दों में "यह पुस्तक वज्र की सुई की नोक के समान वर्ण-व्यवस्था के समर्थकों को चुभती है।.........दुख-सुख, जीवन-प्रज्ञा, व्यवसाय-व्यापार, जन्म-मरण भय-काम में सब श्रेणी के लोग बराबर हैं।"[४०]

डॉ० ए० वेबर ने १८५० ई० में बर्लिन से इस ग्रन्थ का प्रकाशन किया था। सन् १९५० ई० प्रो० सुकुमार मुखोपाध्याय ने अंग्रेजी अनुवाद सहित इस ग्रन्थ को छपवाया था। १९६० ई० भिक्षु ग प्रज्ञानन्द ने इसे हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित किया।

(६) **गण्डी स्तोत्र (गाथा)**—२९ लम्बे-लम्बे स्रगधरा छन्दो में बुद्ध की स्तुति है।[४१]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

इस प्रकार अश्वघोष ने अपनी अद्वितीय प्रतिभा से बुद्ध उपदेशों का आश्रय लेकर संस्कृत साहित्य की महान सेवा की है।

अश्वघोष का समय—जिस महाकवि अश्वघोष ने इतने ग्रंथों की रचना की उसके युग के सम्बन्ध में आज तक मतभेद फैला हुआ है। इसका कारण यह है कि कवि ने ऐसा कोई उल्लेख अपने ग्रन्थों में नहीं किया जिससे उसके समय का निश्चित पता चल सके। यहाँ उनके युग-निर्धारण का कतिपय प्रयास किया गया है।

चीनी ग्रन्थ लि-तई-सन-पाओ-ची के अनुसार बोधिसत्व अश्वघोष का आविर्भाव महापरिनिर्वाण के ३०० वर्ष बाद हुआ था, और उनके ग्रन्थ "महासूत्रालंकार शास्त्र" का अनुवाद कुमारजीव ने ४०५ई० में किया था।[४२]

'महाप्रज्ञापारमिता शास्त्र' के आलोचक ह्वी-येन के अनुसार अश्वघोष का आविर्भाव महा परिनिर्वाण के ३७५ वर्ष पश्चात हुआ।[४३]

'वसुबन्धु चरित' के चीनी अनुवाद में अश्वघोष को कात्यायनी पुत्र अर्हत का समकालीन बताया गया है। कात्यायनी पुत्र ने महा परिनिर्वाण के ५०० वर्ष बाद स्वरचित ग्रन्थ 'ज्ञान-प्रस्थान शास्त्र' पर टीका लिखने के लिए अश्वघोष को काश्मीर बुलाया था। अश्वघोष ने १० लाख विभाषा श्लोकों की रचना की थी।[४४]

जान्सटन महोदय के अनुसार 'बुद्धचरित' का चीनी अनुवाद पांचवी शताब्दी (४०५ ई०) में हुआ था।[४५]

'महाप्रज्ञा पारमिता शास्त्र' के चीनी अनुवादक सेन्ग-यिन्ग ने भी अश्वघोष को महापरिनिर्वाण के ५०० वर्ष पश्चात बताया है।[४६]

बील महोदय, अश्वघोष को नागार्जुन के समकालीन मानते हुए, उनका समय प्रथम शताब्दी उपयुक्त मानते हैं।[४७]

इन वाह्य साक्ष्यों के आधार पर अश्वघोष का समय महापरिनिर्वाण के पश्चात ३०० से ५०० वर्षों के बीच पड़ता है।

विन्टर नित्ज, अश्वघोष को कालिदास का पूर्वगामी मानते हैं।[४८] अश्वघोष और कालिदास की भाषा-शैली के तुलनात्मक अध्ययन से अश्वघोष की शैली महाकवि कालिदास से शताब्दियों पूर्व की प्रतीत होती है। कालिदास का समय सामान्य रूप से गुप्त युग माना जाता है।[४९] इससे सिद्ध होता है कि अश्वघोष, कालिदास (३७५ ई०) से पहले हुए।

निश्चियत: आदि कवि बाल्मीकि, अश्वघोष के पूर्वगामी हैं। बुद्धचरित

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

की कथावस्तु इस तथ्य की पुष्टि करती है। मुख्य रूप से सिद्धार्थ का महाभिनिष्क्रमण, सारथी छन्दक का कपिलवस्तु को वापस लौटना और पिता तथा नगरवासियों का विलाप करना आदि बाल्मीकि रामायण में वर्णित राम वनगमन और पिता दशरथ तथा नगरवासियों के विलाप से मिलता-जुलता है।

विद्वान, 'अशोकावदान' का समय १५० ई० पू० से १०० ई० पू० के मध्य मानते हैं। जान्सटन महोदय के अनुसार अशोकावदान की यह समय सीमा अधिक से अधिक ५० ई० पूर्व तक मानी जा सकती है। अश्वघोष, अशोकावदान से पूर्ण परिचित थे।[५०] तभी तो कवि ने सम्राट अशोक द्वारा बुद्ध-अस्थियों का अस्सी हजार[५१] (कुछ ग्रन्थों के अनुसार चौरासी हजार)[५२] भागों में विभाजन तथा उन पर इतने ही स्तूपों का निर्माण करवाने का वर्णन किया है। सम्राट अशोक का समय २७३ ई० पू० से २३२ ई० पू० तक माना जाता है। इस प्रकार अश्वघोष २३२ ई० पू० और गुप्तकाल ४१४ ई० (चन्द्रगुप्त द्वितीय) के बीच हुये थे।

सर आर० सी० टेम्पल बर्ट के अनुसार अश्वघोष, कनिष्क (यू० ची०) के समकालीन थे। पूर्वी भारत में पाटलिपुत्र के राजा पर कनिष्क (यू० ची०) ने आक्रमण किया और विजय प्राप्त की। इस विजय में उसने महामानव बुद्ध का पिण्डपात्र, अश्वघोष कवि तथा एक कुक्कुट पक्षी को भी प्राप्त किया था।[५३] विन्टर नित्ज[५४], जी० के० नारीमैन[५५], ए० बी० कीथ[५६], बी०वरदाचारी[५७] भी अश्वघोष को सम्राट कनिष्क का समकालीन मानते हैं।

उपर्युक्त बाह्य साक्ष्यों के अतिरिक्त कुछ अन्तर्साक्ष्य भी यह सिद्ध करते हैं कि अश्वघोष कुषाण सम्राट कनिष्क के समकालीन थे। अश्वघोष ने अपने ग्रन्थों में यत्र तत्र कनिष्क के शासन प्रबन्ध की ओर संकेत किया है। बुद्धचरित तथा सौन्दरनन्द में सिद्धार्थ के पिता राजा शुद्धोदन के व्यक्तित्व तथा राज्य-व्यवस्था के सम्बन्ध मे कही गयी समस्त वाक्यावली यथा—उसने अनुचित कर नहीं लगाया, अपने ऐश्वर्य का अभिमान नहीं किया, शास्त्रों (वेद पुराणों) का अभ्यास करके भी उसने अपनी बुद्धि को कीर्ति के लिए नहीं, धर्म के लिए बढ़ाया[५८], सभी कुषाण सम्राट कनिष्क के व्यक्तित्व और व्यवस्था के विषय में कही गई उक्तियाँ प्रतीत होती हैं। प्रजापाल कनिष्क वेद पुराणों का ज्ञाता होते हुए भी अभिमान से दूर था। उसने विद्वता को धर्म प्रचार के कार्य में लगाया जैसा कि उसके सिक्कों पर अंकित देवताओं की मूर्तियों और लेखों से सिद्ध होता है। अश्वघोष ने राजा शुद्धोदन के

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

सुशासन तथा रक्षा प्रबन्ध का उल्लेख करके समकालीन सम्राट कनिष्क के शासन प्रबन्ध का दृश्य प्रस्तुत किया है। सम्पूर्ण कुषाण युग में कनिष्क का युग ही ऐसा था जब प्रजा पिता की गोद में पुत्र की भाँति निडर हो, शान्ति और सुख की नींद सोती थी।[१९] इस अन्तर्साक्ष्य से भी अश्वघोष और कुषाण सम्राट कनिष्क की समकालीनता सिद्ध होती है।

सम्राट कनिष्क का राज्यारोहण प्रायः ७८ ई० में माना जाता है अस्तु अश्वघोष का समय भी प्रथम शताब्दी मानना उपयुक्त होगा।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय एक के सन्दर्भ

१. ला, अश्वघोष पृ० ६
२. वही, पृ० ६-७
३. वही, पृ० ६-७; डॉ० हरिदत्त शास्त्री ने प्रथम और द्वितीय अश्वघोष में उलटफेर किया है।
महाकवि अश्वघोष पृ० ४ (साहित्य निकेतन, कानपुर १९६३)।
४. कीथ, हि० सं० लि० पृ० ५६
५. नारीमेन, लि० हि० सं० बु० पृ० ३७
६. इण्डि० ऐण्टी० जि० ३२ पृ० ३८२
७. नारीमैन, लि० हि० सं० बु० पृ० ३७
८. हि० इ० लि० जिल्द २ पृ० २५८
९. कीथ, हि० सं० लि० पृ० ५६
१०. वही, पृ० ५५
११. हि० इ० लि०, जि० २ पृ० २५७
१२. सा० सुषुमा सम्वत २००९ पृ० १३३ :
तत एवाश्वैरनुमोदितो धर्मस्य
घोषो यस्य सो ऽश्वघोषः इति।
१३. ला, अश्वघोष पृ० ३
१४. शास्त्री, म० अश्वघोष पृ० ३
१५. ला, अश्वघोष पृष्ठ ३
१६. हि० इ० लि० जि० २ पृष्ठ २७०
१७. उपाध्याय, सं० सा० इ० पृ० १८८
१८. जातक माला की भूमिका पृष्ठ ८ पा० टि० १
१९. ला, अश्वघोष पृ० ६
२०. वही पृ० ६
२१. आर्य सुवर्णाक्षीपुत्रस्य साकेतस्य भिक्षोराचार्य भदन्ताश्वघोषस्य महाकवेर्महावादिनः कृतिरियम्।
२२. सं० बौ० सा० भा० जी० पृ० ६१

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२३. हि० इ० लि० जि० २ पृ० २५७
२४. ला, अश्वघोष पृष्ठ ६
२५. हि० क्ला० सं० लि० पृ० १२५
२६. ला० अश्वघोष पु० ६
२७. वही, पृ० २
२८. वही, पृ० ३
२९. वही, ३
३०. शास्त्री, म० अश्वघोष पृ० ४५
३१. हि० इ० लि० जि० २ पृ० २५९-६०
३२. शास्त्री, म० अश्वघोष पृ० १५
३३. बुद्ध चरित २८।७४
३४. शास्त्री, म० अश्वघोष पृ० ३१
३५. कीथ, हि० सं० लि० पृ० ५७
३६. दृष्टव्य शास्त्री, म० अश्वघोष पृ० ३२
३७. हि० इ० लि० जि० २ पृ० २५९-६०
३८. शास्त्री, म० अश्वघोष पृ० ४२
३९. वही, पृ० ४३
४०. वही, पृ० ४४
४१. जान्सटन, बुद्धचरित की भूमिका पृ० २२
४२. ला, अश्वघोष पृ० ४
४३. वही, पृ० ४
४४. सा० सुषुमा सम्वत् २००९ पृ० १३२
४५. जान्सटन, बुद्ध चरित की भूमिका पृ० १३
४६. ला, अश्वघोष पृ० ४
४७. वही, पृ० ५
४८. हि० इ० लि० जि० २ पृ० २६०
४९. कीथ, हि० सं० लि० पृ० ८०; मुकर्जी, गुप्ता इम्पायर पृ० ४४
५०. जान्सटन, बुद्ध चरित की भूमिका पृ० १७
५१. बु० च० २८।६२-६७
५२. दिव्या० २७२।१-२
५३. इण्डि० ऐण्टी० जि० ३२ पृ० ३८२ (१९०३);
हि० क्ला० सं० लि० पृ० १२६

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

५४. हि० इ० लि० जि० २ पृ० २५७ पा० टि० १

५५. लि० हि० सं० बु० पृ० ३७

५६. कीथ, हि० सं० लि० पृ० ५५

५७. हि० सं० लि० पृ० ७३

५८. सौ० २।२० : नासृक्षद्बलिमप्राप्तं नारुक्षन्मानमैश्वरं ।
आगमैर्बुद्धिमाधिक्षद्धर्माय न तु कीर्तये ।।

५९. वही, २।७ : यस्य सुव्यवहाराच्च रक्षणाच्च सुखं प्रजाः ।
शिश्यिरे विगतोद्वेगाः पितुरंकगता इव ।।

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय २

अश्वघोष का भौगोलिक वर्णन

भूगोल का मानव जीवन से अविछिन्न सम्बन्ध है। मनुष्य की आवश्यकताओं के साथ-साथ उसका आस-पास के ग्रामों, नगरों जनपदों और देशों तथा विदेशों से सम्बन्ध भी बढ़ता गया। बौद्ध युग में भारत का यह सम्बन्ध द्वीप-द्वीपान्तर तक स्थापित हो गया था और बौद्ध धर्म के सन्देश यत्र-तत्र फैले। इसका उल्लेख हमें अश्वघोष की कृतियों में मिलता है।

महीतल[१]

अश्वघोष की कृतियों में पृथ्वी को समुद्रवसना[२] (तथा सागराम्बरा[३]) कहा गया है। पृथ्वी धुरी पर स्थिर है।[४] गुणों के अनुरूप ही उसके वसुन्धरा[५], वसुधा[६], पृथ्वी[७], क्षिति[८], भू[९], उर्वी[१०] और मही[११] नामों का उल्लेख है। पृथ्वी-तल के अतिरिक्त उस युग में लोगों को पाताल[१२] का भी ज्ञान था।

विश्वम्

अश्वघोष ने भी पृथ्वी को सप्त[१३] द्वीपा कहा है। परन्तु उन्होंने बौद्ध परम्परा के अनुसार पृथ्वी को चार द्वीपों वाली भी बतलाया है।[१४] कहीं-कहीं पुराणों में भी पृथ्वी को चतुर्द्वीपा ही माना गया है जैसा कि अश्वघोष मानते हैं।

पृथ्वी के ये चार द्वीप निम्नलिखित हैं :—

(१) जम्बू द्वीप (२) अपर गोदानीय (३) पूर्व विदेह तथा (४) उत्तर कुरू।

डॉ० बी० एम० बरुआ के अनुसार पूर्व विदेह एशिया का पूर्वांचल ही है जिसे सुमेरू पर्वत के पूर्व में स्थित कहा गया है। जम्बूद्वीप इसके दक्षिण में और अपरगोदान (पाठान्तर अपर गोयान) इसके पश्चिम में तथा उत्तर कुरू सुमेरू के उत्तर में स्थित बताया गया है। अपर गोदान की पहचान खोतान से भी की गई है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अश्वघोष के साहित्य में केवल उत्तर कुरू[१५] का ही उल्लेख प्राप्त होता है।

भौमिक विस्तार

बुद्ध ने अपने शिष्यों को उपदेश दिया था कि वे उपदेश देने के लिए सम्पूर्ण पृथ्वी पर अलग-अलग विचरण[१६] करें। यह सन्देश सम्पूर्ण भारत में ही नहीं अपितु मध्य एशिया और चीन से लेकर सिंहल, वर्मा और कम्बोडिया तक पहुँचा।

उत्तर में कुरू[१७] गान्धार[१८] और किन्नर[१९] देश से लेकर दक्षिण में रत्न द्वीप[२०] तक यह विस्तृत था। पश्चिम में भृगु कच्छ[२१] और सूर्पारक[२२] से लेकर पूर्व में अंग नगर[२३], वैशाली[२४], विदेह नगर[२५] और राजगृह[२६] तक फैला हुआ था।

इस प्रकार अश्वघोष के भौगोलिक क्षेत्र से भारत के चतुस्संस्थान स्वरूप और उसके बाह्य क्षेत्र का भी परिचय मिलता है।

बृहत्तर भारत

अश्वघोष के युग तक भारत की संस्कृति द्वीप-द्वीपान्तर तक फैल चुकी थी। सम्राट अशोक के पुत्र महेंद्र और पुत्री संघमित्रा द्वारा महामानव के सदुपदेश सिंहल द्वीप पहुँच चुके थे। उस युग से सिंहल के साथ बराबर गमनागमन की परम्परा चलती रही। राजा मिलिन्द (मिनैण्डर) के समय यह 'धम्म श्री' दो हजार छोटे-छोटे द्वीपों तक पहुँच चुकी थी।[२७]

बृहत्तर भारत के द्वीपों में अश्वघोष ने रत्न द्वीप का उल्लेख किया है। यह द्वीप रत्नों के लिए प्रसिद्ध[२८] था। डे महोदय इसे सीलोन मानते हैं।

जनपद

जिन जनपदों, नदियों, सरोवरों तथा वन और उपवनों का उल्लेख अश्वघोष के ग्रन्थों में प्राप्त होता है, वे निम्नलिखित हैं—

अटवी—इस जनपद में तथागत बुद्ध ने आटविक यक्ष तथा कुमार हस्तक को दीक्षा दी थी।[२९] आटविक राज्यों का उल्लेख समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति[३०] में भी मिलता है। यह विन्ध्याचल का वन्य प्रदेश ही था।

अन्धक—प्राचीन भारत का प्रसिद्ध जनपद था जो मथुरा के आस-पास फैला हुआ था। आगे चलकर अन्धक लोग पश्चिमी भारत को चले गये थे। ये भोजों से सम्बन्धित थे। बुद्ध चरित के अनुसार इनका विनाश मद्यपान के कारण हुआ।[३१]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

एलि[३२]—पश्चिमोत्तर भारत का जनपद था। डे महोदय इसकी स्थिति पेशावर के पूर्वोत्तर में जिला मर्दन में मानते हैं।[३३] दिव्यावदान के अनुसार 'एलापत्र' गान्धार का शासक था (एलापत्रश्च गान्धारे[३४]) जिससे एलि जनपद गान्धार का ही एक भाग प्रतीत होता है। इसका सम्बन्ध 'अलिन' नामक वैदिक जाति से ज्ञात होता है।

कालाम[३५]—प्राचीन भारत का प्रसिद्ध गण राज्य था जहाँ मुनि 'अराड'[३६] उत्पन्न हुए थे। 'केसमुत्तिसुत्त' के अनुसार यह गणराज्य कोशल में स्थित था जिसकी राजधानी केसपुत्त थी।[३७]

काशी—पहले यह एक शक्तिशाली जनपद था।[३८] इसकी राजधानी काशीनगर[३९] अथवा वाराणसी[४०] थी जहाँ भीमरथ नामक शासक का राज्य था।[४१] बुद्धत्व प्राप्त कर बुद्ध काशी गये थे।[४२] वर्तमान वाराणसी के आस-पास यह जनपद फैला हुआ था।

किन्नर या 'किम्पुरुष'[४३]—किन्नर लोगों का जनपद हिमालय की तलहटी में (हिमवन्नितम्बे[४४]) स्थित था। इस जनपद की राजधानी किन्नर नगर[४५], थी जिसकी पहचान हिमांचल प्रदेश के किन्नोर से की गई है।

किरात—यह प्रसिद्ध जाति थी। इनका रंग सुनहला और मयूरपंख के समान उज्ज्वल होता था[४५]। ये लोग हिमालय की गुफाओं में नैपाल से लेकर धुर पूर्व तक विस्तृत प्रदेश में रहते थे।[४६]

कुरु—प्रसिद्ध जनपद था जहाँ कुरुवंशी लोग रहते थे।[४७] दिल्ली और मेरठ के आस-पास के जिले इस जनपद में सम्मिलित थे। इसकी राजधानी इन्द्रप्रस्थ थी। परन्तु मेरठ जिले में हस्तिनापुर के पुरातात्विक अन्वेषणों से ज्ञात होता है कि यही कुरु जनपद की राजधानी थी।

कोशल—यह जनपद उत्तरी तथा दक्षिणी दो भागों में विभक्त था। उत्तरी भाग की राजधानी श्रावस्ती[४८] थी। इस जनपद में अवध का भाग सम्मिलित था।

गान्धार[४९]—पश्मिोत्तर भारत का जनपद था। इसके दो भाग थे। एक भाग का शासक एलापत्र था और दूसरे भाग का शासक पुष्कर या पुष्करसारिन् था जिसने बुद्ध से दीक्षा ग्रहण कर राजलक्ष्मी का परित्याग कर दिया था।[५०] इस जनपद में पश्चिमी पंजाब के पेशावर और रावलपिण्डी के जिले सम्मिलित थे।

चेदि—प्राचीन प्रसिद्ध जनपद था। इस जनपद के प्राचीन राजा वसु[५१] और शिशुपाल का उल्लेख अश्वघोष ने किया है। बुद्धचरित से ज्ञात होता

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

है कि चेदियों का विनाश कृष्ण से युद्ध करने के कारण हुआ।[52] इस जनपद में बुन्देलखण्ड तथा उसके पड़ोस के कुछ भाग सम्मिलित थे। इसकी राजधानी शुक्तिमती थी।

दण्डक[53]—यह जनपद दण्डकारण्य में स्थित था। बुद्ध चरित के अनुसार दण्डक लोग विषय-वासनाओं के कारण नष्ट हुए थे[54]। यह जनपद बुन्देलखण्ड से लेकर गोदावरी तक फैला हुआ था[55]।

पक—वैदिक काल की प्रसिद्ध जाति (पक्थ) थी। इनका जनपद एलि जनपद के समीप ही स्थित था। दोनों ही पारस्परिक शत्रुता के कारण नष्ट हुए थे[56]। पक जनपद सम्भवतः अफगानिस्तान में स्थित था।

पिसल—'पिसल' लोग बुद्ध भक्त थे। बुद्ध-धातु-विभाजन के समय पिसल लोग भी उपस्थित थे जिन्होंने चिता की शेष राख लेकर उस पर स्तूप निर्माण करवाया था[57]। यह प्रथम निर्मित दश स्तूपों में से एक था[58]।

भार्गस[59] **(भग्ग)**—भर्ग पाली साहित्य में वर्णित भग्ग लोग ही थे जिनका प्रसिद्ध गण मिर्जापुर के आस-पास फैला हुआ था। इस जनपद की राजधानी सुसुमारगिरि (चुनार) थी।

मगध—बुद्ध के समय का प्रसिद्ध जनपद था[60]। यहाँ हर्यंक कुलोत्पन्न (जातस्य हर्यंक कुले विशाले[61]) श्रेण्य बिम्बिसार[62] का शासन था। बिम्बिसार के पश्चात उसका पुत्र अजातशत्रु मगध का शासक हुआ था। इसकी राजधानी पहले गिरिव्रज[63] थी बाद में उसी के समीप राजगृह[64] नामक नवीन राजधानी की स्थापना की गयी थी। यह जनपद दक्षिणी बिहार के पटना, गया और शाहाबाद के जिलों में फैला हुआ था।

मध्य देश—हिमालय और पारिपात्र पर्वतों के मध्य यह देश स्थित था[65]। बुद्ध-जीवन का अधिकांश समय इस भू-भाग में उपदेश करते बीता था।

मल्ल[66]—यह जनपद मल्लों की दो शाखाओं—पावा के मल्ल और कुशीनारा के मल्ल, का संयुक्त जनपद था। पावापुर[67] और कुशीनगर[68] इन दोनों भागों की राजधानियाँ थीं। यह जनपद आधुनिक गोरखपुर और देवरिया जिलों में फैला हुआ था।

मेखल (मेकल)—यह जनपद अमरकण्टक और उसके आसपास के भाग में फैला हुआ था[69] मेकल और दण्डक (मेखलदण्डकाश्च[70]) लोगों के साथ-साथ उल्लेख से उनका सामीप्य सिद्ध है।

लिच्छवि[71]—गणराज्य था, जिसकी राजधानी वैशाली[72] थी। यह मुजफ्फरपुर जिले में इस समय भी वैशाली नाम से ही प्रसिद्ध है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वामन[७३]—किरातों के साथ ही इनका उल्लेख होने से किरात जनपद के समीप ही वामन जनपद की स्थिति प्रतीत होती है।

विदेह—गणराज्य था, जिसकी राजधानी विदेह नगर[७४] थी। जनक को यहाँ का राजा बताया गया है[७५]।

वृज्जिय[७६]—यह संघराज्य था। इसकी राजधानी वैशाली थी। यह जनपद गंगा के उत्तर में नैपाल की तराई तक विस्तृत था। पश्चिम में गण्डक नदी और पूर्व में कोसी और महानन्दा नदियाँ इस जनपद की सीमाएँ बनाती थीं[७७]।

वृष्णि[७८]—पश्चिमी भारत का प्रसिद्ध जनपद था। यह जनपद अन्धक जनपद के समीप ही स्थित था[७९]।

शाक्य[८०]—उत्तरी भारत का प्रसिद्ध गणराज्य था, जहाँ शुद्धोदन[८१] का शासन था। तथागत बुद्ध ने इसी गण राज्य में जन्म लिया था। शाक्य गण की राजधानी कपिलवस्तु (कपिलाह्वयपुर[८२]) थी जिसकी पहचान तिलौराकोट से की जाती है।

शाल्व[८३]—राजा द्रुम[८४] इस जनपद का शासक था। डे महोदय के अनुसार यह जनपद जोधपुर, जयपुर और अलवर के भागों में फैला हुआ था[८५]।

सुह्म—इसी जनपद में तथागत बुद्ध ने अंगुलिमाल ब्राह्मण को दीक्षा दी थी[८६]। यह जनपद समुद्र तट के निकट दक्षिणी बंगाल में स्थित था।

नगर और ग्राम

अश्वघोष के ग्रन्थों में निम्नांकित अनेक ग्रामों और नगरों का भी उल्लेख मिलता है, जहाँ बुद्ध ने उपदेश दिये थे।

अलकावती नगरी—यहाँ पर बुद्ध ने भद्र नामक यक्ष को दीक्षा दी थी[८७]। यह काल्पनिक नगरी है।

आपण नगर—इस नगर में कैन्य व शैल ब्राह्मणों ने बौद्ध-दीक्षा ग्रहण की थी[८८]।

उरुवेला—गया के समीप निरंजना नदी के किनारे प्रसिद्ध स्थान था। जहाँ सिद्धार्थ (बुद्ध का बचपन का नाम) ने बुद्धत्व प्राप्त करने के बाद निवास किया था। उरुवेला में महाकाश्यप का आश्रम था[८९]। यह बोध गया के समीप उरेल ग्राम है[९०]।

अंग नगर—अंग जनपद की राजधानी थी। जहाँ पर पूर्ण भद्र यक्ष तथा श्रेष्ठ, दण्ड, श्वेत, पिंगल और चण्ड नागवंशी लोगों को बुद्ध ने दीक्षा दी थी[९१]।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

इसे चम्पा भी कहा गया है, जो चम्पा नदी के तट पर स्थित है। यहाँ पर बिम्बिसार ने अजात शत्रु को वायसराय नियुक्त किया था[९२]।

ककन्द नगर—यह नगर ककन्द ऋषि के आश्रम पर बसाया गया था[९३]। इसकी स्थिति अज्ञात है।

कपिलवस्तु[९४]—शाक्यगण की राजधानी थी। इस नगर को कपिल मुनि गौतम[९५] के इक्ष्वाकुवंशी राजकुमार शिष्यों ने[९६] उनके देहावसान के पश्चात् उन्हीं के आश्रम स्थान पर बनवाया था[९७]। नगर के चारों ओर नदी की भाँति चौड़ी खाई (सरिद्विस्तीर्णपरिखं[९८]) तथा पर्वत की भाँति मिट्टी की सुरक्षा दीवाल (शैलकल्पमहावप्रं) थी[९९]। गमनागमन के लिए नगर में चौड़ी सड़कें (महापथं[१००]) थीं। प्रत्येक वस्तु की दृष्टि से आन्तरिक बाजार भली भाँति बँटा हुआ था। (सुविभक्तान्तरापण[१०१])। इसी नगर के राजा शुद्धोदन के यहाँ बुद्ध का जन्म हुआ था[१०२]।

कपिलवस्तु नगर को 'कपिलाह्वयपुरं'[१०३] भी कहा गया है जो दूसरे गिरिव्रज के समान (गिरिव्रजमिवापरं)[१०४] था। यह वर्तमान तिलौराकोट है जो निग्लीव से तीन मील दक्षिण पश्चिम और टौलीवा से दो मील उत्तर में स्थित है।

कल्माशदम्य—इसी नगर में विद्वान भारद्वाज को बुद्ध ने दीक्षा दी थी[१०५]।

कुटी गाँव—यह ग्राम गंगा के किनारे स्थित था। भगवान बुद्ध पाटलिपुत्र से गंगा पार कर इस ग्राम को पहुँचे थे[१०६]। संयुक्त निकाय के अनुसार यह वज्जिय जनपद में स्थित था[१०७]।

कुशी नगर[१०८]—मल्ल जनपद की एक राजधानी थी। यह नगर प्राचीर से सुरक्षित था[१०९]। तथागत बुद्ध का महापरिनिर्वाण यहीं हुआ था और यहीं प्रथम बार स्तूपों के निर्माण हेतु महामानव के अवशेषों का विभाजन भी हुआ था[११०]। इस नगर को कुश नगर[१११] भी कहा गया है। यह देवरिया जिले में स्थित कसिया ग्राम है।

कौशाम्बी (कुशाम्ब नगर)[११२]—राजा कुशाम्ब द्वारा स्थापित कुशाम्ब नगर या कौशाम्बी वत्स राज्य की राजधानी थी। कौशाम्बी वर्तमान कोसम ग्राम है, जो यमुना नदी के बायें किनारे पर इलाहाबाद से पश्चिम, ३० मील दूर स्थित है[११३]।

गया[११४]—राजर्षि गय की निवास भूमि थी, जिनके नाम से नगर का

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

यह नाम पड़ा था (गयस्य राजर्षेनगरी संज्ञमाश्रमम्)[११५]। यहीं पर काश्यप ऋषियों ने तप किया था[११६]। बुद्ध ने गया में टंकित ऋषियों तथा खर और शूचीलोम नामक दो यक्षों को दीक्षा दी थी[११७]। प्राचीन गया नगर के अवशेषों पर वर्तमान साहब गंज स्थित है।

नादी गाँव—कुटी ग्राम से तथागत इस ग्राम में पहुँचे थे[११८]। इसकी पहचान नहीं हो सकी है।

पाटलिपुत्र—गंगा और सोन नदियों के संगम पर इस नगर की स्थापना सम्राट अजातशत्रु ने लिच्छवियों को शान्त रखने के लिये अपने मंत्री वर्षकार से करवाई थी[११९]। भगवान बुद्ध ने इस नगर को विश्व में श्रेष्ठ (लोके मुख्यपुरं) होने की घोषणा की थी[१२०]। जिस द्वार से बुद्ध निकले थे उसका नाम "गौतम द्वार"[१२१] तथा जहाँ से गंगा नदी पार की थी उसे "गौतम तीर्थ"[१२२] कहा गया था। यह बिहार प्रदेश का वर्तमान पटना तथा आसपास का कुम्राहार है।

पापापुर (पावा)—बुद्ध भक्त मल्लों की यह दूसरी राजधानी थी, जहाँ उन्होंने तथागत का स्वागत किया था[१२३]। 'चुन्द' का यहीं निवास था[१२४]। पापापुर गोरखपुर जिले का पडरौना ही है।

भद्र (नगर)—इस नगर में बुद्ध ने भरद्वाज के पुत्र मेण्ढक को दीक्षा दी थी[१२५]। घग्घर के तट पर बीकानेर के उत्तर पूर्व में स्थित भद्र नामक स्थान ही सम्भवतः प्राचीन भद्र नगर है।

भोगनगर[१२६]—वैशाली और पापापुर के मध्य यह नगर स्थित था[१२७]।

मकन्दपुर—मकन्द ऋषि के आश्रम-स्थान पर इस नगर का निर्माण किया गया था[१२८]।

मथुरा नगर—शूरसेन जनपद की राजधानी थी। बुद्ध ने इस नगर में लोगों को दीक्षा दी थी[१२९]। यह वर्तमान मथुरा है जहाँ पर पुरातात्विक अन्वेषणों से प्राचीन वस्तुएँ मिली हैं।

महीवती नगरी—यहाँ पर बुद्ध ने कपिल को दीक्षित किया था[१३०]। यह प्राचीन माहिष्मती नगरी है जो दक्षिणी अवन्ति जनपद की राजधानी थी[१३१] और वर्तमान समय में नर्मदा नदी के दाहिने किनारे पर स्थित मान्धाता ही है।

मुकुट चैत्य—कुशीनारा के समीप था जहाँ निर्वाण प्राप्त बुद्ध के नश्वर शरीर की चिता बनी थी[१३२]। यह स्थान इस समय कसिया से देवरिया जाने

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वाली सड़क के किनारे कसिया से लगभग डेढ़ मील दूर हैं जहाँ विशाल स्तूप के ऊँचे अवशेष आज भी विद्यमान हैं।

राजगृह—बुद्ध के समय मगध जनपद की राजधानी था[१३३]। यह नगर पाँच पहाड़ियों से परिवृत (पंचाचलाकं नगरं[१३४]) था। राजगृह[१३५] में ही देवदत्त ने महामानव को नष्ट करने के लिए नाला गिरि हाथी छोड़ा था परन्तु बुद्ध ने मैत्री बल से उसे जीत लिया था[१३६]। इस नगर में तथागत ने जीवक, ज्योतिष्क शूर, श्रोण और अंगद को दीक्षित किया था[१३७]। यह विहार प्रदेश का राजगिरि है।

रामपुर—प्रथम निर्मित आठ धातु स्तूपों में से एक रामपुर में भी था। बुद्ध भक्त नाग लोग इसके रक्षक थे[१३८]। दिव्यावदान में इसे राम ग्राम कहा गया है[१३९]। महाराजा अशोक 'धातु' प्राप्त करने हेतु राम ग्राम गये थे[१४०], परन्तु उसे नागों से भली भाँति सुरक्षित समझ कर उस स्तूप से धातु नहीं निकाले थे[१४१]। ला महोदय के अनुसार यह बस्ती जिले का रामपुर देवरिया है[१४२]।

वरण—इस नगर में वारण यक्ष को तथागत ने दीक्षा दी थी[१४३]। डॉ० डी० सी० सरकार वरण को गान्धार के पास स्थित मानते हैं[१४४]।

वाराणसी—बुद्धत्व प्राप्त करके तथागत बुद्ध सद्धर्म की दुन्दुभी बजाने तथा पीड़ित जनों के हित के लिए वाराणसी नगर पहुँचे थे[१४५]। यहाँ कात्यायन ब्राह्मण को उन्होंने दीक्षा दी थी[१४६]। बुद्ध चरित में इसे भागीरथी और वाराणसी के मध्य स्थित बताया गया है[१४७]। इसे काशी भी कहा गया है[१४८]। वरुणा और असी नदियों के संगम पर स्थित यह वर्तमान वाराणसी ही है।

विदेह नगर—विदेह गण की राजधानी थी। ब्रह्मायु नामक व्यक्ति ने यहाँ दीक्षा ग्रहण की थी[१४९]। इसे मिथिला भी कहा गया है जो वर्तमान तिरहुत है[१५०]।

वेणु कण्टक—यहाँ पर नन्द की साध्वी माता ने बुद्ध-दीक्षा ग्रहण की थी[१५१]। इसकी पहचान नहीं हो सकी है।

वेणुमती ग्राम—वैशाली में आम्रपाली का आतिथ्य स्वीकार कर बुद्ध भगवान वर्षावास के लिये वेणुमती[१५२] ग्राम गये थे। इससे वैशाली के समीप इसकी स्थिति स्पष्ट है। जनरल कनिंघम ने वेणु ग्राम की पहचान कोसम से उत्तर पूर्व में स्थित बेन पुरवा से की है[१५३]।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वैरंजा—बुद्ध ने इस नगर में महासत्व को दीक्षा दी थी[१५४]। यह मथुरा के समीप स्थित था।

वैशाली[१५५]—लिच्छवियों की राजधानी थी। इसी रमणीक नगरी में (रम्यायामत्र वैशाल्यां[१५६]) राक्षस, मर्कट, सिंह, उत्तर तथा सत्यक लिच्छवियों को बुद्ध ने उपदेश दिया था[१५७]।

शूर्पारक नगर—पश्चिमी भारत का प्रसिद्ध व्यापारिक नगर तथा बन्दरगाह था। इस नगर में श्रेष्ठ स्तवकर्णी ने बुद्ध-दीक्षा लेकर एक गगनचुम्बी विहार बनवाया था[१५८]। यहीं पर सम्राट अशोक के शिला अभिलेखों की एक प्रति प्राप्त हुई है। यह महाराष्ट्र के थाना जिले में स्थित वर्तमान सोपारा है।

श्रावस्ती—यह कोशल की राजधानी थी[१५९]। बुद्ध चरित के अनुसार यहाँ पर हर्यश्व वंश (सूर्यवंश) का शासन था[१६०]। यहाँ के शासक प्रसेनजित ने बुद्ध-उपदेश ग्रहण किया था[१६१]। इस नगरी में बुद्ध ने सभिय, निर्ग्रंथ नप्त्री पुत्रों तथा अन्य तीर्थिकों (ब्राह्मण पण्डितों) को ज्ञान दिया था[१६२]। श्रावस्ती, गोंडा जिले में अचिरवती के किनारे स्थित सहेत महेत है[१६३]।

संकाश्य—त्रिविष्टप स्वर्ग में अपनी माता को धर्मोपदेश दे कर बुद्ध संकाश्य में ही उतरे थे[१६४]। यह संकाश्य फर्रुखाबाद जिले का प्रसिद्ध बौद्ध केन्द्र संकिशा ही है।

स्थाणुमती गाँव—संभवतः राजगृह के समीप था। इस ग्राम में कूटदत्त ब्राह्मण को तथागत ने दीक्षा दी थी[१६५]।

स्थूल कोष्ठक नगर—इस नगर में विनायक ने धनी राष्ट्रपाल को दीक्षित किया था[१६६]। दिव्यावदान का स्थूण ग्राम सम्भवतः स्थूल कोष्ठक नगर ही है जिसे मध्य देश की पश्चिमी सीमा बतलाया गया है[१६७]।

पर्वत

मानव-जीवन में पर्वतों का विशेष महत्व है। एक ओर वे वृष्टि में सहायक होते हैं दूसरे वे भोज्य पदार्थों के लिये सुरक्षित कोषागार भी हैं। औषधियों के लिये भी पर्वत मुख्य साधन हैं।

अस्ताचल[१६८] **और उदयाचल**[१६९]—दोनों ही पर्वत काल्पनिक हैं, जिनका उल्लेख धार्मिक ग्रन्थों में हुआ है।

कांचन शैल शृंग[१७०] **(कांचन पर्वत)**[१७१]—पहचान नहीं हो सकी है।

कैलास पर्वत[१७२]—उत्तर का प्रसिद्ध पर्वत था। इसकी बर्फीली चोटियाँ

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

उज्ज्वलता के लिये प्रसिद्ध थीं[१७३]। इसकी चोटियां (सूर्य की किरणे पड़ने से) अनेक रंगी दिखाई पड़ती थीं[१७४]। यह मानसरोवर से २५ मील दूर उत्तर में स्थित है[१७५]।

गयाशीर्ष (गयशीर्ष)—गया की प्रसिद्ध पहाड़ी थी। जहाँ पर तीनों काश्यप भाइयों—औरविल्व काश्यप, नदी काश्यप और गय काश्यप को बुद्ध ने निर्वाण-धर्म का उपदेश दिया था[१७६]। जनरल कनिंघम इसकी पहचान गया की ब्रह्म योनि पहाड़ी से करते हैं। डॉ० राजेन्द्र लाल मित्रा ने अपने 'बुद्ध गया' ग्रन्थ में ब्रह्मयोनि पहाड़ी की निचली चोटी को ही गयशीर्ष बतलाया है[१७७]।

गृद्धकूट पर्वत—राजगृह का प्रसिद्ध पर्वत था, जहाँ बुद्ध ने अनेक बार निवास किया था। तथागत को क्षति पहुँचाने के लिये इसी पर्वत से देवदत्त ने शिला लुढ़काई थी, परन्तु वह हानि पहुँचाने में असफल रहा था[१७८]। फाहियान ने इसे 'वल्चर पीक' और ह्वेनसांग ने इसे 'इन्द्रशिला गुहा' कहा है। यह नव राजगृह के दक्षिण पूर्व में ढाई मील दूर है[१७९]।

पाण्डव पर्वत—यह भी राजगृह का पर्वत था। बुद्ध का आगमन सुनकर श्रेण्य बिम्बिसार सम्मानपूर्वक उनसे मिलने पाण्डव पर्वत पर ही गया था। इसे उत्तम शैल कहा गया है[१८०] जहाँ बुद्ध ने पर्यंक आसन के द्वारा साधना प्रारम्भ की थी[१८१]। जनरल कनिंघम के अनुसार पाली साहित्य का पाण्डव पर्वत 'रत्नगिरि'[१८२] है।

पारिपात्र—यह पर्वत मध्य देश की दक्षिणी सीमा था[१८३]। डॉ० भंडारकर के अनुसार यह विन्ध्याचल का वह भाग है जिससे चम्बल और वेतवा नदियाँ मिलती हैं। डे महोदय पश्चिमी घाट का अधिकांश भाग परिपात्र में सम्मिलित मानते हैं[१८४]। परन्तु पारिपात्र विन्ध्य पर्वत का पश्चिमी भाग ही है।

पाषाण पर्वत—इसी पर्वत पर शान्ति-परायण 'पारायण' ब्राह्मण को तथागत बुद्ध ने दीक्षा दी थी[१८५]। महोदय डे इसे दक्षिणी अफगानिस्तान में पिशिन घाटी की पश्चिमी सीमा पर स्थित अम्रन पर्वत मानते हैं[१८६] परन्तु बुद्ध चरित के सन्दर्भ के अनुसार पाषाण पर्वत की स्थिति राजगृह के पास मानना ही उचित है।

मन्दर पर्वत[१८७] **(मन्दराचल)**[१८८]—इस पर्वत पर किन्नरियों का वास बतलाया गया है। महोदय डे इसे भागलपुर की बांका तहसील में स्थित

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

मानते हैं, जो बान्सी के दो या तीन मील उत्तर और भागलपुर से तीस मील दक्षिण में[१८९] है। परन्तु यह स्थिति निश्चित नहीं है।

मेरु (सुमेरु)—यह पर्वत स्थिरता के लिए प्रसिद्ध था[१९०]। इसे महागिरि मेरु कहा गया है[१९१]। यह पर्वत इतना ऊँचा था कि इसे पवन भी पार न कर पाता था[१९२]। इसकी लम्बाई ८०,००० योजन थी[१९३]। इस पर्वत पर जितने भी पशु-पक्षी पहुँच जाते थे वे अपने रंग को त्याग कर सुनहलें रंग के हो जाते थे[१९४]। मेरु पर्वत[१९५] को सुमेरु पर्वत[१९६] भी कहा गया है। इसकी पहचान गढ़वाल के रुद्र हिमालय से की गई है जहाँ से गंगा नदी निकलती है[१९७]। ला महोदय बदरिका आश्रम के समीप इसे स्थित मानते हैं[१९८]।

मैनाक पर्वत—इसे अचलेन्द्र कहा गया है (मैनाक इवाचलेन्द्रः[१९९])। ला महोदय शिवालिक पहाड़ियों को मैनाक मानते हैं[२००] परन्तु यह पहचान अनिश्चित है।

विदेह पर्वत—इस पर्वत पर तथागत ने गर्दभ पुत्र (पंचशिख), असुरों और देवों को दीक्षित किया था[२०१]।

विन्ध्य[२०२] **(पर्वत)**—इसी पर्वत के कोष्ठ में अराड मुनि का आश्रम था[२०३]। विन्ध्य पर्वत को अवन्ति जनपद में स्थित बतलाया गया है[२०४]।

विपुल पर्वन—राज्यगृह का प्रसिद्ध पर्वत था। 'मिलिन्द पंहों' में इसे वहाँ की सभी पहाड़ियों में श्रेष्ठ कहा गया है[२०५]। इसी पर्वत पर हैमवत और सताग्र यक्षों को बुद्ध ने दीक्षा दी थी[२०६]।

हिमवन्त—यह पर्वत मध्य देश की उत्तरी सीमा पर था[२०७]। मदयुक्त हाथियों (मदोत्कटाः) के लिए प्रसिद्ध था जिन्हें हिमालयी हाथी (हैमवताः गजाः[२०८]) कहा जाता था। इसी पर्वत के पार्श्व में कपिल मुनि का आश्रम था[२०९]। संभवतः यह आधुनिक नैपाल की तराई में स्थित कपिलवस्तु ही था जो इस समय नौगढ़ से चौदह-पन्द्रह मील दूर नैपाल के तौलिहवां गाँव के पास स्थित है। इस पर्वत पर सुगन्धित देवदार[२१०] तथा कदम्बों[२११] के वृक्ष थे। साथ ही यह नदियों, झरनों और सरोवरों (नदीसरः प्रस्रवणौघ-वन्तम्) से सुशोभित, स्वर्ण धातु से युक्त (कांचनधातुमन्तम्) और देवर्षियों से अधिष्ठित (देवर्षिमन्तम्) था[२१२]। यहाँ पर सिद्ध और चारणों के हविधूम्र का बादल छाया रहता था[२१३]। शान्तेन्द्रिय मुनि यहाँ निवास करते थे[२१४]।

हिमालय पर्वत की गुफाओं में किरात[२१५] और किन्नर[२१६] जातियाँ निवास करती थीं। यहाँ के जंगलों में मोर[२१७] बन्दर[२१८] (कपि) और बाघ

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(शार्दूल)[२१९] विचरण करते थे। इस पर्वत पर उत्तम औषधियाँ भी उत्पन्न होती थीं[२२०]।

हिमवान[२२१] और अद्रिराज[२२२] इसी के भिन्न-भिन्न नाम हैं।

नदियाँ और जलाशय

मानव जीवन का नदियों से विशेष सम्बन्ध है। मानवीय आवश्यकताओं की पूरक साधन होने के कारण ही प्राचीन सभ्यताएँ नदियों की घाटियों में ही फली फूलीं। कृषि प्रधान देश भारत में नदियों का विशेष महत्व है। नदियाँ, जलाशय और कुएँ आज भी सिंचाई के प्रमुख साधन हैं। प्राचीन काल में नदियाँ ही मुख्य रूप से आवागमन और व्यापार के लिए प्रधान मार्ग थीं। यही कारण है कि धर्म प्रधान होने पर भी अश्वघोष की कृतियों में निम्नलिखित नदियों और जलाशयों का उल्लेख मिलता है।

असी[२२३]—यह नदी काशी नगरी के समीप थी[२२४]। आज भी इसी नाम से यह वाराणसी के समीप प्रवाहित है।

इरावती नदी—यह नदी पापापुर (पावा) और कुशी नगर के मध्य बहती थी[२२५]। चीनी अनुवाद में इसे 'कुकु' शब्द से सम्बोधित किया गया है, जो पालि के 'ककुत्था' के लिये प्रयुक्त हुआ है। अचिरावती और अजिरावती भी इसी के नाम हैं[२२६]। यह उत्तर प्रदेश की राप्ती नदी है।

गंगा (जाह्नवी)[२२७]—चंचल तरंगों वाली (प्रचलतरंगा) यह नदी कपिलवस्तु और राजगृह के मध्य बहती थी[२२८]। इसके दोनों किनारे शाल वृक्षों से आच्छादित थे[२२९]।

निरंजना—यह नदी गया के पास प्रवाहित थी जिसके तट पर (नैरंजनातीरे) अनुकूल स्थान देखकर तथागत ने निवास किया था[२३०]। यहीं उन्होंने अडिग साधना की थी और यहीं उन्होंने सुजाता का पायस भी ग्रहण किया था[२३१]। इसी नदी के तट पर तथागत ने कहा था कि—"मैं तब तक निर्वाण प्राप्त नहीं करूँगा जब तक पीड़ित प्राणियों का उद्धार नहीं कर लेता हूँ[२३२]।" निरंजना नदी फलगू नदी के ऊपरी भाग का ही नाम है[२३३]।

मर्कट ह्रद—यह जलाशय वैशाली के समीप था जहाँ महामानव बुद्ध ने वर्षावास किया था[२३४]।

मन्दाकिनी[२३५]—जनरल कनिंघम के अनुसार यह नदी बुन्देलखण्ड की पैसुनी (पयस्विनी) की सहायिका मन्दाकिनी है जो चित्रकूट के समीप प्रवाहित है। परन्तु डे महोदय इसे गढ़वाल के केदार से निकलने वाली काली गंगा या पश्चिमी काली अथवा मन्दागिनी मानते हैं[२३६]।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वरुणा—यह नदी वाराणसी नगरी के पास थी[२३७]। इस समय भी इसी नाम से प्रवाहित है।

अश्वघोष ने वरुणा और असी दोनों नदियों का सम्मिलित उल्लेख 'वाराणसी' नाम से किया है जो भागीरथी से मिलती थी[२३८]।

हिरण्यवती—यह नदी शाल वन (कुशीनारा के पास) और मुकुट चैत्य के मध्य बहती थी[२३९]। इसका जल स्वर्णिम रंग का था। इसी नदी के किनारे तथागत ने आनन्द को उपदेश दिया था और शाल वन में अन्तिम आसन तैयार करने का आदेश दिया था[२४०]। यह छोटी गंडक है और आज भी हिरन्ना नाम से पुकारी जाती है।

वन-उपवन और आराम

बौद्ध भिक्षु-संघ वनों, उपवनों, विहारों और चैत्यों में अल्पवास और वर्षावास किया करते थे। साथ ही वन-उपवन औषधियों और जड़ी-बूटियों के केन्द्र भी थे। इनका प्रचुर उल्लेख अश्वघोष ने किया है।

अटवी[२४१] —विन्ध्य पर्वत के आसपास विस्तृत वन था जिसका उल्लेख बाण ने भी हर्ष चरित में किया है।

अशोक वन[२४२]—सम्भवतः पाटलिपुत्र के पास था जहाँ 'अशोकाराम' स्थित था।

आम्रपाली-उपवन—वैशाली में आम्रपाली गणिका का उपवन था। यहीं पर आम्रपाली ने तथागत के दर्शन किये थे तथा उपदेश ग्रहण किया था[२४३]।

आम्र वन—राजगृह में जीवक का प्रसिद्ध उपवन था जहाँ जीवक, मगध सम्राट अजात शत्रु को उसकी ५०० रानियों के सहित भगवान बुद्ध के दर्शन हेतु ले गया था। तथागत ने उन्हें दीक्षा भी दी थी[२४४]।

चैत्ररथ वन (चित्रवन)[२४५]—यह काल्पनिक वन था जिसे मन्दाकिनी के समान महत्व प्रदान किया गया है जहाँ निवास के लिये स्वर्गवासी देवता भी लालायित रहते थे[२४६]।

जेत वन—कोशल की राजधानी श्रावस्ती में राजकुमार जेत का प्रसिद्ध उपवन था[२४७]। मनोहारी पादपोंयुक्त इस उपवन को श्रेष्ठी अनाथपिडिण्क ने राजकुमार से स्वर्णमुद्राओं से उसके धरातल को ढक करके प्राप्त किया था और उपतिष्य की देखरेख में एक श्वेत बुद्ध विहार का निर्माण करवाया था[२४८]। पुरातत्व परक खोजों से यह सिद्ध हो गया है कि उत्तर प्रदेश में

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

बलरामपुर रेलवे स्टेशन से दस-ग्यारह मील दूर स्थित सहेत ही जेतवन था[२४९]।

नन्दन वन[२५०]—चैत्ररथ वन की ही भाँति यह भी काल्पनिक वन था। इसे क्रीड़ावन भी कहा गया है।[२५१]

न्यग्रोध वन—वट वृक्षों का यह वन कपिलवस्तु में था[२५२]।

पद्म षण्ड वन—यह भी कपिलवस्तु के समीप था जहाँ सिद्धार्थ 'विहार यात्रा' के लिये गये थे[२५३]।

मृगदाव[२५४]—वाराणसी के समीप था जहाँ महाकारुणिक बुद्ध ने सद्धर्म का प्रथम सन्देश दिया था[२५५]। इसे सारनाथ कहा जाता है।

लुम्बिनि वन—इसकी शोभा दर्शनीय थी[२५६] जहाँ 'साक्य सिंह' सिद्धार्थ ने जन्म लिया था[२५७]। यह वन कपिलवस्तु और देवदह गणराज्यों के मध्य में स्थित था। नेपाल में आज भी यह स्थान लुम्बिनी नाम से ही प्रसिद्ध है।

लोध्र वन—राजगृह के पाण्डव पर्वत (महीधरं पाण्डवम्)[२५८] पर स्थित यह वन मयूरों के मनोहर स्वरों से आपूरित था[२५९]।

वेणु वन—राजगृह के समीप प्रसिद्ध वन था[२६०]। मगध-राज बिम्बिसार ने बुद्ध के निवास हेतु इस वन को भेट किया था[२६१]। इसे 'वेणुकण्टक' भी कहा गया है[२६२]।

शाल वन—कुशीनारा के समीप हिरण्यवती नदी के किनारे यह प्रसिद्ध वन था[२६३]। यहीं पर महामानव ने महापरिनिर्वाण प्राप्त किया था।

शेतविक वन—इस वन में तथागत बुद्ध ने दो द्विजों को उपदेश दिया था[२६४]। इसकी स्थिति अज्ञात है।

हिमालय वन—हिमालय का वन हाथियों के लिये प्रसिद्ध था[२६५]।

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय दो के संदर्भ

१. बु० च० ८।७४
२. वही, ११।१२
३. चौ० बु० च० १९।१०
४. बु० च० १।२१
५. वही, ७।५४, सौ० १३।२९
६. वही, ५।४
७. वही, १।२, ११।१२, १९।१०
८. वही, ८।४९, ८१; सौ० २।४८, ६।४९
९. बु० च० ८।५२, ८३
१०. सौ० २।५२, ११।४९
११. बुद्धचरित ८।३६, ७४
१२. वही, ११।४७
१३. वही, १९।२५
१४. बु० च० ११।१३ : द्वीपान्समग्रांश्चतुरोपि ।
१५. वही, ४।१०
१६. चौ० बुद्धचरित १६।२० :

प्रथक-प्रथक भवन्तो हि प्राम्यन्तु भुवि सर्वतः ।
दया भावान्विताः सर्वे दीनानुप दिशन्तु तान् ।।

१७. बु० च० ४।१०
१८. वही, २१।३४
१९. सौ० १०।१३
२०. वही, १५।२७
२१. दिव्या, ३४।१२२
२२. बु० च० २१।२२
२३. वही, २१।११
२४. वही, २१।१६
२५. वही, २१।१५

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२६. वही, १६।४८
२७. मिलिन्द, ४।८।७३ पृष्ठ ३५१
२८. सौ० १५।२७
२९. बु० च० २१।१८
३०. समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति पं० २१
३१. बु० च० ११।३१
३२. वही, २८।३२
३३. डे० ज्या० डि० ए० मे० इ० पृष्ठ ४
३४. दिव्या, ३७।७
३५. बु० च० १२।२
३६. वही, ७।५४, ९।६, ११।६९, १२।१, १४।१०६
३७. अंगुत्तर, जि० १।३।६।५
३८. पो० हि० ए० इ० पृष्ठ ९६
३९. बु० च० १५।१४, २०।१७
४०. वही, २१।२१
४१. वही, १४।१०७
४२. वही, १४।१०८
४३. सौ० ४।१०
४४. वही, १०।११
४५. महावस्तु जि० २।१०८।६
४६. सौ० १०।१२ : सुवर्णगौराश्च किरातसंघामयूर पत्रोज्ज्वलगात्रलेखाः ।
शार्दूलापातप्रतिमा गुह्यभ्यो निष्पेतुरुद्गार इवाचलस्य ।
४७. वही, ३।१२
डे, ज्या० डि० ए० मे० इ०, पृष्ठ १००
४८. सौ० ८।४५;
बु० च० ४।७९, ११।३१
४९. वही, १८।८२, ८७
५०. वही, २१।३४
५१. वही, २१।४
५२. वही, २४।३९
५३. वही, २८।२८

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

५४. वही, २८।३२
५५. वही, २८।५५
५६. वही, २८।५६
५७, वही, २८।३२
५८. वही, २८।५५
५९. वही, २८।५६
६०. वही, १०।१०, ४१, ११।१, १६।४८, ५१, ७१, ९४, १५, २२।३
६१. वही, ११।२
६२. वही, १०।१०, १६।७२
६३. वही, ११।७३
६४. वही, १०।१, १६।४८
६५. सौ० २।६२ :

मध्यदेश इव व्यक्तो हिमवत्पारिपात्रयोः ॥

६६. बु० च० २५।५०, ६३, ६४, ६६; २८।२, ५, १५, ३६, ५३, ५४
६७. वही, २५।५०
६८. वही, २५।५२
६९. ला० ट्रा० ए० इ० पृष्ठ ३७४
७०. बु० च० ११।३१
७१. वही, २१।१६, २२।३, १८, २३।१, ५७, २४।३१, ४९, ५७, ६४
७२. वही, २१।१६
७३. वही, ३।१२
७४. वही, २१।१५
७५. वही, ९।२०, १३।५
७६. वही, २३।११
७७. राय चौधरी, पो० हि० ए० इ० पृ० ११८
७८. बु० च० २८।२९; सौ० ८।४५
७९. बु० च० ११।३१
८०. वही, १।१, ५८ ८।८, ९।११
८१. वही, १।१, २।४६, ३।४०
८२. वही, १।८९
८३. सौ० ७।५१

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

८४. बु० च० ९।७०
८५. डे, ज्या० डि० ए० मे० इ० पृ० १७५
८६. बु० च० २१।१३
८७. बु० च० २१।१७
८८. वही, २१।१२
८९. वही, १६।३७
९०. आ० स० इ० ऐ० रि० १९०८–९ पृ० १३९
९१. बु० च० २१।११
९२. पो० हि० ए० इ० पृ० २०९
९३. सौ० १।५८
९४. बु०च० १।८९, ५।८४, ६।३०, ५१, ८।५, २०।१; सौ० १।५७, ३।१, १७
९५. सौ० १।२२
९६. वही, १।१८
९७. वही, १।५७ : कपिलस्य च तस्यर्षेस्तस्मिन्नाश्रमवास्तुनि ।
यस्मात्तत्पुरं चक्रुस्तस्मात्कपिलवस्तुतत् ॥
९८. वही, १।३२
९९. वही, १।३२
१००. वही, १।३२
१०१. वही, १।४३
१०२. बु० च० प्रथम सर्ग
१०३. वही, ५।८४, ८।५
१०४. सौ० १।४५; बु० च० ११।७३
१०५. बु० च० २१।२७
१०६. वही, २२।१३
१०७. हि० अ० संयुक्त० जि० २ पृ० ८११
१०८. बु० च० २५।५२, ८१; २८।३
१०९. वही, २८।१०
११०. वही, २८।२१
१११. वही, २८।३, २१
११२. सौ० १।५८
११३. डे, ज्या० डि० ए० मे० इ० पृ० ९६

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

११४. बु० च० १५।१२; सौ० ३।१५
११५. वही, १२।८९, १६।२१
११६. वही, १६।२१
११७. वही, २१।२०
११८. वही, २२।१३
११९. वही, २२।२-३
१२०. वही, २२।४
१२१. वही, २२।६
१२२. वही, २२।११
१२३. वही, २५।५०
१२४. वही, २५।५१
१२५. वही, २१।१४
१२६. वही, २५।३६
१२७. वही, २५।३४-५०
१२८. सौ० १।५८
१२९. बु० च० २१।२५
१३०. वही, २१।२४
१३१. पो० हि० ए० इ० पृ० १४४-४५
१३२. बु० च० २७।७०
१३३. वही, १६।४८
१३४. वही, १०।२, १९।१, २१।२, २८।५९
१३५. वही, १७।३, २२।३
१३६. वही, २१।४०-६५
१३७. वही, २१।२
१३८. वही, २८।६६
१३९. दिव्या, २४०।१४
१४०. वही, २४०।११-१३
१४१. बु० च० २८।६६
१४२. ला० हि० ज्यो० ए० इ० पृ० ११९
१४३. बु० च० २१।२५
१४४. सरकार, ज्यो० ए० मे० इ० पृ० २३५

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१४५. बु० च० १५।६
१४६. वही, २१।२१
१४७. वही, १५।१४
१४८. वही, १४।१०८, २०।१७, २७।३०; सौ० ३।१५, ७।३०
१४९. वही, २१।१५
१५०. ला०, हि० ज्या० ए० इ० पृ० २३६
१५१. बु० च० २१।८
१५२. वही, २३।६२
१५३. ला० हि० ज्या० ए० इ० पृ० १३४
१५४. बु० च० २१।२७
१५५. वही, २१।१६, २२।१५, २३।६३, २४।४६, २५।१, ३४
१५६. चौ० बु० च० २४।४६
१५७. बु० च० २१।१६
१५८. वही, २१।२२-२३
१५९. वही, १८।८२
१६०. वही, १८।५८
१६१. वही, २०।५३
१६२. वही, २१।२८
१६३. डे, ज्या० डि० ए० मे० इ० पृ० १८९
१६४. बु० च० २०।५७
१६५. वही, २१।९
१६६. वही, २१।२६
१६७. दिव्या, १३।१५
१६८. बु० च० ४।१००
१६९. वही, २।२०, १०।१५
१७०. वही, ५।२६
१७१. वही, ५।४२
१७२. वही, २।३०
१७३. वही, २।३०, १०।४१, २०।२, २८।५७
१७४. वही, १०।४१
१७५. डे, ज्या० डि० ए० मे० इ० पृ० ८२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१७६. बु० च० १६।३९
१७७ डे, ज्या० डि० ए० मे० इ० पृ० ६४
१७८. बु० च० २१।३९
१७९. डे० ज्या० डि० ए० मे० इ० पृ० ७२
१८०. बु० च० १०।१६, १७
१८१. वही, १०।१८
१८२. कनिंघम, ए० ज्या० इ० पृ० ५३१
१८३. सौ० २।६२
१८४. डे, ज्या० डि० ए० मे० इ० पृ० १४९
१८५. बु० च० २१।७
१८६. डे, ज्या० डि० ए० मे० इ० पृ० १५०
१८७. सौ० १।४८
१८८. बु० च० ६।१३
१८९. डे, ज्या० डि० ए० मे० इ० पृ० १२४
१९०. बु० च० १९।११
१९१. वही, १३।४१
१९२. दिव्या० २५।३०-३१
१९३. अभिधर्मकोष—३।५८
१९४. बु० च० २०।७
१९५. वही, १।३६, ३७, ५।३७, ४३, १३।४१, १९।११, २०।३६, २३।७१,
२५।१७; सौ० १२।२९
१९६. बु० च० १।३६
१९७. डे० ज्या० डि० ए० मे० इ० पृ० १९६
१९८. ला०, ज्या० अ० बु० पृ० १२
१९९. सौ० ७।४०
२००. ला, हि० ज्या० ए० इ० पृ० १०५, १०६
२०१. बु० च० २१।१०
२०२. वही, १३।३८
२०३. वही, ७।५४
२०४. महावस्तु जि० ३।३८२।१६-१७
२०५. मिलिन्द पंञ्हों ४।६।५४
२०६. बु० च० २१।५

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२०७. सौ० २।६२
२०८. बु० च० २।३
२०९. सौ० ११।-५
२१०. वही, १०।५
२११. वही, १०।११
२१२. वही, १०।५
२१३. वही, १०।६
२१४. वही, १०।७; बु० च० ७।३९
२१५. सौ० १०।१२
२१६. वही, १०।१३
२१७. वही, १०।८
२१८. वही, १०।१४
२१९. वही, १०।१२
२२०. वही, १५।२८
२२१. वही, ११५, ३७, २।६२, १०।५, ११, १५, २८;
बु० च० ४।२७, ५।४५, ७।३९, ८।३६, ९।७८
२२२. सौ० ११४३
२२३. बु० च० १४।१०७
२२४. वही, १५।१४
२२५. वही, २५।५३
२२६. वही, २५।५३ पादटिप्पणी; अवदान० जि० २।६९।३-४
२२७. बु० च० ९।२५, १०।१, २२।७-८, १०, ११, २८।३;
सौ० ७।४०, ४१
२२८. बु० च० १०।१
२२९. सौ० ७।४१
२३०. बु० च० १२।९०
२३१. वही, १२।१०८-१११
२३२. वही, २३।६५-६६
२३३. डे, ज्या० डि० ए० मे० इ० पृ० १४०
२३४. बु० च० २३।६३
२३५. सौ० ११।५०; बु० च० १४।४१
२३६. डे, ज्या० डि० ए० मे० इ० १२४

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२३७. बु० च० १४।१०७, १५।१२
२३८. वही, २७।७०
२३९. वही, २५।५४
२४०. वही, २१।१८
२४१. सौ० ७।५
२४२. बु० च० २२।१६-१७
२४३. वही, २२।१५
२४४. वही, २२।१५-५५
२४५. वही, २६।९३, २७।६५
२४६. सौ० २।५३, ११।५०; बु० च० ४।७८, १४।४१
२४७. बु० च० १८।८३-८५
२४८. वही, १८।८५-८७
२४९. ला, ज्या० अ० बु०—पृ० ४४
२५०. सौ० ४।६, ११।१; बु० च० ३।६४
२५१. सौ० १०।१८
२५२. बु० च० १९।५५
२५३. वही, ३।६३
२५४. वही, १५।१५, १६।३२
२५५. वही, सर्ग १५ "धर्म चक्र प्रवर्तन"
२५६. वही, १।६ : लुम्बिनीं नाम वनान्तभूमिं चित्रद्रुमां चैत्ररथाभिरामां ।
२५७. वही, १।७-११
२५८. वही, १०।१४
२५९. वही, १०।१५ : तस्मिन्नवौ लोध्रवनोपगूढे मयूरनादप्रतिपूर्णकुंजे ।।
२६०. वही, १६।४९, १७।१५
२६१. वही, १७।१
२६२. वही, २१।८
२६३. वही, २५।५४-५५; सौ० १।२४
२६४. बु० च० २१।३०
२६५. वही, ४।२७

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय ३

अश्वघोष कालीन सामाजिक दशा

अश्वघोष के काव्यों में भारतीय सामाजिक जीवन का अच्छा चित्रण मिलता है। कवि ने उपमाओं द्वारा समाज के विभिन्न अंगों, वर्ण व्यवस्था, वेश-भूषा, खानपान, आमोद-प्रमोद, संस्कार इत्यादि के नियमों पर प्रकाश डाला है। इस सम्बन्ध में कुषाण कालीन लेखों से भी पर्याप्त सहायता मिलती है, और उनके आधार पर सामाजिक जीवन की रूपरेखा खींची जा सकती है।

सामाजिक क्रान्ति

जगद्धिताय बुद्धो हि बोधमाप्नोति शाश्वतम् ।
अत एव च जीवानां सर्वेषां तुहिते रतः ॥ बु० च० १५/२८

"जगत के कल्याण के लिए ही बुद्ध बुद्धत्व प्राप्त करते हैं और जीवमात्र के कल्याण के लिए सदा ही रत रहते हैं।"

किं में एकेन तिण्णेन पुरिसेन थम दस्सिना ।
सब्बंवतं पापणित्वा सन्तारेस्सं सदेवकं ॥

(जातक अट्ठकथा)

"मेहनत कर अकेले तर जाने से क्या? सर्वज्ञता प्राप्त कर देवताओं सहित इस लोक को तारूँगा।"

उपनिषद युग में एक नई बौद्धिक क्रान्ति हुई जिसमें आत्म तत्व की प्रतिष्ठा की गयी। याज्ञवल्क्य ने आत्म तत्व की एकता के आधार पर ही मानव-प्रेम और एकता की प्रतिष्ठा की। श्रीमती राइज डेविड्स का विचार है कि यहीं से बौद्ध धर्म का उदय हुआ[1]। परन्तु बुद्ध "तथागत" थे। वे बुद्ध परम्परा में अट्ठाइसवें थे[2]। वे पूर्व विचार सरणी से भली भाँति अवगत थे। उन्होंने उस युग के अनेक प्रसिद्ध तपस्वियों और दार्शनिकों से साक्षात्कार किया परन्तु उन्हें बोध नहीं हुआ[3]। यहीं से उनके मन में एक शंका उठी—

इतना पढ़ने लिखने और साधना करने के पश्चात भी जब मुझे ज्ञान नहीं मिला तो भला जो मनुष्य न तो इतना ज्ञान ही अर्जन कर सकता है और न

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

इतनी कठिन तपस्या ही कर सकता है, वह कैसे ज्ञान प्राप्त कर पायेगा। परन्तु क्या उसे अपने गन्तव्य स्थान तक जाना आवश्यक नहीं ?—इसे यों भी समझिये कि आप अपनी कार से सरपट दौड़ते चले जा रहे हैं। शाम हो चली है। कुछ नन्हीं-नन्हीं बूदें भी गिर रही हैं। सड़क के किनारे बस का इन्तजार करते हुए आपके दण्डी गुरु (ऋषि) जी खड़े हुए हैं। आपने उन्हें देखते ही अपनी कार रोककर, प्रेम विह्वल हो कार में बिठा लिया। परन्तु एक दुर्बल, क्षीण और जर्जर व्यक्ति वहीं बस का इन्तजार करने के लिए छोड़ दिया गया। पानी तेज होता गया। घड़ी की सुई भी बढ़ती गयी, पर बस न लौटी। जिस समाज में ऐसी विषमता हो वह क्या सुखी और समृद्ध हो सकता है ? कभी नहीं। ऐसा रमणीय देश भी क्लेशमय कुदेश ही है।[४] इसीलिए महामानव बुद्ध ने एक ऐसा यान (गाड़ी) तैयार किया जिससे क्षीण, दुर्बल और अपंगु भी निर्वाण प्राप्त कर सकता है। उन्होंने स्वयं बताया कि सुन्दर, सुलज्ज और सम्पन्न व्यक्ति भी प्राणि-हिंसा, चोरी, मिथ्याचरण, झूठ, कठोर बचनों तथा सुरा आदि मादक पदार्थों के सेवन से निर्वाण नहीं प्राप्त करता परन्तु काना कुब्जा लगड़ा अपंगु नीच कुल का भी व्यक्ति उपर्युक्त बातों को न करके सदाचार का पालन करते हुए स्वर्ग पा सकता है। यही थी बुद्ध-क्रान्ति जिसने डूबते हुए मनुष्य को तिनके का सहारा दिया। "बुद्ध-यान" "बहुजन हिताय और बहुजन सुखाय" तथा राष्ट्र शक्ति और समृद्धि के लिए ही बना था।

प्राय: ऐसा विश्वास किया जाता है कि बुद्ध एक धार्मिक नेता थे। परन्तु ऐसा सोचना भ्रम ही है। बुद्ध युग-पुरुष थे। उन्होंने अपने युग में प्रत्येक पक्ष को बहुजन हितैषिणी वृत्ति और विचार से सजाया और संवारा था। जो देश टूटा हुआ राजनैतिक विषमता का अखाड़ा था उसको मिटा कर धर्म-राज्य की स्थापना करना ही उन्हें अभीष्ट था। यह कार्य अपने जीवन में ही उन्होंने प्रारम्भ कर दिया था और उसका परिपाक उनके परमप्रिय शिष्य अशोक के समय उत्पन्न हुआ। जब अशोक का राज्य केवल मगध का राज्य न था प्रत्युत एक ऐसा धर्म-राज्य था जिसकी प्रतिष्ठा प्रीति-रस, अक्षति, समचरिया और प्रसन्नता पर आधारित थी।[५] उन्होंने भी समस्त शक्ति जन-हित में लगा दी (य च किं चि पराक्रमामि अहं किंति भूतानं आनंणं गछेयं)[६]। उन्होंने स्पष्ट बतलाया कि लोक कल्याण से बढ़कर और कोई कार्य नहीं (नास्ति हि कंमतरं सर्वलोकहितप्पा)[७]।

तथागत बुद्ध लौकिक और पारलौकिक क्षेत्र में संसार के साधारण मनुष्य को भी कल्याण का मार्ग दिखाते रहे। सम्पूर्ण बुद्ध-तन्त्र और बुद्ध-ज्ञान

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

"बहुजनहिताय और बहुजन सुखाय" ही था। इस प्रकार लोक तान्त्रिक पद्धति को बुद्ध की नयसारिणी प्रज्ञा से महान प्रश्रय मिला। उनकी वाणी और विचारों के साथ-साथ संघ और गण-पद्धति भी फैलती रही।

भगवान बुद्ध का जन्म ऐसे युग में हुआ था जब देश में सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा शैक्षिक विषमताएँ फैली हुईं थीं। आर्य और अनार्यों का आपसी संघर्ष अब भी चल रहा था। अनार्य लोग आर्यों द्वारा अपहृत अपनी राज्य-लक्ष्मी को पुनः प्राप्त करने का शोच करते हुए पाताल (दक्षिण) में चले गए थे।[८] ऊँच-नीच और अमीर-गरीब का भेदभाव था। समाज में शीर्ष स्थान प्राप्त करने के लिए ब्राह्मण-क्षत्रिय संघर्ष भी व्यापक स्थान बना चुका था, जिसका प्रधान केन्द्र मिथिला में जनक का राजदरबार था। धार्मिक क्षेत्र में वेद-वाद और देव-वाद का बोल बाला था। धार्मिक क्रियाओं के संपादन में सभी लोगों को बराबर अधिकार न था। भूत-प्रेतों में विश्वास का आडम्बर व्यापक था। राजनीति के क्षेत्र में सभी वर्गों के लोगों को सम्राट होने का अवसर नहीं था। इन समस्त कारणों से देश विश्रंखलित हो चला था। देश आपसी ईर्ष्या-द्वेष की अग्नि में जल रहा था। ऐसे समय में महामानव, दुखी को निर्दुखी, भयग्रस्त को निर्भय करने तथा शोकग्रस्त को शोक मुक्त करने का पावन सन्देश[९] लेकर भारत में अवतरित हुए। उनकी इस जनतन्त्रात्मक भावना का उल्लेख बौद्ध साहित्य-पाली तथा संस्कृत--में सर्वत्र मिलता है।

सबसे पहले बुद्ध ने सामाजिक क्षेत्र में लोक तन्त्रात्मक क्रान्ति प्रारम्भ की। क्योंकि उस समय चातुर्वर्ण व्यवस्था को वेदों की भांति अपौरुषेय (ईश्वर कृत) माना जाता था। इस व्यवस्था में प्रत्येक प्राणी को आत्मोन्नति का समान अवसर नहीं था। ऐसे युग में बुद्ध ने कहा था कि संसार में एक ही जाति है उसमें कोई पार्थक्य नहीं (एकेव जातिर्लोकेऽस्मिन् सामान्या न पृथग्विधा)[१०]। उन्होंने सबसे पहले इस भेद-भाव को बुद्धसंघ में समाप्त किया। उन्होंने कहा कि "जिस प्रकार भिन्न-भिन्न नामों को धारण कर पृथ्वी पर नदियां बहती हैं परन्तु जब वे समुद्र में मिल जाती हैं तब अपने पूर्व नामों को त्याग कर समुद्र रूप हो जाती हैं। उनमें गंगा, यमुना, घाघरा, गोदावरी आदि का कोई भेद नहीं रहता। ठीक उसी प्रकार संघ में आने पर मनुष्य अपने वर्ण और वर्ग को त्याग कर संघमय हो जाता है।[११] परिणामस्वरूप संघ में पहले उपस्थित होने के कारण उपाली[१२] (नापित पुत्र) को शाक्य कुमारों ने (जिनका उपाली पहले सेवक था) झुक कर प्रणाम किया था।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

बुद्ध की इस लोकतन्त्र-परम्परा ने प्रत्येक मनुष्य को अपने विकास का मार्ग खोजने की पूर्ण स्वतन्त्रता दी। यहाँ मनुष्य की चिन्तनशक्ति पर ताला नहीं लगाया गया था।[१३] चिन्तन-स्वातन्त्र्य का ही परिणाम था कि "सोपाक"[१४] एक स्थविर बन सका और सूप्पिय[१५] (डोमकुल में उत्पन्न) समाज में एक "सम्मानित भिक्खु" बना। दासक[१६] और महा पन्थक[१७] जैसे दासी-पुत्र भी समाज के उपदेशक बने। हत्थारोहक पुत्र[१८] तथा विजित सेन[१९] (हथवाल पुत्र) "थेर" बने। छन्न[२०], धनिय[२१], कम्पलकुर[२२], यसोज[२३], जम्बुक[२४], सोपाक[२५], और सुनीत[२६], तथाकथित नीच कुल में उत्पन्न भी थेर बने और समाज को "सद्धधम्म" का उपदेश दिया। यह थी महामानव की लोक तन्त्रवादी क्रान्ति जिसने प्रत्येक मनुष्य के लिए बुद्ध बनने का द्वार खोला।

बुद्ध, धर्मराज थे, जिनका उद्देश्य अपने ही मोहपाश से परिवेष्ठित, दुख से अभिभूत तथा निराश्रय जगत का बन्धन काटना था।[२७] वे दुख में डूबे हुए लोगों के त्राता थे (दुखार्तितानां भुवि एष त्राता)[२८]। उन्हें तो ऐसा अनुकूल आचरण भी पसन्द न था जो कपट रहित न हो।[२९] पंचशील का आचरण करके प्रत्येक व्यक्ति निर्वाण-पथ का राही बन सकता है। किसी जीव की हिंसा न करना (प्राणातिपातात्प्रतिविरतो), अप्रदत्त वस्तु को ग्रहण न करना (अदत्तादानात्प्रति विरतो), मिथ्याचरण न करना (कामेहिमिथ्याचारात्प्रति विरतो), झूठ-कठोर न बोलना (मृषावादात्प्रतिविरतो) और सुरा मेरेय आदि मादक वस्तुओं का सेवन न करना (सुरामेरेयमद्यप्रभावात्प्रतिविरतो)[३०] जीवन के ऐसे व्यावहारिक तत्व हैं जिनसे प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन को सुखी बना सकता है। ऐसे युग में जब ब्राह्मण धर्म में शूद्रों और अन्त्यजों को पुण्य कर्म करना भी निशिद्ध था[३१], बुद्ध का समस्त मानव मात्र के लिए समता और बन्धुता का पाठ देना वास्तव में कराहती हुई मानवता को संबल देना था।

लोकनायक बुद्ध ने मनुष्य कृत कर्मों और उसके प्रतिफल के मध्य ईश्वर जैसे मध्यस्थ को स्वीकार नहीं किया। उन्होंने कहा कि कर्मों का फल अवश्य मिलता है। वे हजारों वर्ष तक नष्ट नहीं होते। समय और उपादान प्राप्त होने पर शरीर धारियों में वे फलित होते हैं।[३२] सभी सत्व कारण से उत्पन्न होते हैं। उनका कर्ता (बनाने वाला ईश्वर) कोई नहीं है।[३३] आत्मा नाम की कोई चीज नहीं है जो परमात्मा या ईश्वर का अंश शरीर धारियों में विद्यमान हो।[३४] सार्वभौमिकता के आधार पर ही सभी पाप कर्मों को न करना, कल्याणकारी कर्मों का सम्पादन करना तथा चित्त को निर्मल एवं पवित्र करना ही उनका अनुशासन था।[३५]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

महामानव ने मनुष्य जाति को न तो वर्णों में विभाजित ही किया और न किसी को शुभ कर्मों के सम्पादन से वंचित ही किया। प्राणि मात्र के लिये उत्तम मंगल हेतु बहुश्रुत होना, सुशिक्षित होना और सुभाषण करना[३६] आदि शुभ कर्मों के सम्पादन की स्वतन्त्रता एक धार्मिक क्रान्ति ही थी। 'महामंगल सुत्त' में जो ३८ कर्म करणीय बतलाये गये हैं उनके सम्पादन से प्रत्येक प्राणी चाहे वह किसी वर्ण या वर्ग का हो सर्वत्र अपराजित हो कल्याण को प्राप्त करता है[३७]। महा मंगलकारी कर्मों के साथ ही साथ तथागत ने 'पराभवसुत्त' में उन अनेक कारणों को बतलाया है जिनके करने से मनुष्य का पराभव होता है[३८]। इन कर्मों को यदि कोई ब्राह्मण करेगा तो उसका भी पराभव होगा और यदि क्षत्रिय, वैश्य अथवा शूद्र या अन्य कोई भी करेगा तो उसका भी पराभव होगा। बुद्ध ने सभी प्राणियों पर दया करना ही धर्म बतलाया (सर्वेषु भूतेषु दया हि धर्मः)[३९]।

इसी दया-भाव को जन-जन में उत्पन्न करने के लिये अपने शिष्यों को उपदेश और आदेश दिया था कि वे सब लोग संसार में प्रथक-प्रथक भ्रमण करें और बन्धु भाव उत्पन्न करें[४०]। उनकी यह चरिया लोक हित के लिए मनुष्यों और देवताओं के सुख, अर्थ और कल्याण के लिए ही थी। जिसके पीछे उनकी कोई स्वार्थ भावना नहीं थी[४१]।

उनकी लोक तन्त्रामक क्रान्ति का पूर्ण विकास राजनीति के क्षेत्र में हुआ। बुद्ध 'धर्मराज'[४२] थे और 'धर्मराज्य' की स्थापना करना उनका लक्ष्य था। 'कृषि-महोत्सव' के अवसर पर हल से विकीर्ण भूमि से निकले हुए कीड़े-मकोड़ों को मरता हुआ, पक्षियों द्वारा खाया जाता हुआ देखकर उन्हें "मात्स्य न्याय" का अनुभव हुआ[४३]। उन्होंने इस घटना के आधार पर समाज का निरीक्षण किया और उसमें भी इस "मात्स्य न्याय" परम्परा को देखकर वे क्षुब्ध हो उठे। सबल और निर्बल में इस प्रकार का वैषम्य उन्हें असह्य था। अस्तु उसे मिटाकर सबल और निर्बल को समता और बन्धुता के माध्यम से समतल मानवीय स्तर पर लाना ही उनका मात्र उद्देश्य था और यही उनके धर्मराज्य का मूल भी था। जहाँ न शस्त्र की आवश्यकता थी और न दण्ड की[४४]। इस धर्मराज्य-स्थापन में उन्हें उनके पिता के गण राज्य से भी पर्याप्त अनुभूति मिली थी, और यदि यह कहा जाय कि उनकी संघीय लोक परम्परा, गणराज्य-परम्परा पर ही आधारित थी तो कोई अनुचित बात न होगी। यद्यपि उस समय राजतन्त्रात्मक तथा गणतन्त्रात्मक दोनों ही शासन पद्धतियाँ प्रचलित थीं (केचिद्देशा गणाधीना केचिद्राजाधीना)[४५]। परन्तु

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

राजतन्त्रात्मक पद्धति में प्रत्येक मनुष्य को स्वतन्त्र विचार-योग देने का अवसर न था। इसीलिए बुद्ध ने ऐसे 'संघ' की स्थापना की जहाँ प्रत्येक मनुष्य को स्वतन्त्रतापूर्वक मत व्यक्त करने का पूर्ण अवसर था और जहाँ 'बुद्ध' और 'धम्म' से भी 'संघ' श्रेष्ठ था, जिसकी मर्यादा का उल्लंघन नहीं किया जा सकता था[४६]। यह संघ सुमार्गगामी (सुपटिपन्न), सीधे मार्ग पर चलने वाला (उजुपटिपन्न) और न्याय मार्ग (ञायपटिपन्न) तथा समीचीन मार्ग (सामीचिपटिपन्न) का ही अनुगामी था। इस लोक-तन्त्र-परम्परा में मनुष्य तत्कालीन प्रचलित जातीय बन्धनों[४७] से मुक्त था। कोई भी व्यक्ति अपने अध्यवसाय से संघ के नियमों का पालन करता हुआ उन्नत पद प्राप्त कर सकता था। यही कारण था कि प्रथम बौद्ध संगीति में नापित-पुत्र उपाली भी उस समस्त संघ को 'विनय' (व्यवस्था) देने में समर्थ हो सके, जिसमें विद्वान ब्राह्मण थे, सेठ-साहूकार और क्षत्रिय थे और साथ ही शूद्र, चण्डाल तथा पुक्कुस भी थे। बुद्ध के इस लोक तान्त्रीय धर्मराज्य का धर्म ही राजा (धार्मिको धर्म राजा)[४८] था। जहाँ क्रूर प्राणियों ने स्वाभाविक वैर को त्याग कर स्वजनों अथवा परिजनों को कष्ट नहीं पहुँचाया[४९]। लिच्छवी-संघ के संबन्ध में आनन्द को उपदेश देते हुए लोक नायक ने कहा था कि जानते हो आनन्द जब तक वज्जिय लोग—

१—पूर्ण रूप से उपस्थित होकर नियत समय पर संघ में अधिवेशन करते रहेंगे।

२—मंत्र और नीति विषयक एकता को बनाये रक्खेगे।

३—प्राचीन परंपराओं का पालन करते रहेंगे।

४—संस्थाओं और पूजाओं को मानते रहेंगे।

५—वृद्धों का मान करते रहेंगे।

६—साधु-सन्यासियों की मर्यादा, आदर-सत्कार और

७—स्त्रियों की प्रतिष्ठा करते रहेंगे।

तब तक उनके संघ को कोई भी पराजित नहीं कर सकता[५०]। ये तथ्य लोकतन्त्र प्रणाली के मूलाधार हैं। जिन पर आधारित वज्जिय-संघ को अभिसात करने के लिए मगधाधिप सम्राट अजात शत्रु को भी १६ वर्ष सतत प्रयत्न करना पड़ा[५१]। उस संघ में इतना दृढ़ सौहार्द था कि अमात्य वर्षकार तीन वर्ष में भी फूट और भेद उत्पन्न करने में पूर्ण सफल न हो सका और अजात शत्रु को एतदर्थ पाटलिपुत्र दुर्ग का निर्माण करवाना पड़ा[५२]। यह थी लोकतन्त्रीय शक्ति जिसमें कोई पराधीन नहीं, सभी स्वाधीन थे।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

बुद्ध की महानतर क्रान्ति थी जन-मानस में लोकतान्त्रिक भावना का अंकुरण कर देना। बुद्ध भक्त मल्लों पर बलपूर्वक-बुद्ध-अस्थियाँ लेने के लिये जब अजात शत्रु समेत सात पड़ोसी राजाओं ने सम्मिलित आक्रमण किया, ता लोकतान्त्रिक मल्ल पुरुष ही नहीं अपितु वीर प्रसू वीरांगनाएँ भी शत्रु-प्रतिरोध के लिए तैयार हो गयीं और अन्त में शत्रुओं को सन्धि का ही सहारा लेना पड़ा[५३]। यह था बुद्ध का जनतान्त्रिक स्वरूप जिन्होंने ग्रामों, नगरों और जनपदों की पदयात्रा करके वहाँ के लोगों में स्वाभिमान की भावना को जगाया था। उन्होंने लोगों को बतलाया था कि पराधीनता घोर दुख है और स्वाधीनता परम सुख है[५४]।

तथागत का अन्तिम उपदेश भी यही था कि "अपना दीपक स्वयं बनों और अपना स्वामी स्वयं बनो" (अत्त दीपो भव, अत्त नाथो भव)। निश्चय ही यह एक वाक्य उनके समस्त लोकतान्त्रिक विचारों का सारभूत है।

'करणीयमेत्तसुत्त' में शास्ता ने लोकतन्त्र को अमर बनाने वाले तत्वों की ओर संकेत किया है। उन्होंने कहा कि, सभी जंगम या स्थावर, दीर्घ या महान, मध्यम या ह्रस्व, अणु या स्थूल, दृष्ट या अदृष्ट, दूरस्थ या निकटस्थ उत्पन्न या उत्पन्न होने वाले जितने भी प्राणी हैं वे सभी सुख पूर्वक रहें, कभी किसी का अपमान न करें। वैमनस्य या विरोध से भी एक-दूसरे को दुख पहुँचाने की इच्छा न करें। माता जिस प्रकार अपनी जान की परवाह न करके अपने इकलौते पुत्र की रक्षा करती है, उसी प्रकार प्राणिमात्र के प्रति असीम प्रेम भाव बढ़ावें। बिना बाधा और शत्रुता के, ऊपर उठकर समस्त संसार के प्रति असीम प्रेम भाव में वृद्धि करें[५५]। ये समस्त ऐसे आचरणीय कार्य हैं जिन्हें लोकतन्त्र का सार कहा जा सकता है और जिन पर ही जनतन्त्र आधृत होता है। इन्हीं आचारों और व्यवहारों के आधार पर बुद्ध ने उस लोक तन्त्र का प्रतिपादन किया था जिसमें सभी प्राणी सुखी हों, सभी क्षमावान हों। सभी का मंगलमय जीवन हो और दुख किसी को उत्पीड़ित न करें।

सब्बे सत्ता सुखी होन्तु सब्बे होन्तु च खेमिनो।
सब्बे भद्राणि पस्सन्तु मा कंचि दुक्ख मागमा॥

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वर्णभेद और बौद्ध-दृष्टिकोण

इस सम्बन्ध में तथागत में कहा था कि जिस प्रकार गंगा, यमुना, सरयू अनेक नदियाँ समुद्र में मिलने पर तदनुरूप हो जाती हैं और कोई भी अन्तर नहीं रहता, ठीक उसी प्रकार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रादि सभी वर्ण बौद्ध संघ में प्रवेश पाने पर संघ रूप हो जाते हैं।[५६] यह वर्ण और वर्ग वास्तव में समाज और राष्ट्र के लिए अहितकर ही हैं।

दिव्यावदान के अनुसार एक ही जाति (मानव जाति) है।[५७] सभी वर्णों में वही जंघा है, वही नख है, वही मांस है, वही पार्श्व है, वही पीठ है, किसी में एक अंश की भी कोई विशेषता नहीं है। अस्थि, मांस, नख, चर्म, सुख-दुःख की अनुभूति पंचेन्द्रियां सभी में समान रूप से होती हैं। अतः एक ही "मानुष वर्ण" है जो 'दिव्य' है।[५८]

"वज्र सूची" कार ने भी 'एकैव जाति' का अनुमोदन करते हुए कहा है कि जातियां पशु-पक्षी और वृक्षों में होती हैं। गाय, भैंस, घोड़ा, हाथी, गर्दभ, बानर, रीछ और गैंडा पशुओं की भिन्न-भिन्न जातियां हैं। पक्षियों में हंस, शुक, पारावत, कोकिल और मयूर जातियां हैं। वृक्षों में वट, पलाश, नागकेशर, शिरीष और चम्पक आदि जातियां हैं। परन्तु ऐसा कोई भी अन्तर (आकार और स्वरूपगत) चतुर्वर्ण में नहीं है।[५९] वर्णों की श्रेष्ठता में भी कोई अन्तर नहीं है।[६०] जब चारों वर्णों में (आकार या स्वरूप गत) पार्थक्य नहीं है,[६१] तब मनुष्य मात्र समान है वह एक ही मनुष्य जाति का सदस्य है।[६२]

जातिवाद से ऊपर उठकर कर्मवाद को प्रधानता दी जा रही थी। भगवान बुद्ध ने कहा था कि जन्म से कोई भी प्राणी ब्राह्मण अथवा वृषल नहीं होता वह तो कर्म से होता है।[६३]

समाज इन जाति-पांति के आडम्बरों को समझने लगा था। बौद्धाचार्य अश्वघोष ने निम्न कुल के लोगों से सेवा कार्य तथा उनको अधिकारों से वंचित करने का विरोध करते हुए कहा था "उच्च कुलपुत्रों के निमित्त निम्न कुल वालों को उनके अधिकारों से वंचित नहीं करना चाहिए"।[६४]

इस प्रकार यह श्रमण संस्कृति मानव जाति की एकता का प्रतिपादन कर रही थी।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

ब्राह्मण संस्कृति की सबसे बड़ी देन वर्ण-व्यवस्था है, जिसका मूल ऋग्वेद का "पुरुषसूक्त" माना जाता है।

संस्कृत बौद्ध युग में वर्णों के क्रम में परिवर्तन हुआ और समाज में क्षत्रियों का महत्व प्रतिपादित किया गया जिसका परिचय वर्णके क्रमिक नामोल्लेख से ज्ञात होता है। यद्यपि इस प्रचलित परम्परागत क्रम का भी उल्लेख प्राप्त होता है। दिव्यावदान में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र का एक ही साथ वर्णन किया गया है। बौद्ध संस्कृति में इन चारों वर्णों की एकता (एक मिदं सर्वमिदमेकं) पर विशेष बल दिया गया है। इसीलिए बौद्ध साहित्य एक ही जाति, 'मनुष्य जाति' अथवा 'मनुष्य वर्ण' का बार-बार उल्लेख करता है।

इस प्रकार संस्कृत बौद्ध साहित्य ने "एक वर्ण" और "एक जाति" के आधार पर समाज में एक जन-जागृति की लहर दौड़ा दी। जिस प्रकार सड़क के किनारे खेलते हुए बालक मिट्टी के ढेर को देखकर—यह दूध है, यह दही है, यह घी है आदि आदि कल्पनाएँ कर लेते हैं, ठीक उसी तरह चारों वर्णों की कल्पना भी है।[६५] समय-समय पर इन वर्ण और वर्ग गत विद्वेषों के कारण भारत को दास होना पड़ा। मुट्ठी भर युद्धाधिकृत क्षत्रिय देश की रक्षा न कर सके। आज भी देश पर उसी तरह संकट के बादल मंडरा रहे हैं। ऐसे समय में संस्कृत बौद्ध साहित्य का समता और बन्धुता का सन्देश राष्ट्रहित के लिए विशेष उपयोगी है।

वर्ण-व्यवस्था

इस सामाजिक क्रान्ति के साथ ही साथ समाज़ में प्राचीन परम्पराएँ भी वर्तमान थीं जिनका उल्लेख कवि की कृतियों में यत्र-तत्र उपलब्ध होता है। परन्तु, इस वर्ण व्यवस्था के विषय में बौद्ध दृष्टिकोण का समझना आवश्यक है। सौन्दरनन्द के अष्टादश सर्ग (आज्ञा व्याकरण) में कहा गया है, कि द्विज बालक वेदाध्ययन समाप्त कर, वैश्य व्यापार में तुरन्त लाभ उठाकर और क्षत्रिय शत्रु-सेना को जीतकर, अपने गुरु के समीप पहुँचता है।[६६] इसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तीन वर्णों का स्पष्ट वर्णन है। दिव्यावदान में 'वर्ण चुतष्कं[६७] का उल्लेख मिलता है, जिसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार वर्ण थे।[६८] इससे स्पष्ट होता है कि उस समय वैदिक और ब्राह्मणकाल से प्रवाहित चातुर्वर्ण्य-व्यवस्था की धारा भी प्रवाहित थी।

ब्राह्मण—ब्राह्मणों का प्रमुख कार्य वेदाध्ययन था।[६९] मनु ने अध्ययन,

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्यापन, यज्ञ करना, यज्ञ करवाना, दान लेना और दान देना आदि उनके कार्य बताए हैं[७०]। समाज में उन्हें सबसे ऊँचा समझा जाता था क्योंकि "पुरुष सूक्त" के अनुसार वे विराटपुरुष के मुख से उत्पन्न हुए थे। वर्णों में वे सबसे ज्येष्ठ थे तथा ब्रह्म (वेद) को हृदयंगम करते थे।[७१]

क्षत्रिय—अश्वघोष के कथनानुसार क्षत्रियों का रंग स्वर्ण के समान, छाती सिंह के समान (विशाल) तथा भुजाएँ लम्बी होती थीं। ये लोग ख्याति और श्री के भागी होते थे।[७२] इनका प्रमुख कार्य शत्रुओं को पराजित[७३] करना तथा प्रजा की रक्षा करना था।[७४] बौद्ध और जैन आगमों में क्षत्रिय वर्ण को प्रधानता दी गई है और यहाँ तक कहा गया है कि धर्म प्रवर्तक महापुरुषों को उत्पन्न करने का श्रेय क्षत्रिय वर्ण को ही है।[७५] महावस्तु में वर्णों की गणना ब्राह्मण वर्ण से न होकर क्षत्रिय वर्ण से हुई है।[७६] इससे भी क्षत्रिय वर्ण की श्रेष्ठता प्रतीत होती है।

वैश्य—अश्वघोष ने वैश्यों को "वणिक्" कहा है। उपर्युक्त दोनों वर्णों की भाँति इस वर्ण के व्यक्ति भी उच्च माने जाते थे। व्यापार में लाभ का शुभ सन्देश लेकर वैश्य-बालक अपने गुरु के समीप जाता था।[७७] व्यापार के अतिरिक्त ये लोग कृषि और पशुपालन भी करते थे। व्यवसायी होने के नाते ये लोग यज्ञ, दान, पठन-पाठन आदि कृत्यों से वंचित न थे[७८], वे द्विज के रूप में सुकृत कर्मों के अधिकारी थे।

शूद्र—शूद्रों की श्रेणी में अश्वघोष ने उन जातियों को रक्खा है, जो या तो अनार्य मानी जातीं थीं अथवा जो साधु कर्म करने से वंचित मानी जाती थीं।[७९] इस श्रेणी में कवि ने पर्वत निवासी किरात[८०] तथा व्याधो[८१] को भी रक्खा है।

आश्रम-व्यवस्था

अश्वघोष के समय में भी भारतवर्ष में आश्रम-व्यवस्था प्रचलित थी, जिसका उल्लेख उनके काव्यों में मिलता है। यद्यपि उस समय आश्रमों का वही क्रम रहा होगा जो वैदिक काल से चला आ रहा था, किन्तु बुद्ध चरित में केवल तीन ही आश्रमों को प्रधानता दी गई है। ब्रह्मचर्य (प्रथम वयस में), गृहस्थ (युवावस्था में) और तृतीय धर्माचरण व सन्यास का आश्रम (वृद्धावस्था में) माना जाता था। वानप्रस्थ नामक आश्रम का उल्लेख कवि की कृतियों में नहीं मिलता है, पर इससे यह न समझना चाहिए कि वानप्रस्थ आश्रम उस युग में नहीं था।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

प्रथम अवस्था ब्रह्मचर्य से सम्बन्धित थी जिसमें बालक का मुख्य ध्येय विद्याध्ययन करना था। इस आश्रम में "अर्थ" और "धर्म" का कोई स्थान नहीं था।[८२] इस आश्रम में बालक गुरुकुल में गुरुजनों पर आश्रित रहता था और ब्रह्मचर्य का पालन करता था।[८३]

द्वितीयाश्रम गृहस्थ-आश्रम था, जिसमें विद्याध्ययन समाप्त कर "अर्थ" और "काम" का आश्रय लिया जाता था। इस आश्रम में जीवन का ध्येय अर्थ-संचय तथा सन्तान-उत्पन्न करना था,[८४] जिससे मनुष्य "पितृ-ऋण" को चुका सके। यह चारों आश्रमों का स्रोत था, जिसमें पुरुष, सुख और आनन्दोपभोग करता था।[८५]

अन्तिम आश्रम धर्मार्जन तक सीमित था। यह सन्यास आश्रम ही था जो गृहस्थजीवन के आनन्दोपभोग के बाद ही ग्रहण किया जाता था।[८६] अश्वघोष के मतानुसार जब तक सौन्दर्य को दबाकर वृद्धावस्था अपना प्रभुत्व स्थापित कर शरीर को जीर्ण न कर दे तब तक कामोपभोग करना चाहिए, धर्मोपभोग नहीं।[८७] प्राचीन परम्परानुसार नई वयस में विकार होता है, इसलिए धर्मार्जन के लिए वृद्धावस्था की प्रतीक्षा करना चाहिए, परन्तु अश्वघोष के अनुसार यह प्रतीक्षा करना भूल ही है क्योंकि बहुधा देखा जाता है कि वृद्धावस्था में भी अधैर्य होता है।[८८] जबकि स्वकर्म कुशल "यम" सब अवस्थाओं (बचपन, युवा और वृद्ध) में जगत के प्राणियों को खींच रहा है, तब विनाशकाल के निश्चित न होने पर (मृत्यु के लिए कोई काल निश्चित नहीं है) बुद्धिमान को शान्ति पाने के लिए वृद्धावस्था की प्रतीक्षा नहीं करना चाहिए।[८९] शिशु, युवा, अथवा वृद्धावस्था में कभी भी मनुष्य को शीघ्र से शीघ्र ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिससे वह धर्मात्मा और बुद्धात्मा होकर इष्ट-प्रवृत्ति (इच्छित फल) "मोक्ष" को प्राप्त कर सके।[९०]

पुरुषार्थ

अश्वघोष के काव्यों से तत्कालीन समाज में त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ और काम) पुरुषार्थ-व्यवस्था का महत्व प्रतीत होता है। मुक्ति (मोक्ष) प्राप्ति के लिए धर्म अर्थ और काम का विधिवत् सेवक करना आवश्यक था[९१] और यही श्रेयस्कर भी समझा जाता था[९२]। समाज में यह विश्वास फैला हुआ था, कि रागवश त्रिवर्ग की विधि का उलटफेर हो जाने से लोक और परलोक दोनों ही नष्ट हो जाते हैं[९३]। अर्थ व धर्म को त्याग कर, काम-साधना तथा धर्म और काम को त्याग कर अर्थ साधना अथवा काम और अर्थ को त्याग

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

कर धर्म साधना उद्देश्य की प्राप्ति में असफल मानी जाती थी[९४]। धर्म, अर्थ और काम का विधिवत् सेवन ही मनुष्य का पुरुषार्थ अन्तिम फल-मोक्ष या निर्वाण देने वाला समझा जाता था[९५]।

पुरुषार्थ और मानव-जीवन

त्रिवर्ग पुरुषार्थ और मानव जीवन (युवा, मध्यमा और वृद्धावस्था) में घनिष्ट सम्बन्ध था। धर्म के लिए वृद्धावस्था, अर्थ के लिए मध्यावस्था और काम के लिए युवावस्था निश्चित कर दी गई थी[९६]। जीवलोक में धर्म और अर्थ का शत्रु यौवन है[९७] परन्तु वृद्धावस्था में इन्द्रिय—शैथिल्य के कारण कामोपभोग की शक्ति नहीं रहती,[९८] साथ ही इस अवस्था में परिपक्व विचार, धैर्यवृत्ति और स्थिरता आ जाती है,[९९] इसीलिए इस अवस्था को धर्माचरण के उपयुक्त बताया गया है[१००]।

इस त्रिवर्ग व्यवस्था को अश्वघोष ने बुद्धचरित के ग्यारहवें सर्ग में दिखाने का प्रयास किया है, जिसमें 'काम' की पूर्णतया भर्त्सना की गई है। कवि के मतानुसार कामी व्यक्ति में काम-रूपी सम्पत्ति (पुरुषार्थ) विपत्ति ही है, क्योंकि काम की सिद्धि होने पर 'मद' होता है। मद से मनुष्य अकरणीय कार्य करता है और उससे घायल होकर वह दुर्गति को प्राप्त होता है।[१०१] इस त्रिवर्ग पुरुषार्थ में अनर्थ को देखकर ही कवि ने इसे नाशमान् तथा तृप्ति-प्रदान करने में असमर्थ कहा है[१०२]। अश्वघोष ने तो उस पुरुषार्थ की सराहना की है, जिसे प्राप्त कर पुनः प्रयत्न नहीं करना पड़ता है और जिससे न जरा हो, न भय हो, न रोग हो, न जन्म हो, न मृत्यु और न आधि हो न व्याधि[१०३]।

कवि तत्कालीन समाज में प्रचलित आश्रम व्यवस्था और त्रिवर्ग व्यवस्था को स्वीकार करने के लिए तभी तैयार है जब उस व्यवस्था से उसकी इस शंका का समाधान हो, 'कि मेरा जीवन-मरण के लिए न हो और न रोग इस मेरे शरीर का हरण करें, न जरा मेरे यौवन को नष्ट करे और न विपत्ति मेरी सम्पत्ति का हरण करे[१०४]।'

पारिवारिक जीवन

अश्वघोष के समय में परिवार में पति-पत्नी का स्थान मुख्य था। पति-पत्नी सन्तान-उत्पत्ति के लिए व्रत, नियम, उपवास, जप, तप, दान, पूजा-पाठ, यज्ञ[१०५] आदि का आयोजन करते थे। 'सौन्दरनन्द' का द्वितीय सर्ग इस

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

प्रकार की क्रियाओं से परिपूर्ण है। प्रसव-काल के कुछ दिन पूर्व से ही पति-पत्नी दोनों ही व्रत रखते थे, जिससे चरित्रवान सन्तान उत्पन्न हो[१०६]। प्रसव के लिए वितान-युक्त शय्या का विधान था[१०७]। उत्पन्न सन्तान के गुण-दोष बताने के लिए ऋषि और मुनि भी आते थे[१०८]।

पुत्र के जन्म-अवसर पर अनेक प्रकार से आनन्द मनाया जाता था। सन्तानोत्पत्ति के बाद पति-पत्नी, पिता और माता का पद ग्रहण करते थे। समाज में पुत्रोत्पत्ति से स्वर्ग की प्राप्ति मानी जाती थी। पुत्र उत्पन्न कर मनुष्य 'पितृ-ऋण' से मुक्ति पाता था। पति-पत्नी में परस्पर विरोधी भाव नहीं पनपते थे। दोनों ही सदाचारी जीवन व्यतीत करते थे तथा दोनों आपस में एक-दूसरे के प्रति सत्यनिष्ठ रहते थे[१०९]। माता के न रहने पर मौसी पुत्र का पालन-पोषण करती थी[११०]। पति-पत्नी का तृतीय रूप पितामह और पितामही था। पौत्र के जन्म से पितामह और पितामही को पुत्र जन्म से भी बढ़कर प्रसन्नता होती थी, क्योंकि पौत्र-जन्म, वंश की वृद्धि का माप-दंड माना जाता था[१११]।

परिवार में चाचा-चाची तथा चचेरे भाई भी रहते थे। 'बुद्ध-चरित' में भगवान बुद्ध के चचेरे भाई देवदत्त का उल्लेख मिलता है, जिसने बुद्ध को क्षति पहूँचाने के लिए गृद्धकूट पर्वत से "मुनि" के ऊपर शिला लुढ़काई थी[११२] और राजगृह में प्रलयकारी हाथी 'नलगिरि' छोड़ा था[११३]। तत्कालीन अभिलेखों में बहन (भागनीया) का उल्लेख मिलता है[११४]। परिवार में पुत्री (धूतुप), पुत्र (पुतानं), भाई (भातुनं), भतीजे (भातु-पुतानं), बाबा (अथक) दादी (अथोकास) आदि का स्थान उल्लेखनीय था।

अतिथि-सत्कार

गृहस्थ-जीवन मनुष्य के आमोद-प्रमोद का क्षेत्र था[११५]। पति-पत्नी एक दूसरे के पूरक थे। वे एक दूसरे के अभाव में वैसे ही नहीं शोभित होते थे, जैसे रात्रि के बिना चन्द्रमा[११६]। 'सौन्दरनन्द' के लेखक के समय में गृहस्थ-जीवन आनन्द और क्रीड़ामय होते हुए भी उसमें अतिथियों का विशेष समादर होता था। गुरुजनों की पूजा "पाद" और "अर्घ्य" से की जाती थी[११७]। गुरु के समीप पहुँचकर हाथ जोड़ कर, शिर झुकाकर और अधोमुख होकर प्रणाम करने की प्रथा थी[११८]। लोग शिरोवेष्ट (पगड़ी) को उतार कर महान पुरुषों को प्रणाम करते थे[११९]। अतिथि के लिए आदर सूचक शब्द 'भगवन्'[१२०] का प्रयोग किया जाता था।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अतिथि-सत्कार का महत्व उत्तर वैदिक काल में इतना बढ़ गया था, कि उसे 'पंच महायज्ञों'[१२१] में स्थान दिया गया। अश्वघोष के समय में मुनि और महात्माओं के आगे राजा भी नत मस्तक होते थे। मुनियों के समीप पहुँचकर राजा लोग उनसे साम्य स्वास्थ्य[१२२] के विषय में पूछकर उनके समीप ही नग्न भूमि पर या शिलापट्ट पर (शिलातले) बैठ जाते थे[१२३]। बुद्ध चरित में राजा बिम्बिसार[१२४] तथा राजा प्रसेनजित[१२५] ने महामानव बुद्ध के समीप पहुँचकर यही आचरण किया गया था।

संस्कार

भारतवर्ष में संस्कारों का महत्व प्राचीन काल से रहा है और इनका समाज के साथ गहरा सम्बन्ध भी है। ये जन्म से लेकर मृत्यु तक निर्धारित कर दिये गये हैं। अश्वघोष के समय में प्रचलित संस्कारों का ज्ञान उस कवि के काव्यों से प्राप्त होता है। तत्कालीन प्रमुख संस्कार निम्नलिखित हैं—

गर्भाधान—यह प्रथम संस्कार था जिसमें स्त्री-पुरुष का समागम आवश्यक था। कवि ने राजा शुद्धोदन द्वारा[१२६] गर्भाधान संस्कार की पूर्ति के लिए अपनी रानी महामाया[१२७] के साथ समागम का उल्लेख किया है जिसके फलस्वरूप निष्पाप रानी गर्भवती हुई थी[१२८]।

पुंसवन—गर्भाधान के तृतीय मास के पश्चात् यह संस्कार सम्पन्न किया जाता था। इसमें देवताओं को प्रसन्न करने के लिए व्रत रखा जाता था, जिनके आर्शीवाद से पुत्र का जन्म हो। इसी संस्कार को सम्पन्न करने के लिए मायादेवी ने अपने गर्भ में स्ववंश की 'श्री' को धारण करने पर, श्रम-शोक और माया से मुक्त तथा विशुद्ध होकर, पावन वन में, पदार्पण किया था[१२९]। समय की पूर्ति होने पर व्रत से पवित्र हुई रानी के पार्श्व से लोक-हित के लिए पुष्य नक्षत्र में पुत्र का जन्म हुआ[१३०]।

नामकरण—जन्म से दस दिन पूरे हो जाने पर प्रसन्नतापूर्वक पुत्र के परम कल्याण के लिए, जप, होम और मंगल कर्म आदि के साथ देवयज्ञ किये जाते थे[१३१]। इसी दिन नामकरण संस्कार सम्पन्न होता था। मनु ने जन्म से दसवें या बारहवें दिन पुनीति तिथि, शुभ मूहूर्त और गुणयुक्त नक्षत्र में नामकरण करने का विधान किया है[१३२]। नवजात शिशु के गुण-दोष ऋषि-मुनियों, ज्योतिषियों और विप्रो से पूछे जाते थे। उन्हीं गुण-दोषों के अनुरूप ही नामकरण किया जाता था। कुमार सिद्धार्थ को 'सर्वार्थसिद्ध' इसलिए कहा गया था क्योंकि उनकी उत्पत्ति से राजकुल संपत्ति तथा अर्थों

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

से आपूरित हो गया था[१३३]। 'सेनाक' का यह नामकरण उसके बल और शक्ति के कारण हुआ था[१३४]।

विवाह

विवाह-संस्कार जीवन का सबसे महत्वपूर्व संस्कार था, क्योंकि यह संस्कार समाज की वृद्धि में सहायक था। कवि अश्वघोष ने राजकुमार सिद्धार्थ (सवार्थसिद्ध) और यशोधरा के विवाह-संस्कार का उल्लेख किया है[१३५]।

अनुलोम विवाह—अनुलोम विवाह में पति उच्च कुल का और पत्नी निम्न कुल की होती थी। सौन्दरनन्द (सर्ग ७) में कवि ने ऐसे अनेक विवाहों का उल्लेख किया है, जो प्राचीन काल में हुए थे। इनमें से कुछ का ऋषियों से भी सम्बन्ध था। जैसे मुनि वशिष्ट ने चाण्डाल जाति की बालिका 'अक्षमाला' के साथ सम्भोग कर सूर्य के समान तेजस्वी पुत्र "कपि जलाद" को उत्पन्न किया था[१३६]। मुनि पराशर ने मछुए की पुत्री काली (मछली से उत्पन्न) से विवाह किया था और वेदों का विभाजन करने वाले द्वैपायन (व्यास) को जन्म दिया था[१३७]। द्वैपायन ने काशी में वेश्या के साथ रमण किया था जिसने अपने नूपुर वाले पैरों से उन्हें ढकेल दिया था[१३८]।

प्रतिलोम विवाह—इस प्रकार में पति निम्न वर्ण का और पत्नी उच्च वर्ण की होती थी। ऐसे विवाहों के अनेक उदाहरण अश्वघोष के काव्यों में मिलते हैं। उदाहरण के लिए सेनजित की पुत्री ने चाण्डाल के साथ तथा कुमुदवती ने मछुवे के साथ विवाह किया था[१३९]।

बहुविवाह—अश्वघोष के समय में बहु विवाह की प्रथा कदाचित वर्जित न थी, क्योंकि कुषाण कालीन प्राप्त साधनों में चार प्रकार की नारियों का उल्लेख मिलता है, जो इस प्रकार हैं—

धर्मपत्नी
भार्या (भारिया)[१४०]
कुटुम्बिनी (कुटीबिनि)[१४१]
सहचरी (सहचरि)

इस काल के दान सम्बन्धी समस्त अभिलेखों में आधे से भी अधिक में कुटुम्बिनी स्त्रियों का उल्लेख है। धर्मपत्नी के नामोल्लेख की संख्या उससे कम है। समस्त लेखों में एक बार भार्या[१४२] का और एक बार सहचरी[१४३] का उल्लेख है। संस्कृत शब्दकोष के अनुसार धर्मपत्नी का तात्पर्य वैधानिक

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

पत्नी[१४४] और भार्या का पत्नी[१४५] तथा कुटुम्बिनी का गृह-स्वामिनी[१४६] है। बूलर महोदय ने इन अभिलेखों का अनुवाद करते समय धर्म-पत्नी को प्रथम पत्नी, कुटुम्बिनी को गृह पत्नी और भार्या को पत्नी बतलाया है, परन्तु सहचरी का आपने अनुवाद नहीं किया। सहचरी आधुनिक हिन्दी शब्द "सहेली" है, जिसका तात्पर्य नारी-साथिनी है।[१४७] पतंजलि ने भार्या[१४८] का उल्लेख वैधानिक विवाहिता पत्नी के अर्थ में ही किया है, परन्तु उसे क्षत्रिय से विवाहिता बतलाया है।[१४९] कभी-कभी सह-पत्नियों को भी भार्या कहा जाता था।[१५०] अश्वघोष के समय में भी वैधानिक विवाहिता पत्नी को भार्या कहा जाता था।[१५१]

विवाह-संस्कार बड़ी धूमधाम से मनाया जाता था। विवाह में "बारात" जाती थी। बारात का मुख्य उत्सव अगवानी होता था जिसमें स्त्रियां "वर" की अगवानी करती थीं।[१५२] नव विवाहिता बधू लज्जाशीला होती थीं। लज्जा के लिए उस समय किसी न किसी रूप में पर्दा-प्रथा का प्रचलन अवश्य था। बुद्ध को देखने के लिए शाक्य स्त्रियां अपने पतियों से आज्ञा पाकर भी घरों से ही देख सकीं थीं।[१५३]

मृत संस्कार—यह मानव जीवन का अन्तिम संस्कार था। प्राचीनकाल में मृतक को जला देने की प्रथा को अपनाया गया था, परन्तु मुर्दों को गाड़ने तथा वहाने की प्रथा भी वर्जित नहीं थी। मृत शरीर को वस्त्र से ढका तथा मालाओं से सजाया जाता था, और उसे सुगन्धित तेलों से सुगन्धित किया जाता था।[१५४]शव को कपड़े से लपेटकर[१५५] दाहस्थान को ले जाया जाता था, जिसके साथ कुछ व्यक्ति स्वर्ण मण्डित श्वेत चंवर डुलाते चलते थे।[१५६]

सुगन्धित वल्कलों, पत्तों, अगुरु, चन्दन तथा एलगज की चिता बनाई जाती थी, जिस पर मृत शरीर को रखा जाता था।[१५७] शव को जलाने के लिए घृत का प्रयोग किया जाता था।[१५८] बौद्ध लोगों की चिता "चैत्य" के निकट बनाई जाती थी।[१५९] दाह के पश्चात् अवशिष्ट अस्थियों को किसी पात्र में रखकर उन पर स्तूप का निर्माण कर दिया जाता था। तथागत भगवान बुद्ध की अस्थियों को विभाजित कर उन पर दस स्तूपों का निर्माण किया गया था जो उपमा में श्वेत पर्वत के समान थे।[१६०]

दाह-कर्म के पश्चात् शव के साथ गए सभी व्यक्ति स्नान करते थे, जिसे "मृतस्नान" कहा जाता था।[१६१] इस स्नान के बाद ही लोग नगर में प्रवेश करते ते। मृतक प्राणी के घर के लोग क्रन्दन कर, गुणों का स्मरण कर, तथा

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

भोजन आदि ग्रहण न करके शोक प्रकट करते थे। इसका सुन्दर चित्र बुद्ध चरित[१६२] में मिलता है।

दीक्षा-संस्कार

बौद्धाचार्य अश्वघोष का युग बौद्धधर्म के पुनरुत्थान का युग था। इसलिए उस युग पुरुष की कृतियों में बौद्ध धर्म की दीक्षा-पद्धति का उल्लिखित होना अनिवार्य ही था। तथागत बुद्ध द्वारा नन्द की दीक्षा का उल्लेख करके कवि ने सामयिक दीक्षा पद्धति का दिग्दर्शन कराया है। दीक्षा-योग्य पात्र, पात्र की स्वीकृति, दीक्षा के लिए स्थान तथा केश-मुण्डन, व काषाय-धारण आदि संस्कारों का उल्लेख "सौन्दरनन्द" में मिलता है।

दीक्षा-योग्य-पात्र—बौद्ध दीक्षा देने के पूर्व पात्र की उपयुक्तता पर विचार किया जाता था। धर्माभिलाषी पात्र (पात्रभूत) को ही शान्ति के लिए प्रव्रजित किया जाता था।

पात्र की स्वीकृति—दीक्षा के पूर्व पात्र की स्वीकृति अनिवार्य थी। नन्द को दीक्षा देने के लिए महामानव बुद्ध ने जब आनन्द को आदेश दिया,[१६३] उस समय आनन्द के समीप आकर नन्द ने कहा "मैं प्रव्रजित न होऊँगा।[१६४] यह सुनकर महामुनि ने पुनः समझाना प्रारम्भ किया।[१६५] पूरे सर्ग में[१६६] समझाने के पश्चात् नन्द ने कहा "आपकी आज्ञानुसार मैं आपके वचनों का पूरा-पूरा पालन करूँगा"।[१६७] स्वीकृति प्राप्त कर लेने पर ही नन्द को दीक्षा प्रदान की गई थी।

दीक्षा-स्थल—इस समय की भाँति उस युग में भी दीक्षा देने का स्थान बुद्ध विहार ही थे, जिन्हें विद्या-विहार कहा गया है।[१६८]

दीक्षा—दीक्षा बौद्ध भिक्षु ही दे सकते थे। नन्द ने भिक्षु आनन्द से दीक्षा ग्रहण की थी। अनुमति प्राप्त कर लेने के पश्चात् सिर के केश काटे जाते थे।[१६९] स्वयं बुद्ध ने जब तप के लिए महाभिनिष्क्रमण किया था उस समय चित्र विचित्र मुकुट सहित केशों को तलवार से काटा था।[१७०] केशविच्छेदन के पश्चात् दीक्षार्थी को भिक्षुओं का "काषाय" वस्त्र पहनाया जाता था।[१७१] राजकुमार सिद्धार्थ ने भिक्षु बनने के लिए एक व्याध से काषाय वस्त्र मांग कर धारण किए थे।[१७२] काषाय वस्त्र धारण कर नव दीक्षित भिक्षु, गुरु को प्रणाम करता था।[१७३] तत्पश्चात् गुरु उसे उपदेश और आदेश देते थे।

इस प्रकार बौद्ध-दीक्षा-पद्धति का वर्णन करके अश्वघोष ने युग-परम्परा का निर्वाह किया है।

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

भोजन और पेय

शरीर के अस्तित्व को स्थिर रखने के लिए भोजन आवश्यक है।[174] भोजन ही प्राणियों का जीवनाधार है,[175] जिसके बिना प्राणी जीवित नहीं रह सकता।[176] कवि श्रेष्ठ अश्वघोष के जीवनकाल में भी भोजन पर विशेष ध्यान दिया जाता था। आहार के विभिन्न भोज्य-पदार्थों का मनुष्य आस्वादन करता था। अश्वघोष के काव्यों में चार प्रकार के आहार-पदार्थों का उल्लेख मिलता है—

१—शाक
२—मांस
३—फल
४—पेय

इन्हीं के आधार पर भोजन करने वालों को इंगित किया जाता था, यथा शाकाहारी, मांसाहारी, फलाहारी तथा जलाहारी। अश्वघोष के काव्यों के अनुसार प्रत्येक आहार की हल्की झलक निम्न प्रकार है:—

शाकाहार—अश्वघोष के समय में, चावल शाकाहारियों का मुख्य भोजन था, जिसे "शाली"[177] कहते थे। जंगलों में स्वतः उत्पन्न धान का चावल जिसे "नीवार"[178] कहते थे, तपस्वियों का प्रमुख भोजन था, जिसे खाकर वे सन्तोष पाते थे। घी,[179] दूध,[180] तथा गन्ने (इक्षु)[181] के रस से बनी मिठाई का भी प्रयोग आहार में किया जाता था। शूद्रक[182] और कालिदास[183] के समय में भी ये सभी पदार्थ आहार के प्रयोग में आते थे। दाल, चावल, बाजरा, दूध, घी, मिठाई और शकर भारतीयों का प्राचीन काल से भोजन रहा है।[184] चावल खाने का प्रचार इतना बढ़ गया था कि लेखकों को उसके पकाने की विधियों का उल्लेख करना पड़ा।[185]

अश्वघोष के काव्यों में प्राप्त भोजन सामग्री की पुष्टि तत्कालीन पुरातात्विक सामग्री से भी होती है। कुषाण कालीन मथुरा के एक लेख[186] में सम्पूर्ण भोजन सामग्री का उल्लेख है। यह भोजन प्रतिदिन भूखे और प्यासे लोगों को दिया जाता था। इसमें निम्नलिखित सामग्री सम्मिलित होती थी—

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

३ आढ़क सत्तू (शक्तु-शकतुक)
१ प्रस्थ नमक (लवण)
१ प्रस्थ शाक
३ गट्ठा हरी सब्जी (हरित कलाप)

तीग गट्ठा हरित कलाप में विभिन्न शब्जियां सम्मिलित होती थीं।

मांसाहार—अनादिकाल से मांस, आहारों में प्रमुख रहा है। यद्यपि बौद्ध धर्म के अहिंसा मूलक प्रचार से मांसाहार को पर्याप्त अवरोध पहुँचा, परन्तु सद्यः उसका प्रयोग रुक न सका। अश्वघोष के काव्यों से भी उस समय मांसाहार की पुष्टि होती है। पशु-मांस में अधिकतर मृग-मांस खाने के काम में लाया जाता था। मांस प्राप्ति के लिए चपल मृगों को गीत की मधुर ध्वनि से आकृष्ट कर पकड़ा जाता था।[१८७] सम्राट् अशोक के समय में भी मृग का मांस खाया जाता था, परन्तु बौद्ध धर्मावलम्बी होने पर उसने उसके निषेध का प्रयास किया।[१८८] पशुओं के अतिरिक्त पक्षियों से भी मांस प्राप्त किया जाता था, जिसके लिए उन्हें जाल में फँसा कर पकड़ा जाता था।[१८९] यद्यपि कवि के काव्यों में, "मयूर"[१९०] पक्षी का उल्लेख अनेक बार हुआ है परन्तु उसका मांस खाया जाता था अथवा नही यह बात संदिग्ध है।

सम्राट अशोक के समय में इस पक्षी का माँस खाया जाता था यद्यपि सम्राट् ने इस पक्षी को भोजन हेतु मारने का निषेध कर दिया था।[१९१] माँस के लिए मछलियों का भी शिकार किया जाता था। मछुवे लोग मछलियों को जाल की सहायता से तालाबों और नदियों से पकड़ते थे[१९२]। मछलियाँ बाजारों में बेची जाती थीं, ताकि अन्य लोग भी आसानी से उन्हें प्राप्त कर सकें। श्रावस्ती में मछलियों का बाजार प्रवेश द्वार पर लगता था[१९३]।

फलाहार—अश्वघोष के समय में ऋषि-मुनियों का आधिक्य था, जिनका मुख्य आहार कन्द-मूल फल-फूल और जल था[१९४]। इसीलिए उन्हें 'मूल-फलाम्बुभक्षी' कहा गया है। फल वन्य वृक्षों से प्राप्त होते थे[१९५]। फल-फूल आश्रमों की शोभा थे[१९६]। वन्य चावल भी ऋषियों का प्रमुख आहार था, जिसे खाकर वे सन्तोष प्राप्त करते थे और स्वास्थ्य लाभ कर, शान्तिमय जीवन बिताते थे[१९७]।

पेय

भोजन के साथ-साथ पेय आवश्यक है। इसीलिए कवि ने भोजन तथा पेय दोनों को महत्व दिया है। अश्वघोष के काव्यों में निम्नांकित पेय पदार्थों का उल्लेख हुआ है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

सोमरस—सौन्दर नन्द में सोमरस का उल्लेख अनेक बार हुआ है। निरन्तर भूरि-भूरि दान देकर ब्राह्मणों से सोमरस तैयार करवाया जाता था[१९८]। सोमरस पान से समुचित फल प्राप्त करने के लिए उसे निश्चित समय पर पीना आवश्यक था[१९९]। गुरु जनों को पिलाने के लिए भी समय का विधान था[२००]।

'ऋग्वेद' में सोमरस को "अमरत्व प्रदान करने वाला" रस कहा गया है। सोमरस पीकर लोग मस्त होकर गाते थे कि 'हमने सोमरस पान किया और अमर हो गए तथा स्वर्ग प्राप्त कर हमने देवताओं को जान लिया[२०१]।' महापंडित राहुल सांस्कृत्यायन ने सोमरस का उल्लेख करते हुए कहा है कि संध्या के समय नृत्य और पान-गोष्ठी तथा आर्यों के स्वच्छन्द और सुखी जीवन का सोमरस एक अभिन्न अंग था। उस समय घड़ों सोमरस की आवश्यकता पड़ती थी। यह 'सोमरस थी वस्तुतः भांग, जिसे पीकर लोग मदमस्त हो गाते थे'। 'तिब्बत में भाँग को आज भी सोम राजा' कहते हैं और पठान लोग उसे 'ओम' कहते हैं, जो सोम का होम होकर बना है[२०२]। सोमरस तैयार करने में दूध और मधु की आवश्यकता पड़ती थी।

सुरा—समाज में सोमरस पान के साथ-साथ सुरापान का भी प्रचलन था, जिसे पीकर लोग मदयुक्त हो रात-दिन अचेत पड़े रहते थे[२०३]। मद्यपान के कारण ही 'अन्धक-वृष्णी'[२०४] लोगों का विनाश हुआ था। ऋग्वेद में सुरापान अहितकारी बतलाया गया है और उसकी गणना क्रोध, जुआ तथा अज्ञान के साथ अनिष्टोत्पादक वस्तु के रूप में की गई है[२०५]।

दुग्ध—अश्वघोष के समय में गायों[२०६] का बाहुल्य था, जिनसे प्राप्त दूध पिया जाता था। गायें हृष्ट-पुष्ट और साध्वी तथा निर्मल होती थीं। वे उत्तम तथा अधिक दूध देने वाली होती थीं, उनके बछड़े ऊँचे होते थे[२०७]।

मधु (शहद)—भोज्य पदार्थों को मीठा करने के लिए शहद प्रायः प्रयोग किया जाता था। कड़ुवी औषधियों में भी शहद मिलाया जाता था। शहद मधुमक्खियों से प्राप्त होता था, जो किसी ऊँचे वृक्ष पर अपना छत्ता बनाती थीं। उनसे मधु प्राप्त करना आसान कार्य नहीं होता था। एक ओर उनके काटने का डर और दूसरी ओर ऊँचे से गिरने का भय रहता था, परन्तु 'मधु' के लोभ से मनुष्य उन आपत्तियों को नहीं देखता था[२०८]।

इक्षु-रस—गन्ने (इक्षु) का रस तथा उसकी बनी मिठाई लोग पीते तथा खाते थे। गन्ने का रस विशेष यंत्र द्वारा निचोड़ा जाता था और शेष अंश सुखाकर जलाने के कार्य में आता था[२०९]। कालिदास के समय में भी इक्षु-पान[२१०] होता था।

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वस्त्र—आभूषण और शृंगार

बढ़ती हुई सभ्यता के साथ-साथ मानव को अपने वस्त्रों में परिवर्तन करना पड़ा। वल्कल के अभद्र वस्त्रों के स्थान पर विभिन्न रंगों के ऊनी, सूती और रेशमी वस्त्र प्रयोग में लाए गये। अश्वघोष के समय भारत में कुषाण राजाओं का आधिपत्य था, जिससे वेशभूषा पर विदेशी प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था। कवि की कृतियों में स्त्री और पुरुषों के वस्त्रों का अलग-अलग उल्लेख मिलता है।

पुरुषों के वस्त्र

धोती भारतीयों का मुख्य वस्त्र रहा है। इसे अश्वघोष के समय में 'अधोवस्त्र' कहा जाता था। यह कटि से नीचे घुटनों तक पहना जाता था। दूसरा वस्त्र 'ऊर्ध्व वस्त्र' होता था, जिसे 'उत्तरीय' आदि कहते थे। यह कन्धे पर से शरीर पर डाला जाता था[२११]। कुषाण लोगों के प्रभाव के कारण कुछ लोग लम्बा कोट, पाजामा और सिर पर ऊँची-ऊँची टोपी पहनते थे[२१२]। वस्त्र को प्रायः 'अम्बर'[२१३] कहा जाता था। सिर पर टोपी के अतिरिक्त शिरोवेष्टि[२१४] (पगड़ी) भी बाँधते थे। जन साधारण, बौद्ध-भिक्षुओं तथा ब्राह्मण ऋषि और मुनियों के वस्त्रों में भिन्नता थी। प्रत्येक का संक्षिप्त उल्लेख अश्वघोष के काव्यों में निम्नलिखित रूप में मिलता है, जिसकी पुष्टि पुरातात्विक साक्ष्यों से भी होती है।

सामान्य जनों के वस्त्र—सामान्य लोग अनेक रंगीय वस्त्रों को पसन्द करते थे। पुरुष अधिकतर श्वेत (शुक्ल)[२१५] रंग के वस्त्रों को पहनते थे। सुनहले[२१६] और पीले[२१७] रंग के वस्त्रों का भी प्रयोग होता था। ऋषि और मुनियों से मिलन हेतु जाने में लोग मयूर पुच्छ के समान चमकीले तथा पीत वस्त्त धारण करते थे[२१८]। तथागत के दर्शन के लिए लिच्छवी लोग ऐसे ही रंगीन वस्त्र धारण करके आये थे। वस्त्रों के पहनने में साम्य रक्खा जाता था। एक पीले वस्त्र के साथ उसके सभी वस्त्र पीले ही होते थे। इसी प्रकार अन्य व्यक्ति के अन्य रंग के ही पूरे वस्त्र होते थे[२१९]।

साहित्यिक सामग्री की पुष्टि तत्कालीन पुरातात्विक प्रमाणों से भी होती है। मथुरा संग्रहालय में एक मूर्ति है, जो धोती पहने है और कमर के

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

चारों ओर एक दुपट्टा लपेटे हुए है[२२०]। बृटिश संग्रहालय में एक मूर्ति है, जिस पर कुषाण राजाओं का अभिलेख उत्कीर्णित है। मूर्ति में आसन (तिपाई) पर बैठी हुई स्त्री के सम्मुख एक खड़े हुए पुरुष की मूर्ति है, जो हार, पहुँची तथा 'कर्ण शोभन्' पहने हुए है। उसकी धोती घुटनों के नीचे तक है[२२१]। सर जान मार्शल ने सांची के मूर्तियुक्त एक पट्ट का उल्लेख किया है, जिसमें दानी स्त्री-पुरुष तथा बच्चे सभी पश्चिमोत्तर भारत की वेश-भूषा पहने हैं। पुरुष बूट पहने हैं और एक लम्बा वस्त्र पहने हैं जो पेटी से कसा हुआ है[२२२]।

बौद्ध-भिक्षुओं के वस्त्र—बौद्ध भिक्षु श्वेत या अन्य रंगीय वस्त्रों के स्थान पर "काषाय"[२२३] वस्त्र धारण करते थे। सौन्दरनन्द में नन्द का स्पष्ट उल्लेख है। जिसने अनेक रंगीय वस्त्रों को त्याग कर उनके स्थान पर सुनहले रंग के काषाय वस्त्र धारण कर, अपने गुरु भगवान बुद्ध को प्रणाम किया था।[२२४] काषाय वस्त्र को कल्याणकारी माना जाता था।[२२५]

अन्य तपस्वियों के वस्त्र—ऋषि-मुनि आश्रमों में रहकर तप करते थे। कपिल मुनि गौतम ने अपनी तपस्या के लिए हिमालय के पवित्र अंचल में अपना आश्रम बनाया था।[२२६] ये ऋषि और मुनि बल्कलों तथा श्याम मृग चर्म के वस्त्र धारण करते थे।[२२७] इसीलिए इन्हें "अजिन वल्कल धारी"[२२८] कहा गया है। लंगोटी (कौपीन)[२२९] उनका मुख्य अधोवस्त्र था।

स्त्रियों के वस्त्र

अश्वघोष के समय में नारी समाज में अनेक रंगीय वस्त्रों का प्रचलन था। उनका साधारण पहनावा साड़ी और चोली था।[२३०] कमल के समान लाल वस्त्र[२३१] समृद्धिशाली गृहों की नारियों के वस्त्र थे। घरों में सामान्य रूप से श्वेत वस्त्रों[२३२] का प्रयोग होता था। स्त्रियाँ अपने शरीर की कान्ति बढ़ाने के लिए महीन वस्त्रों का प्रयोग करती थीं। स्वर्णाभूषणों के साथ पीत वस्त्रों का प्रयोग होता था।[२३३] "गोप स्त्रियाँ"[२३४] अधिकतर नीले रंग के वस्त्र धारण करती थीं।[२३५]।

तत्कालीन पुरातात्विक सामग्री से भी स्त्री-वस्त्रों की पुष्टि होती है। मथुरा कला केन्द्र में अनेक प्रकार के स्त्री-वस्त्रों को दर्शाया गया है। एक स्त्री-समूह लम्बी बाहों वाला एक बस्त्र तथा पैरों तक लम्बा लहंगा पहने हैं। उनके पैरों में पदत्राण (जूते) भी हैं।[२३६] लखनऊ संग्रहालय[२३७] में तत्कालीन

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

एक स्त्री-प्रतिमा है, जो मस्तक पर आभूषण पहने हैं, और लम्बी चोली कसे है तथा अधोवस्त्र लंहगा पहने हैं। पूरी वेश-भूषा उच्चकोटि के सभ्य समाज की वेशभूषा दीख पड़ती है। बृटिश संग्रहालय[२३८] में कुषाण कालीन राजाओं के लेखयुक्त पट्ट पर एक स्त्री की (तिपाई पर) बैठी हुई मूर्ति है जो कौपीन तथा कटि सूत्र पहने है। मथुरा संग्रहालय[२३९] में एक स्त्री की मूर्ति है जिस पर हुविष्क का लेख उत्कीणिति है। यह स्त्री छोटा लंहगा पहने है, तथा बायें कन्धे पर से नीचे की ओर लटकता हुआ कोई अन्य वस्त्र है।

उपर्युक्त स्त्री-पुरुषों के वस्त्रों के अतिरिक्त अश्वघोष ने कुछ सामयिक वस्त्रों का भी उल्लेख किया है। आमोद-प्रमोद के समय के वस्त्रों[२४०] तथा शोककालीन वस्त्रों में अन्तर होता था। आमोद-प्रमोद कालीन वस्त्र सुगन्धि पूर्ण होते थे।[२४१] शोक कालीन वस्त्र वृक्षों के जीर्ण-शीर्ण पत्तों के समान पीले होते थे। प्रियाभिलाषी नन्द ने चिन्तित होकर ऐसे ही पीत वस्त्र धारण किए थे।[२४२]

आभूषण

अश्वघोष के समय में स्त्री और पुरुष दोनों ही आभूषणों का प्रयोग करते थे तथा दोनों ही शृंगार भी करते थे। स्त्री और पुरुषों के आभूषणों तथा शृंगारों में भिन्नता के कारण दोनों का अलग-अलग उल्लेख करना अनुपयुक्त न होगा।

पुरुषों के आभूषण—पुरुषों के मध्य मालाओं (स्रग) का प्रयोग होता था। मुकुट (मौली) आभूषण उच्च स्तर के लोगों तक ही सीमित था। यह आभूषण उच्च कुलीन स्त्रियाँ भी धारण करती थीं। आभूषणों से ही मनुष्य की आर्थिक स्थिति का पता चलता था। यदि कोई व्यक्ति भद्र वस्त्र और मुकुट धारण कर भिक्षाटन करता था तो वह परिहास का पात्र बनता था।[२४३] भुजाओं का मुख्याभूषण "केयूर"[२४४] था, जिसे भुजा पर बांधा जाता था। यह आभूषण अधिकतर रौप्य निर्मित होता था, जो तप्त सोने के तारों से मढ़ा होता था।[२४५] समृद्धिशाली परिवारों में "वैडूर्य"[२४६] मणि के भी "केयूर" पहने जाते थे। महाकवि "कालिदास"[२४७] के समय में भी मणिजटित केयूर, हार[२४८] और अंगूठी[२४९] (रत्नांगुलीय) पुरुषों के आभूषण थे। कानों में लोग कुंडल[२५०] पहनते थे। बृटिश संग्रहालय[२५१] में एक मूर्ति है, जिस पर सम्राट् "हुविष्क" का लेख उत्कीर्णिति है। मूर्ति में एक स्त्री और पुरुष को दिखाया गया है, जिसमें पुरुष हार और कुण्डल पहने है। यज्ञोपवीत का प्रयोग अलंकरण के लिए नहीं,

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वरन् धार्मिक बन्धन के कारण किया जाता था। पहाड़पुर (राजशाही, बंगाल) की खुदाई में प्राप्त, पुरुषों की मूर्तियां यज्ञोपवीत धारण किए हुए हैं।[२५२] चित्र-विचित्र मणियों और रत्नों के हारों[२५३] का भी पुरुष-समाज में प्रचलन था।

स्त्रियों के आभूषण—अश्वघोष के काव्यों में नारी-आभूषणों का भी पर्याप्त उल्लेख है। कर्णफूल कानों का आभूषण था। इसकी बनावट उल्टे कमल-पुष्प के समान होने के कारण इसे "कर्णोत्पल"[२५४] भी कहते थे। "ऋग्वेद" में इसे "कर्णशोभन"[२५५] कहा गया है। स्त्रियों के कानों का दूसरा आभूषण "कुण्डल"[२५६] था। गले में हार तथा माला (स्रग)[२५७] पहनी जाती थी। हार[२५८] बहुमूल्य मणियों के बनते थे। हाथों में स्त्रियाँ सोने के "कंकण"[२५९] पहनती थीं, और बाहों में केयूर बाँधती थीं। "यौक्त्र"[२६०] स्तनों का सौन्दर्य वर्द्धक आभूषण था। कमर का आभूषण "मेखला"[२६१] थी, जिसे "कांचीगुण"[२६२] भी कहा जाता था। पैरों का मुख्याभूषण "नूपुर"[२६३] था। स्त्रियों का अन्य आभूषण "मणिमुक्ता"[२६४] था, जो अंजन, अनुलेपन और मालाओं की भाँति सौन्दर्य-वर्द्धक माना जाता था।

शृंगार

शृंगार में अश्वघोष के काव्य केश-शृंगार और शारीरिक शृंगार पर प्रकाश डालते हैं। स्त्री और पुरुष दोनों ही केश रखते थे। लम्बे केश समूह को "जटा"[२६५] कहा जाता था, और यह शील का परिचायक माना जाता था।[२६६] बालों में सुगन्धित तेलों[२६७] का प्रयोग किया जाता था। वियोगावस्था में केशों का ध्यान नहीं रहता था, और केशों की लटे अव्यवस्थित हो जाती थीं।[२६८]

तत्कालीन पुरातात्विक सामग्री भी केश-प्रसाधन पर प्रकाश डालती है। लखनऊ के प्रादेशिक संग्रहालय[२६९] तथा मथुरा संग्रहालय[२७०] में दो चौखटे हैं, जिनमें अनेक कटे हुए शिला पट्ट हैं। प्रथम चौखटे में स्नान करने तथा बालों को साफ करने का दृश्य अंकित हैं। दूसरे चौखटे के दृश्य में एक पति और पत्नी का उत्कीर्णन है। पति पत्नी के बालों को चोटी-रूप में गूँथ रहा है। अन्य दृश्य में स्त्री पुरुष के हाथ में दर्पण दे रही है, क्योंकि वह केश-विन्यास और अंगराग करना चाहती है। बिल्कुल यही दृश्य सौन्दरनन्द में वर्णित है। "सुन्दरी" अपने पति नन्द के हाथ में दर्पण देकर कहती है, कि "जब तक मैं अपना अंगराग न कर लूँ तब तक तुम इसे (दर्पण को) मेरे सामने धारण करो।[२७१]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

कुषाण काल में एक सीधी रेखा (सीमंत) द्वारा बालों को दो भागों में विभक्त कर सँवारा जाता था। लखनऊ संग्रहालय में कुषाणकालीन एक पुरुष की मूर्ति है, जिसके मस्तक पर लघु सीमंत-रेखा (मांग)[२७२] है। केशों के अग्रभाग में एक वृत सा बनाया जाता था।[२७३] कभी-कभी यह वृत्त एक सीधी रेखा द्वारा विभक्त होता था और यही रेखा आगे से पीछे की ओर जाती थी।[२७४] शेष केशों को या तो चोटी रूप में गूँथ कर पीछे की ओर लटका लिया जाता था [२७५] अथवा पीछे गांठ रूप में बांध लिया जाता था। अन्य उदाहरणों में केश सँवारने का दूसरा रूप मिलता है, जिसमें केश सिर पर गांठ रूप में है, ऊपर मुकुट है और पीछे की ओर तागों का गुच्छा (झब्बा) लटक रहा है।[२७६] तृतीय प्रकार के केश-शृंगार सम्बन्धी उदाहरणों में केशों को नृत्य करते हुए मयूर पंखों के समान संवारा गया है।[२७७]

अन्य शारीरिक शृंगार में आलेपन आदि मुख्य था। स्त्री तथा पुरुष दोनों ही शरीर को विलेपन[२७८] इत्यादि से सुन्दर तथा सुशोभित रखने का प्रयास करते थे। शारीरिक शृंगार के लिए कुछ वस्तुएँ दूकानों से खरीदी जाती थीं, और कुछ स्वयं घर में तैयार कर ली जाती थीं। नन्द के घर में इसी उद्देश्य के लिए अनेक नारी सेविकायें थीं, जिनमें से कोई अंगलेप पीसती थी, कोई वस्त्रों को सुगन्धित करती थी, कोई सुगन्धपुर्ण पुष्पों की मालायें गूँथती थीं तथा अन्य स्वामी की क्रीडा के अनुरूप सज्जा को तैयार करती थीं[२७९]। अंगराग के अतिरिक्त शारीरिक शृंगार के अन्य उपकरण को "अनुलेपन"[२८०] कहा जाता था। कभी-कभी स्त्रियां सौंदर्य के लिए पत्रांगुलि[२८१] द्वारा पुरुषों की मूछों की तरह अपने मुख पर भी मूछों का अंकन करती थीं।[२८२] नेत्रों में अंजन [२८३] लगाने की प्रथा थी। पैरों का शृंगार "महावर"[२८४] था, परन्तु वियोगावस्था में इन वस्तुओं का प्रयोग नहीं किया जाता था।[२८५] लाल चन्दन (लोहित चन्दन)[२८६] भी शारीरिक शृंगार का एक उपकरण था। "दीघ नीकाय" [२८७] में भी माला, गन्ध, विलेपन और उबटन आदि शारीरिक शृंगार के प्रमुख उपकरण बताये गये हैं। इस प्रकार अश्वघोष के समय में उच्चस्तरीय शृंगार-सज्जा की प्रथा थी।

————

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

आमोद-प्रमोद

आमोद-प्रमोद सामाजिक जीवन में अत्यन्त आवश्यक है। अश्वघोष की कृतियों में आमोद-प्रमोद के अनेक साधन मिलते हैं। कुषाणयुग में 'समाज' और उत्सवों, पशु-पक्षियों की प्रतियोगिताओं, संगीत-वादन और नृत्य तथा आखेट आदि आमोद-प्रमोद के साधनों का उल्लेख मिलता है।

समाज और उत्सव—समाज और उत्सव आमोद-प्रमोद के प्राचीन साधन हैं। यद्यपि सम्राट् अशोक ने इन समाजों में होती हुई हिंसा को देखकर उन्हें रोकने का प्रयत्न किया था[२८८], परन्तु वे सद्यः रुक न सके और अश्वघोष के समय तक आमोद-प्रमोद के साधन बने रहे।[२८९] इन समाजों में नृत्य, गीत, बाजा, नाटक, लीला, ताली, ताल देना, घड़े पर तबला बजाना, लौह-गोलियों का खेल, बांस का खेल, तथा पशु-पक्षियों की प्रतियोगितायें होती थीं।[२९०]

पशु-पक्षियों की प्रतियोगिताएं—अश्वघोष के समय में "मेष" प्रतियोगिता अधिक होती थी। प्रतियोगिता में "मेष" पीछे हट-हट कर चोट करते थे।[२९१] कवि के काव्यों में प्रतियोगिता सम्बन्धी पशुओं में सूकर अश्व, ऊँट (ऊष्ट्र), हाथी (द्विरद) आदि का उल्लेख मिलता है। हस्ति-युद्ध महिष-युद्ध, बृषभ-युद्ध, तथा वकरों के युद्ध मुख्य रूप में हुआ करते थे।[२९२]

पशुओं की भांति पक्षियों की भी प्रतियोगिताएं होती थीं। कुछ पक्षी पिजड़े (पंजर) [२९३] में पाले जाते थे, जिन्हें उड़ जाने के भय से पैर में तागा बांधकर उड़ाया जाता था।[२९४] प्रतियोगिता के लिए कबूतर (पारावत)[२९५] पाले जाते थे। ब्रह्मजाल सुत्त [२९६] (दीघनिकाय के अन्तर्गत) में मुर्गों तथा बतखों के भी लड़ाने का उल्लेख है। यद्यपि अश्वघोष के काव्यों में मयूरों (शिखिन) [२९७] का उल्लेख है, परन्तु उनकी प्रतियोगिता का उल्लेख नहीं मिलता।

संगीत, वादन और नृत्य—संगीत वाद्ययंत्र और नृत्य का पारस्परिक सम्बन्ध है। अश्वघोष के समय में संगीत स्वतन्त्रतापूर्वक उच्च (उदात्त) [२९८] स्वर में तथा कभी कभी अभिनयात्मक लय में मधुर स्वर से गाया जाता था।[२९९] सामूहिक वाद्य-यंत्रों को "वाद्य हेतु" कहा जाता था, जिसमें "मृदंग", "बन्शी", "झाँझ", "मंजीरा", आते थे।[३००] अन्य वाद्य-यंत्रों में "पणव"[३०१],

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

"दुन्दुभी[३०२]", "वीणा[३०३]", और "तूर्य[३०४]", प्रमुख थे। संगीत और वादन के साथ नृत्य भी आमोद-प्रमोद का साधन था। स्त्रियां नृत्य के द्वारा भांति-भाँति के हाव-भाव प्रकट करती थीं जिनके कारण कभी कभी उनके हार तक टूट जाते थे।[३०५] नृत्य, गीत, बाजा, ताली, ताल और घड़े पर तबला बजाना तथा गीत-मण्डली का उल्लेख अन्य बौद्ध ग्रंथों में [३०६] भी मिलता हैं।

पुरातात्विक प्रमाण भी अश्वघोष के समय के आमोद-प्रमोदों के साधनों की पुष्टि करते हैं। मथुरा के एक अभिलेख[३०७] में किसी अभिनेता-दल द्वारा प्रदत्त दान का उल्लेख है। अभिनेता को "शैलालक" कहा गया है। अभिलेख से यह भी प्रतीत होता है, कि उस समय अभिनय-कार्य कुछ परिवारों का व्यवसाय सा बन गया था। "चान्दक बन्धुओं" का परिवार इस कार्य के लिए बहुत प्रसिद्ध था।

मृगया और विहार : मृगया और विहार भी आमोद-प्रमोद के साधन थे। बुद्ध चरित में राजकुमार सिद्धार्थ के विहार[३०८] का उल्लेख करके कवि ने इस विषय की पुष्टि की है।

दोला और खिलौने : स्त्री और पुरुष दोनों ही "झूला" झूलकर आनन्द मनाते थे। झूला को "दोला" कहा जाता था, जो सदा ही इधर उधर आया जाया करता था, जिससे झूलने वालों का मन स्थिर नहीं रहता था।[३०९] खिलौने छोटे-छोटे बच्चों के आमोद-प्रमोद के साधन थे। उस समय चन्दन के छोटे खिलौने प्रचलित थे। बच्चों को औषधियों से युक्त रत्न-हार, मृगयुक्त छोटे-छोटे स्वर्ण रथ, वयस के अनुरूप भूषण, सोने के छोटे-छोटे हाथी, मृग और घोड़े, गोवत्स युक्त रथ तथा सोने चांदी की रंग-बिरंगी पुतलियां, खेलने को दी जाती थीं। [३१०]

संक्षेप में उस समय आमोद-प्रमोद के साधनों में समाज और उत्सव, पशुपक्षियों की प्रतियोगिताएं, संगीत, वादन और नृत्य, मृगया तथा विहार और दोला तथा खिलौने प्रमुख थे।

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

सामाजिक कुरीतियाँ

अश्वघोष के समय में लोग तंत्र-मंत्रों[311] और भूत-प्रेतों में भी विश्वास करते थे। समाज में चोरी, जुआ मद्यपान, प्रचलित था। स्त्रियों में वेश्यावृत्ति, विधवा-प्रथा, सती-प्रथा, पर्दा-प्रथा की दूषित कुरीतियां फैली हुई थीं। उस समय की मुख्य कुरीतियों को निम्न प्रकार से प्रस्तुत किया जा सकता है।

चोरी, जुआ और मद्यपान—तीनों कुरीतियां अश्वघोष के सयय में भी प्रचलित थीं। "अन्धक-वृष्णी[312] लोगों का विनाश मद्यपान के ही कारण हुआ था। कौरवों के विनाश का कारण "द्यूत" ही था।[313] चोरों से तो लोग इतने भयभीत थे, कि रात्रि में उनके डर के कारण अपने प्रिय जनों के लिए भी दरवाजा नहीं खोलते थे।[314] जुआ के खेल में बाजियां लगती थीं। जुएं के प्रकारों में अष्टपद, दसपद, आकाश, परिहार, पथ, खल्कि, सलाक हस्त, अक्ष, पंगचिर, बंकक, मोक्खचिक, चिलिंगुलिक और पत्ताल्हक प्रचलित थे।[315]

वेश्यावृत्ति—यह प्राचीन कुप्रवृत्ति अश्वघोष के समय में भी प्रचलित थी, उनके अलग मुहल्ले भी होते थे जिन्हें "गणिका बीथि"[316] कहा जाता था। उनका ध्येय लोगों से धन ऐंठना होता था। वेश्याएं मनुष्यों को प्रेमपास में जकड़ कर उनका धन हरण करती थीं। आये हुए धनवान लोगों की धन के लिए वे हत्या तक कर देती थीं, और उनकी लाशें अपने प्रेमियों से फेंकवा देती थीं[317]। वे धनवानों के साथ तृष्णापूर्ण और धनहीनों के साथ अपमानजनक व्यवहार करती थीं। धनप्राप्ति के लिए वे गुणहीनों के साथ भी पुत्र के समान और गुणवानों के साथ स्वामी के समान व्यवहार करती थीं[318]। परन्तु अश्वघोष ने ऐसी प्रथा का विरोध किया है। उनके अनुसार ऐसी स्त्रियों का सम्पर्क विशैली लताओं के स्पर्श, सर्पयुक्त गुहा में निवास तथा खुली तीक्ष्ण तलवार की धार की पकड़ के परिणामों के समान दुखदाई है।[319] स्त्रियों को विघ्न (स्त्री विघ्न)[320] कहा गया है। उन्हें स्वजन-स्वजन में मित्र-मित्र में फूट उत्पन्न करने वाला माध्यम भी बताया गया है।[321]

विधवा प्रथा—अश्वघोष के समय में विधवा नारी समाज की दृष्टि में उपेक्षिता थी। पति रहते जो स्त्री शोभावान कही जातीं थी, विधवा होने

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

पर वही शोभा विहीन कहलाती थी। आभूषण आदि अलंकरण धारण करने का समाज ने उसे अधिकार नहीं दिया था। निरन्तर अश्रुजल प्रवाह के कारण उसके नेत्र मलीन और लाल होते रहते थे।[१२२]

सती-प्रथा—अश्वघोष के समय में सती-प्रथा भी प्रचलित रही थी। स्त्री, पति की मृत्यु होने पर उसके शव के साथ ही चिता में जलकर आत्मसमर्पण कर देती थी।[१२३] विष्णु[१२४] और वृहस्पति[१२५] ने भी सती होने का उल्लेख किया हैं। वात्स्यायन[१२६] ने सती होने के लिए "अनुमरण" तथा चकलादार[१२७] ने "सहमरण" शब्दों का प्रयोग किया है।

पर्दा-प्रथा—सौन्दरनन्द और "बुद्ध चरित" के युग में पर्दा-प्रथा भी प्रचलित थी। दोनों ही काव्यों में इस प्रथा का उल्लेख हुआ है। सौन्दरनन्द में प्रासादों के अन्दर स्त्रियों के रहने के लिए "गर्भगृह" का उल्लेख है। जब तथागत के दर्शन के लिए नन्द जा रहा था तब ऐसे ही "गर्भगृह" से "सुन्दरी" अपने पति को अपलक गति से देख रही थी[१२८]। बुद्ध चरित में भी लिखा है, कि बुद्ध को देखने के लिए शाक्य स्त्रियों को अपने पतियों से आज्ञा पाकर भी अपने घरों से ही देखना पड़ा था।[१२९]

भरहुत मूर्ति-कला में[१३०] में पर्दा-प्रथा का स्पष्ट चित्रण है, जिसके सुन्दर उदाहरण यक्षिणी चन्द्रा और देवता चुल्ल कोक्का की मूर्तियां हैं।

इस अध्याय में अश्वघोष की कृतियों के आधार पर तत्कालीन भारतीय संस्कृति का चित्र खींचा गया है। यद्यपि कवि ने भगवान बुद्ध के जीवन से सम्बन्धित घटनाओं का उल्लेख अपने शब्दों में किया है, पर इससे यह न समझना चाहिए कि ग्रन्थ लिखते समय वह ईसवी पूर्व छठीं शताब्दी के वातावरण में घूम रहा था, और स्वकालीन संस्कृति से विमुख था। उसकी कृतियों से प्रथम ईसवी का पूर्णरुपेण सामाजिक ढांचा सामने आता है। फिर भी उनके काव्यों में उल्लिखित तथ्यों की पुष्टि के लिए कुषाण कालीन लेखों तथा मथुरा, गान्धार कला के सुन्दर कलात्मक प्रतीकों की सहायता ली गई है।

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय तीन के सन्दर्भ

१. आउट लाइन्स ऑफ बुद्धिज्म पृ० ११

२. बौद्धचर्या पद्धति पृ० २१ : शाक्य मुनि बुद्ध अट्ठाइसवें बुद्ध थे। सत्ताइस बुद्ध इनके पूर्व हो चुके थे (भदन्त बोधानन्द महास्थाविर, लखनऊ, १९६२)

३. बु० च० सर्ग ७वां व १२वां

४. सौ० १५।४८ : रमणीयोऽपि देश: सन्सुभिक्ष: क्षेम एव च।
कुदेश इति विज्ञेयो यत् क्लेशैर्विदह्यते ॥

५. अशोक का शिलाभिलेख १३वां, गिरिनार पाठ "इछति हि देवानंप्रियो सव्रभुतन अक्षति संयमं समचरियं रभसिये।"

६. अशोक का शिलाभिलेख ६वां, गिरिनार पाठ

७. वही, गिरिनार पाठ

८. सौ० ११।४७ : असुरा: पूर्वदेवास्तु सुरैरपहृतश्रिय:।
श्रियं समनुशोचन्त: पातालं शरणं ययु: ॥

९. दुक्खप्पत्ता च निद्दुक्खा भयपत्ता च निब्भया।
सोकप्पत्ता च निस्सोका होन्तु सब्बेपि पाणिनो ॥

१०. दिव्या० ३२३।१४

११. उदान के अन्तर्गत सोण सुत्त (खुद्दकनिकाय)

१२. बु० च० २१।३

१३. मनु० १।९१ : एकमेव तु शूद्रस्य प्रभु: कर्म समादिशत्।
एतेषामेव वर्णानां शुश्रूषामनुसूयया ॥

१४. थेर गाथा, गाथा ३३ : श्रावस्ती का निर्धन माता का पुत्र जिसे सुप्पिय डोम ने पाला था।

१५. वही, गाथा ३२ : श्रावस्ती में उत्पन्न डोम

१६. वही, गाथा १७ : दासपुत्र

१७. वही, गाथा २३१ : दासपुत्र

१८. वही, गाथा ७७

१९. वही, गाथा २०६

२०. वही, गाथा ६९ : राजा शुद्धोदन के घर की दासी का पुत्र

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२१. वही, गाथा १७३ : राजगृह का कुम्हार
२२. वही, गाथा १६० : श्रावस्ती सा एक भिखमंगा
२३. वही, गाथा १७८ : श्रावस्ती के केवट कुल में उत्पन्न
२४. वही, गाथा १९० : एक दरिद्री
२५. वही, गाथा २२७ : चण्डाल कुलोत्पन्न
२६. वही, गाथा २४२ : राजगृह के भंगी कुल में उत्पन्न
२७. बु० च० १।७५ :

स्वैर्मोहपाशैः परिवेष्टितस्य दुःखाभिभूतस्य निराश्रयस्य ।
लोकस्य संबुध्य च धर्मराजः करिष्यते बन्धनमोक्षमेषः ।।

२८. वही, १।३३
२९. वही, ४।३३ : न चानुवर्तनं तन्मे रुचितं यत्र नार्जवम् ।
३०. महावस्तु जि० ३।२६८।१०-१३
३१. मनु० ४।८० : न शूद्राय मतिंदद्यान्नोच्छिष्टं न हविष्कृतम् ।
न चास्योपदिशेद्धर्मं न चास्य व्रतमादिशेत ।।
३२. दिव्या० ११८।१८-१९ : न प्रणश्यन्ति कर्माणि कल्पकोटिशतैरपि ।
सामग्रीं प्राप्य कालं च फलन्ति खलु देहिनाम् ।।
३३. चौ० बु०च० १७।८ : कारणादुद्भवा भावा व्याख्याताः परमर्षिणा ।
निरोधश्चापि मार्गश्च संव्याख्यातावुभाविह ।।
३४. सौ० १७।२१ : यस्मान्निरीहं जगदस्वतन्त्रं नेश्वर्यमेकःकुरुते क्रियासु ।
तत्तत्प्रतीत्य प्रभवन्ति भावा निरात्मकं तेन विवेद लोकं ।।
३४. सौ० १७।१६, १७, २१
३५. धम्मपद १४।५ : सब्ब पापस्य अकरणं कुसलस्स उपसम्पदा ।
सचित्त परियोदपनं एतं बुद्धानुसासनं ।।
३६. महामंगल सुत्त (सुत्त निपात में) :

बाहु सच्चं च सिप्पंच च विनयो च सुसिक्खितो ।
सुभासिता च या वाचा एतं मगलमुतमं ।।

३७. वही, एतादिसानि कत्वानि सब्बथमपराजिता ।
सब्बत्थ सोत्थिं गच्छन्ति तं तेसं मगलमुत्तमन्ति ।।
३८. पराभव सुत्त (सुत्त निपात में)
३९. बु० च० ९।१७
४०. चौ० बु० च० १६।२० : प्रथक् प्रथक् भवन्तो हि भ्राम्यन्तु भुवि सर्वतः ।
दयाभावान्विताः सर्वे दीनानुपदिशन्तु तान् ।।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

४१. महावग्ग (विनय पिटक में) :

चरथ भिक्खवे चारिकं बहुजन हिताय बहुजन सुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देव मनुस्सानं । देसेथ भिक्खवे धम्मं आदि कल्याणं मज्झे कल्याणं परियोसानकल्याणं, सात्थं सव्यञ्जनं केवल परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं पकासेथ ।

४२. बु० च० १।७५

४३. वही, ५।५

४४. ललित० १८।७-८

४५. अवदान० जि० २।१०३।८

४६. बुद्ध ऐण्ड हिज़ धम्म, पृ० २२-३०

४७. मनु० ८।२०, २१

४८. दिव्या० ३६।२९, ८७।२६

४९. बु० च० १।२५ :

भूतैरसौम्यैः परित्यक्तहिंसैर्नाकारि पीड़ा स्वगणे परे वा ।

५०. महापरिनिब्बान सुत्त—वज्जीनं सत्त अपरघनियां धम्मा

५१. डॉ० आर० के० मुकर्जी, हिन्दू सभ्यता पृ० १८९

५२. चौ० बु० च० २२।३ : मगधाधिपतेमन्त्री वर्षकारो दृढ़ तथा ।
शरण्यं निर्ममौ दुर्गं तत्र लिच्छविनां कृते ।।

५३. बु० च० २८।१-५५

५४. चौ० बु० च० २२।४७ : पराधीने परं दुःखं स्वाधीने च महत्सुखम् ।

५५. करणीयमेत्तसुत्त, गाथा ४-८ :

ये के चि पाण भूतत्थि तसा वा थावरा वा अनवसेसा ।
दीघा वा ये महन्ता वा मज्झिमा रस्सका अणुक थूला ।।
दिट्ठा वा ये अदिट्ठा ये च दूरे वसन्ति अविदूरे ।
भूता वा सम्भवेसी वा सब्बे सत्ता भवन्तु सुखितत्ता ।।
न परो परं निकुब्बेथ नातिमञ्ञेथ कत्थचि न कञ्चि ।
ब्यारोसना पटिघसञ्ञा नाञ्ञमञ्ञस्स दुक्खमिच्छेय्य ।।
माता यथा नियं पुत्तं आयुसा एक पुत्त मनुरक्खे ।
एवम्पि सब्ब भूतेसु मानसं भावये अपरिमाणं ।।
मेतञ्च सब्ब लोकस्मिं मानसं भावये अपरिमाणं ।
उद्धं अधो च तिरियं च असम्बाधं अवेरं असपत्तं ।।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

५६. उदान में सोण सुत्त (चतुर्थ सुत्त) पृ० ५७
५७. दिव्या० ३२३।१४
५८. अवदान० जि० १।३८४।९, २।१५।७ :

मानुषं वर्णं संप्राप्ता च दिव्यवर्णं ।

५९. वेबर, वज्र सूची पृ० २२४-२२५ तथा दिव्या० ३२५।१३-१४
६०. दिव्या० ३२४।७-१०
६१. वही, ३२५।१५-१६ :

न चैव तेषां चतुर्णां वर्णानां नाना कारणं प्रज्ञायते ।

६२. वही, ३२३।१४ : एकैव जातिर्लोकऽस्मिन् सामान्या न प्रथग्विधा ।
६३. सुत्तनिपात में वसलसुत्त, गाथा २७वीं

न जच्चा वसलो होति न जच्चा होति ब्राह्मणो ।
कम्मुना वसलो होति कम्मुना होति ब्राह्मणो ति ॥

६४. बु० च० २३।५९
६५. दिव्या० ३२४।११-१४
६६. सौ० १८।१
६७. दिव्या० ३२८।४
६८. वही, ३२३।१९
६९. सौ० १८।१
७०. मनु० १।८८ : अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा ।

दानं प्रतिग्रहं चैव ब्राह्मणानामकल्पयत् ॥

७१. मनु० १।९३
तुलना कीजिए—ऋग्वेद १०।९०।१२ पृ० ६०८ तथा यजुर्वेद ३१।११
७२. सौ० १।१९
७३. वही, १८।१
७४. मनु० १।८९ :

तुलना कीजिए—"राज्ञः स्वधर्मः स्वर्गाय प्रजा धर्मेण रक्षितुः"
अर्थशास्त्र जि० २ अधि० ३ अध्याय १ प्रक० ५८ पृ० ९

७५. जातक (हिन्दी) पृ० ५९-६० : महावीर की जन्म कथा ।
७६. महावस्तु० जि० २।१३९।५, ३।२९५।८
७७. सौ० १८।१
७८. मनु० १।९०

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

७९. सौ० ११।१३
८०. वही, १०।१२
८१. वही, ८।१५
८२. बु० च० ५।३० तथा ३१
८३. मनु० २।१७५
८४. बु० च० २।४७
८५. वही, ५।३३
८६. वही, ५।३३
८७. वही, १०।३३
८८. वही, ११।६०
८९. वही, ११।६१
९०. वही, ११।६३
९१. वही, १०।२८
९२. मनु० २।२२४
९३. बु० च० १०।२८
९४. वही, १०।२९
९५. वही, १०।३०
९६. वही, १०।३४
९७. वही, १०।३५
९८. वही, १०।३४
९९. वही, १०।३६
१००. वही, १०।३४
१०१. वही, ११।२१
१०२. वही, ११।५८
१०३. वही, ११।५९
१०४. वही, ५।३५
१०५. वही, १।८३, तुलना कीजिए—अशोक का ९वाँ शिला लेख सेलेक्ट इन्सक्रुपसन्स, जि० १ पृ० २९
१०६. बु० च० ११७, ९
१०७. वही, ११८
१०८. वही, १।८१

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१०९. वही, २।१३
११०. वही, २।१९
१११. वही, २।४७
११२. वही, २१।३९
११३. वही, २१।४०
११४. एपी० इण्डि० जि० २० पृ० २४
११५. सौ० ४।८
११६. वही, ४।७
११७. बु० च० १।५२
११८. सौ० १२।१२, ५।७
११९. बु० च० २३।६
१२०. वही, १।६४
१२१. मनु० ३।८०
१२२. बु० च० १०।२०
१२३. वही, १०।२१
१२४. वही, १०।१६, १९-२१
१२५. वही, २०।४
१२६. वही, १।१
१२७. वही, १।२
१२८. वही, १।३
१२९. वही, १।५
१३०. वही, १।९
१३१. वही, १।८३
१३२. मनु० २।३०
१३३. बु० च० २।१७
१३४. सौ० ७।४३
१३५. बु० च० २।२६, २७
१३६. सौ० ७।२८
१३७. वही, ७।२९
१३८. वही, ७।२९
१३९. वही, ८।४४
१४०. एपी० इण्डि० जि० २ पृ० २०७

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१४१, एपी० इण्डि० जि० २ पृ० २०८, २१०
१४२. वही, जि० २ पृ० २०७
१४३. वही, जि० १ पृ० ३८१
१४४. संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी पृ० ५११
१४५. वही, पृ० ७५४
१४६. वही, पृ० २६९
१४७. जर्नल ऑफ दि कलिंग हिस्टारिकल रिशर्च सोसाइटी जि० १ पृ० ३३८
१४८. महाभाष्य चतुर्थ खण्ड ४।१।५२ पृ० ७४
१४९. महाभाष्य तृतीय खण्ड ३।१।११२ पृ० १४६
१५०. गहाभाष्य द्वितीय खण्ड २।२।२५ पृ० ४५६
१५१. बु० च० ३।२३
१५२. वही, ४।१
१५३. वही, ३।१३
१५४. वही, २७।६१
१५५. वही, २७।६२
१५६. वही, २७।६३
१५७. वही, २७।७१
१५८. वही, २७।७५
१५९. वही, २७।७०
१६०. वही, २८।५६
१६१. वही, २४।६३
१६२. वही, २५वां सर्ग (निर्वाण-पथ पर)
१६३. सौ० ५।३४
१६४. वही, ५।३६
१६५. वही, ५।५०
१६६. वही, ५।५१
१६७. वही, ५।३५
१६८. वही, ५।३६-४९
१६९. वही, ५।२०
१७०. बु० च० ६।५७
१७१. सौ० ५।५३
१७२. बु० च० ६।५९-६५

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१७३. सौ० १८।५
१७४. सौ० १४।१५ : धारणार्थं शरीरस्य भोजनादि विधीयते ।
१७५. खुद्दक पाठ पृ० ३ : सब्बे सत्ता आहारट्ठितिका
१७६. सौ० १४।९
१७७. वही, ९।३९
१७८. वही, १।१०
१७९. बु० च० २७।७५
१८०. वही, २।५
१८१. सौ० ९।३१
१८२. मृच्छकटिक पहला अध्याय
१८३. रघुवंश, ४।२०
१८४. सोशल लाइफ इन ऐंशेण्ट इण्डिया, पृ० १५९
१८५. मृच्छकटिक पहला अध्याय
१८६. एपी० इण्डि० जि० २१ पृ० ६०
१८७. सौ० ८।१५
१८८. पाण्डे, हि० लि० इ० पृ० ४ : अशोक का प्रथम शिलालेख
१८९. सौ० ८।१६
१९०. वही, १।११, १०।१२
१९१. सरकार, से० इ० वा० १ पृ० १६ अशोक का प्रथम शिलालेख
१९२. सौ० ११।६१
१९३. दि एज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी पृ० ५९९
१९४. बु० च० ११।१७
१९५. वही, ११।२८
१९६. सौ० १।९
१९७. वही, १।१०
१९८. वही, २।३१
१९९. वही, १।१५
२००. वही, २।३६
२०१. ऋग्वेद ८।४८।३
२०२. ऋग्वैदिक आर्य पृ० ४८
२०३. सौ० ९।३०

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२०४. पाणिनीयाष्टकम् ६।२।३४ पृ० १४१ (उत्तरार्द्ध); अर्थ०जि० १ अधि० १।६।३, पृ० ३८; बु० च० पादटिप्पणी ११।३१ पृ० १४२
२०५. ऋग्वेद ७।८६।६
२०६. सौ० ८।४१, ९।४२
२०७. बु० च० २।५
२०८. सौ० ११।२९
२०९. सौ० ९।३१
२१०. रघुवंश ४।२०
२११. सौ० ५।७
२१२. भारतीय सिक्के पृ० १५४
२१३. सौ० ८।५९
२१४. बु० च० २३।६
२१५. वही, ६।६२, २३।२
२१६. वही, २३।२
२१७. वही, २३।३
२१८. वही, २३।३-७
२१९. वही, २३।३
२२०. कौ० म० म्यू० पृ० ८८ नं० सी० १३
२२१. एपी० इण्डि० जि० ९ पृ० २३९
२२२. कौ० सांची नं० ए० ८३
२२३. बु० च० ६।६०, ६१
२२४. सौ० १८।५ : काषायवासाः कनकावदातस्ततः स मूर्ध्ना गुरुवे प्रणेमे ।
२२५. बु० च० ६।६१ : शिवं च काषाय
२२६. सौ० १।५ : तस्य विस्तीर्णतपसः पार्श्वे हिमवतः शुभे ।
२२७. बु०च० ७।५१ : दारवचीरवासाः ।
२२८. सं० बौ० सा० भा० जी० पृ० १७५
२२९. मित्रा, ललित० ३३२।१०
२३०. कौ० सांची नं० ए० ८३
२३१. सौ० ६।२६
२३२. वही, ७।७
२३३. बु० च० ५।५१

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२३४. वही, १२।१०९
२३५. वही, १२।११०
२३६. कौ० म० म्यू० पृ० ८३ नं० सी०
२३७. लखनऊ म्यु० लेविल नं० जे० ८५
२३८. एपी० इण्डि० जि० ९ पृ० २३९
२३९. कौ० म० म्यू० पृ० १०९, नं० एफ० २०
२४०. सौ० ४।३८
२४१. वही, ४।२६
२४२. वही, ५।५३
२४३. वही, ८।५९
२४४. वही, १०।८
२४५. वही, १०।९
२४६. वही, १०।८
२४७. रघुवंश ६।१४
२४८. वही, ६।१६
२४९. वही, ६।१८
२५०. सौ० १०।२०
२५१. एपी० इण्डि० जि० ९ पृ० २३९
२५२. आ० स० इ० रि० १९२५-२६
२५३. सौ० ५।२०
२५४. वही, ४।१६
२५५. ऋग्वेद ८।६७।३
२५६. सौ० ४।१९, १०।२०
२५७. वही, ८।५०
२५८. वही, ५।२०
२५९. बु० च० २१।४८
२६०. वही, ८।२२ : योक्त्रैर्मुषितैरिव स्तनैः ।

टिप्पणी—भदन्त शान्तिभिक्षु ने "योक्त्रेण नथनी इति भाषा" को लेकर योक्त्र को नाक का आभूषण माना है—

सारस्वती सुषुमा फाल्गुन पूर्णिमा २००९ पृ० २२१

२६१. बु० च० ८।२२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२६२. वही, ३।१४
२६३. सौ० ४।१७; बु० च० ८।२२
२६४. सौ० ८।५०
२६५. बु० च० ७।३६
२६६. वही, २३।२१
२६७. वही, २७।६१
२६८. वही, ८।२१
२६९. लखनऊ म्यू० लेबिल नं० १३९२ ओवर बालकनी
२७०. कैं० म० म्यू० पृ० ११० न० ई० २७
२७१. सौ० ४।१३ : दत्वाथ सा दर्पणमस्य हस्ते ममाग्रतो धारय तावदेनं ।
विशेषकं यावदहं करोमीत्युवाच कान्तं स च तं बभार ।।
२७२. लखनउ म्यू० नं० बी० ६१, ६५, ९९
२७३. वही, नं० बी० ७२
२७४. वही, नं० बी० ८०
२७५. वही, नं० जे० ५९५
२७६, वही नं० जे० ५९८
२७७. वही, नं० जे० २७५
२७८. सौ० २।२६
२७९. वही, ४।२६
२८०. वही, ८।५०
२८१. वही, ४।१६
२८२. वही, ४।१४
२८३. वही, ८।५०
२८४. वही, १०।५०
२८५. बु० च० ८।२२
२८६. सौ० १८।२०
२८७. दीघ निकाय १।१ पृ० ४ (हिन्दी अनुवाद, महाबोधि सभा, सारनाथ, बनारस, १९३६ ई०
२८८. से० इ० वा० १ पृ० १६ अशोक का प्रथम शिला लेख :
"नच समाजो कतव्यो बहुकं हि दोसं समाजम्हि
पसति देवानं पियो पियदसि राजा"

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२८९. सौ० १/५५
२९०. दीघनिकाय (हिन्दी अनु० राहुल) १।१ पृ० ३
२९१. सौ० ११।२५
२९२. दीघ निकाय (ब्रह्मजाल सुत्त) १।१ पृ० ३ (हिन्दी अनु०)
२९३. सौ० ८।१६
२९४. वही, ११।५९
२९५. वही, ६।८
२९६. दीघ निकाय (हिन्दी अनु० राहुल) १।१ पृ० ३
२९७. सौ० १।११
२९८. वही, १०।३७
२९९. बु० च० ४।३७
३००. सौ० १०।२५
३०१. बु० च० ५।५६
३०२. वही, १४।८७, २२।२०
३०३. सौ० ६।३२
३०४. वही, ११।३५
३०५. सौ० १०।३७
३०६. दीघनिकाय (हिन्दी अनु० राहुल) १।१ पृ० ३
३०७. आ० स० इ० ए० रि० १९०६-७ पृ० १५३
३९८. बु० च० ३।३-१०
३०९. सौ० १६।६
३१०. बु० च० २।२१, २२
३११. बु० च० २६।२९
३१२. बु० च० ११।३१ पृ० १४२ पादटिप्पणी और
देखिये-पाणिनी० ६।२।३४ पृ० १४१; अर्थ० जि० १।१।६।३ पृ० ३८
३१३. बु०च० ११।३१ विनाशमीयुः कुरवो यदर्थं
तथा पृ० १४२ पादटिप्पणी।
३१४. सौ० १६।७९ तथा बु० च० ११।२६
३१५. दीर्घनिकाय (हिन्दी अनु०, राहुल) १।१ पृ० ३
३१६. महावस्तु जि० २।१६८।११
३१७. बु० च० ४।१७

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

३१८. सौ० ८।४०
३१९. सौ० ८।३१
३२०. सौ० सर्ग ८वाँ
३२१. सौ० ८।३३
३२२. बु० च० ८।३६
३२३. सौ० ८।४२
३२४. विष्णु० ३५।१-६ पृ० ९२
३२५. वृ० स्मृति १।२५ (स्त्री दूषणानि) श्लोक १०-१२ पृ० १९३
३२६. कामसूत्र द्वितीय भाग ६।२।१ श्लोक ७२ पृ० ९४४
३२७. सो० ला० ऐ० इ०-पृ० १८४
३२८. सौ० ४।३९
३२९. बु० च० ३।१३
३३०. ज० क० हि० रि० सो० वा० १ पृ० ३४०

————

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय ४

धर्म और दर्शन

कवि या लेखक अपने युग का प्रतिनिधि होता है। उसकी कृतियों में तत्कालीन धार्मिक परिस्थितियों का भी विवरण रहता है। वास्तव में वह अपने युग की तरंगों में बहता रहता है। अश्वघोष स्वयं बौद्ध आचार्य थे और उनकी कृतियाँ महामानव बुद्ध के जीवन की घटनाओं को लेकर रची गई थीं। अतः यह स्वाभाविक है, कि कवि समाज के सम्मुख अपने धर्म और उसके प्रवर्तक के सिद्धान्तों को प्रस्तुत करे। अश्वघोष कनिष्क के सम्पर्क में थे, इसलिए उन्होंने कुषाण सम्राट् की धार्मिक सहिष्णुता की प्रवृत्ति को भी अपनाया। यही कारण है कि, हमको उनकी कृतियों में ब्राह्मण धर्म की उपेक्षा नहीं मिलती है। तत्कालीन लेखों से भी पता चलता है कि, बौद्ध धर्म के अतिरिक्त ब्राह्मण धर्म अपने सम्पूर्ण अंगों सहित तथा जैन धर्म भी फल-फूल रहा था। कवि की कृतियों और लेखों के आधार पर यहाँ पर उस समय की धार्मिक दशा पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

धार्मिक सहिष्णुता—सम्राट् कनिष्क के समय में बौद्ध धर्म में महायान सम्प्रदाय की ओर झुकाव बढ़ चुका था और भक्ति भावना ने भी अपना प्रभाव स्थापित कर लिया था, जिसकी पुष्टि गान्धार और मथुरा कला के प्रतीकों से भी होती है। कुषाण सम्राट् स्वयं बौद्ध था पर उसके तथा उसके वंशजों के सिक्कों पर अंकित यूनानी, पारसीक तथा बौद्ध और ब्राह्मण देवी-देवताओं की मूर्तियों से यह प्रतीत होता है कि "एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति" की भावना ने उस युग में अपना पूर्ण स्थान बना लिया था। यह धार्मिक सहिष्णुता की भावना यहीं तक सीमित न रही बल्कि गुप्त सम्राटों ने भी इसे ग्रहण किया। इस युग में किसी धर्म को अपनी प्रगति के लिए किसी प्रकार की बाधा न थी। इस भावना का अश्वघोष पर भी प्रभाव पड़ा जैसा कि उसकी कृतियों से प्रतीत होता है। यहाँ उस समय के प्रमुख धार्मिक सम्प्रदायों का उल्लेख किया जा रहा है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

ब्राह्मण धर्म

अश्वघोष ने हिन्दू धर्म के अन्तर्गत आने वाली तमाम बातों का उल्लेख किया है जो उस समय समाज में प्रचलित थीं यथा वैदिक यज्ञ, होम, हवन और तप, वैष्णव तथा शैव सम्प्रदाय, शुक्र, बृहस्पति, इन्द्र, शिव, विष्णु, कार्तिकेय, अग्नि और स्वयं भू आदि हिन्दू देवताओं की उपासना आदि।

वैदिक यज्ञ—अश्वघोष ने यज्ञों का उल्लेख किया है। होम और उसमें दी जाने वाली आहुतियों का विवरण उसके काव्यों में बराबर मिलता है। होम में 'समिध' और पुष्पों का प्रयोग किया जाता था, जिन्हें स्वयं विप्र लाते[१] थे। होम में गाय के दूध का भी प्रयोग किया जाता[२] था। होम करते समय तपस्वी लोग वैदिक मन्त्रों का उच्चारण करते थे जिनकी ध्वनि मोरों के बोलने और तीर्थों में लोगों के स्नान करने की ध्वनि के समान मधुर होती[३] थी।

कल्याण-प्राप्ति के लिए उस समय लोग जप, पूजा-पाठ इत्यादि करते थे। शरीर की पवित्रता के लिए तीर्थों के जल (तीर्थाम्बु) में स्नान करते थे[४]। यही नहीं हार्दिक सुख और शान्ति की प्राप्ति हेतु लोग विधिवत् सोमपान भी करते थे[५]। जप, मन्दिर (देवायतन) में किया जाता था। अश्वघोष ने लिखा है कि राजा शुद्धोदन ने पुत्र प्राप्ति हेतु देव मन्दिर में जप किया था[६] और हिंसा रहित यज्ञों का अनुष्ठान किया था[७]। एक अन्य स्थल पर भी अश्वघोष ने हिंसा पूर्ण यज्ञों का विरोध करते हुए कहा है कि, जो दयावान पुरुष हैं वे फल पाने की अभिलाषा से विवश निरीह जीवों की हत्या (यज्ञों में) नहीं करते हैं। यदि यज्ञ का फल शाश्वत भी हो तो भी वह यज्ञ करना उचित नहीं जो हिंसात्मक हो[८]।

साहित्यिक प्रमाणों के अतिरिक्त उत्तर कुषाण सम्राटों के समय के अभिलेखों[९] से भी वैदिक यज्ञों का अस्तित्व प्रतीत होता है। ईशापुर (मथुरा के समीप) यूप स्तम्भ पर अंकित एक लेख प्राप्त हुआ है जिसकी भाषा शुद्ध संस्कृत है और इसकी तिथि महाराजाधिराज देव पुत्र वासिष्क का २४वां वर्ष है। लेख में भारद्वाज गोत्रीय "रूद्रिल" ब्राह्मण के पुत्र "द्रोणल" द्वारा एक यूप के प्रतिष्ठापन का तथा द्वादश-दिवसीय बलिदान का विवरण है[९]। डॉक्टर ए० एस० अल्टेकर ने राजपूताना की "कोटा राज्य में ३ यूपों की खोज की थी जिन पर लेख उत्कीणित हैं[१०]। इनकी तिथि २९५ कृतयुग है जो उनके अनुसार २९५–५८=२३७ ई० है। इन यूपों की कला निम्नकोटि की है

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

और उतनी शुद्ध संस्कृत का प्रयोग नहीं है जितनी ईशापुर यूप स्तम्भ लेख में हैं।

गृहस्थों के पाँच महायज्ञ—गृहस्थों के लिए पंचमहायज्ञों का विधान वैदिक समय से रहा है। अतिथि-सेवा प्रत्येक गृहस्थ आज भी अपना परम कर्तव्य समझता है। अश्वघोष के समय में अतिथि-समादर का विशेष महत्व था। अतिथि के आगमन पर लोग हाथ जोड़कर (कृत्वांजलि)[११] अधोमुख होकर (किंचिदवाङ्मुख) सिर से (मूर्धा[१२] सिरसा[१३]) तथा स्नेह पूर्ण बचनों द्वारा (स्नग्धेन वचसा[१४]) उनका स्वागत करते थे। अतिथि-पूजा भी की जाती थी।

इसके अतिरिक्त लोग देवयज्ञ भी करते थे। इसे गृहस्थ लोग हवन करके पूरा करते थे। जिसका निर्देश हमें मनुस्मृति[१५] में भी मिलता है। यह देव यज्ञ (देवतेज्याः)[१६] मंगल या कल्याण के लिए किया जाता था।

ब्रह्म यज्ञ का उल्लेख कवि की कृतियों में विस्तृत रूप से नहीं मिलता है जो मनु के मतानुसार पठन-पाठन (अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः)[१७] द्वारा पूर्ण किया जाता था।

कवि के समय में गृहस्थ लोग पितृ यज्ञ भी करते थे। वे दाहिने कन्धे पर चादर या यज्ञोपवीत रखकर (कृतापसव्यः[१८]) पितरों को जल देते थे[१९]। यह यज्ञ अन्न, जल, दूध फल तथा वस्तुओं से पितरों को प्रसन्न करने के लिए श्राद्ध रूप में भी किया जाता[२०] था।

सोम-पान—यद्यपि अश्वघोष के काव्यों में पाणिनि[२१] के ज्योतिष्टोम और आयुष्टोम जैसे वैदिक यज्ञों का उल्लेख नहीं मिलता है परन्तु सोम का उल्लेख कई बार हुआ है। उस समय निरन्तर दान देकर ब्राह्मणों से सोम रस तैयार करवाया जाता[२२] था। यज्ञों के समय पर सोम रस का पान किया जाता था। भदन्त अश्वघोष के अनुसार सोमपान के लिए निश्चित समय तथा विधि का विधान था।[२३] गुरुजनों और पुरोहितों का इन सोम यज्ञों में बहुत महत्वपूर्ण स्थान था।[२४]

देवी-देवता—अश्वघोष की कृतियों में देवी-देवताओं की एक लम्बी तालिका मिलती है। उनमें से कुछ तो वैदिक देव और देवियां हैं और कुछ का बौद्ध धर्म से सम्बन्ध है। इसमें सन्देह नहीं कि कवि ने उत्तर वैदिक कालीन देवों का भी उल्लेख किया है। 'सौन्दरनन्द' और 'बुद्ध चरित' दोनों ही काव्यों में वैदिक देवताओं के एक के अनेक नाम मिलते हैं यथा इन्द्र[२५],

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

शक्र[२६], वासव[२७], पुरन्दर[२८] और महेन्द्र[२९] निश्चित रूप से एक ही देवता के विभिन्न नाम हैं।

वैदिक कालीन प्रमुख देवी-देवताओं के नाम भी अश्वघोष की कृतियों में मिलते हैं जैसे लक्ष्मी,[३०] अग्नि (अनिल)[३१], वायु (पवन)[३२], सूर्य (अर्क)[३३], रुद्र (वृषध्वज)[३४] प्रजापति और कुबेर (वैश्रवण)[३५]।

वैदिक देवताओं में विष्णु और शिव[३६] के नामों को लेकर वैष्णव[३७] और शैव सम्प्रदायों का प्रादुर्भाव हुआ, जिसका स्पष्ट उल्लेख कवि की कृतियों में मिलता है। उस समय स्वर्ग-नर्क में विश्वास बढ़ता जा रहा था। कवि का कथन है कि स्वर्ग से गिरे हुए व्यक्ति का कुछ भी पुण्य शेष नहीं रहता और उसे पशु-पक्षियों की योनि में (तिर्यक्षु), प्रेत लोक में (पितृलोके) अथवा नर्क[३८] में जाना पड़ता है, परन्तु उत्तम कर्मों के द्वारा स्वर्ग प्राप्त होता है।[३९]

विष्णु और शिव के अतिरिक्त, कार्तिकेय (षणमुख)[४०] स्वयंभू[४१], कामदेव (कन्दर्प)[४२] उपेन्द्र[४३] तथा राम[४४], कृष्ण (कंस विकर्षिण:[४५]) और बलराम[४६] का भी उल्लेख कवि ने किया है। देवताओं के अतिरिक्त देवियों की भी पूजा की जाती थी उनमें सबसे प्रसिद्ध लक्ष्मी थी, जिसे कवि ने "श्री"[४७] कहा है। भाष्यकार पतंजलि[४८] ने भी लक्ष्मी की पूजा का उल्लेख किया है।

इन देवीदेवताओं की मूर्तियों का निर्माण बहुत पहले समय से होता आया है। पाणिनि ने "प्रतिकृति[४९]" और पंतजलि ने "अर्चा"[५०] शब्द का प्रयोग मूर्ति के लिए किया है। ये मूर्तियां केवल मंदिरों में स्थापित की जाती थीं। वे बेची नहीं जाती (अपण्य) थीं। कुषाण सिक्कों पर जिन भारतीय ब्राह्मण देवी-देवताओं की मूर्तियां अंकित हैं, वे शिव, स्कन्द, विशाष और महासेन तथा अम्बा या भवानी हैं।

इन मूर्तियों की उपासना भक्ति मार्ग का प्रमुख अंग थी, जो बहुत पहले समय से भारत में प्रचलित हो चुकी थी।

शैव सम्प्रदाय—कुषाण काल में शिव-भक्ति भी प्रचलित थी, जिसका संकेत "महाभाष्य"[५१] में भी मिलता है। अश्वघोष के अनुसार शिव कठोर व्रत के लिये पूजे जाते थे।[५२] साहित्यिक प्रमाणों के अतिरिक्त मुद्रा सम्बन्धी प्रमाण भी इसकी पुष्टि करते हैं। कुषाण सम्राट् विम कदफिसेस तथा कनिष्क (प्रथम) और उसके वंशजों के सिक्कों पर शिव की मूर्ति मिलती है।[५३] कनिष्क के स्वर्ण सिक्कों के पृष्ठ भाग की ओर वज्र लिये हुए शिव की मूर्ति है और "ओईशो" (शिव) लिखा है।[५४] हुविष्क के स्वर्ण सिक्कों पर "नन्दी" सहित खड़े शिव की मूर्ति है, जिसके हाथों में माला तथा त्रिशूल है।[५५]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वैष्णव सम्प्रदाय : वैष्णव सम्प्रदाय को "भागवत" सम्प्रदाय भी कहा गया है, जिसके अन्तर्गत भागवत् सम्प्रदाय, वासुदेव सम्प्रदाय और कालान्तर में अन्य तमाम विष्णु पूजक सम्प्रदाय सन्निहित हो गये थे। महोदय आर०जी० भण्डारकर ने इसके दो वर्ग बतलाये हैं। प्रथम वर्ग कठोर धार्मिक आचार विचारों पर जोर देता था। यह पूर्वी भारत में प्रचलित था। द्वितीय वर्ग असाधारण देव में विश्वास करता था। यह पश्चिमी भारत में प्रचलित था। इस सम्प्रदाय में विष्णु, वासुदेव (बलराम) और कृष्ण का समावेश माना गया है। अश्वघोष ने कृष्ण (कंस विकर्षिण:)[५६], आम्बिक[५७], बलराम[५८] तथा राम[५९] (दशरथ सुत) का उल्लेख किया है।

वेसनगर के अभिलेख में "गरुड़ध्वज" का उल्लेख है। यह अभिलेख द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व का है। घोसुण्डी (जिला चित्तौर गढ़, राजपूताना) के प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व के एक लेख में[६०] विष्णु की पूजा हेतु चहार दीवाल बनाने की व्यवस्था का उल्लेख है। महाक्षत्रप राजवुल का "मोरा प्रस्तरखण्ड अभिलेख"[६१] जो प्रथम शताब्दी का माना जाता है, वैष्णव सम्प्रदाय पर प्रकाश डालता है। उसकी द्वितीय पंक्ति इस प्रकार प्रारम्भ होती है :—

"भगवता वृषनेन पंचवीरानाम प्रतिमा"

महोदय आर०पी० चन्द ने इसे "भगवतो वृषने:", पढ़कर इसका अर्थ एक मूर्ति की स्थापना के रूप में किया है। राजवुल के पुत्र क्षत्रप "सोदास" के मथुरा अभिलेख में भगवत् वासुदेव के मंदिर (भगवतो वासुदेवस्य महास्थान) का उल्लेख है।

इससे यह प्रतीत होता है कि वैष्णव मत भी शैव मत की भांति अश्वघोष के समय में फल-फूल रहा था और कवि ने इसका उल्लेख केवल वैष्णव देवताओं के नाम से किया है। लेखों से यह बात प्रमाणित हो जाती है कि ब्राह्मण धर्म के दो प्रमुख अंग "वैष्णव और शैव मत" कवि के समय से पहले भी थे और उनका प्रभाव उस समय में भी था।

तपश्चर्या

भारतीय संस्कृति में तप का विशेष महत्व है। कवि ने हिन्दू तपस्वियों का उल्लेख किया है जो पर्वतों तथा वनस्थलों में रहकर तप करते थे।[६२] आश्रम की भूमि कोमल तृणों, वृक्षों और लताओं से आच्छादित होती थी।[६३] उनके समीप पवित्र तीर्थ के समान कमल युक्त सरोवर[६४] भी होते थे। आश्रमों में तपस्वी ब्रह्मचिन्तन (यत्रस्मीयते ब्रह्म) करते थे और अहिंसा

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

का आश्रय लेकर (कैश्चित्कैश्चिन्न मीयते) जीवन व्यतीत करते थे। यहां किसी की भी अकाल मृत्यु नहीं होती (न चाकाले प्रमीयते) थी।[६५] तप के लिये उत्तर दिशा श्रेष्ठ मानी जाती थी, दक्षिण दिशा में एक पग भी जाना वर्जित था।[६६]

तपश्चर्या की विधि में अन्तर था। कुछ तपस्वी, जल (वर्षा के जल) से उत्पन्न जंगली अन्न, पत्र-पुष्प, फल और मूल खाकर अपना जीवन व्यतीत करते थे।[६७] अन्य पक्षियों की भांति चुने हुए अन्न पर ही जीवित रहते थे।[६८] कुछ तपस्वी मृगों की भांति तृण चर कर ही तप-साधना करते थे[६९] और कुछ अपना जीवन पवन पर ही अवलंबित रखते थे। कठिन तप के फलस्वरूप इनके शरीर "बाल्मीकि" (हि० बांबी या शिखर पूर्ण मिट्टी का ढेर) हो जाते थे।[७०] अन्य तपस्वी पत्थरों को कूट कर जीविका चलाते थे।[७१] उनमें से कुछ ऐसे भी तपस्वी होते थे जो दांतों से छिले अन्न खाते थे।[७२]

तपस्वियों के भोजन में ही भिन्नता नहीं थी वरन् उनके रहन-सहन में भी तप के अनुसार भिन्नता हुआ करती थी। इन तपस्वियों के आवास-प्रवास सम्बन्धी भिन्नताओं का सुन्दर चित्रण अश्वघोष ने किया है। कुछ तपस्वी जल में प्रवेश कर मछलियों के साथ में रहते थे, जिनके शरीर कछुओं से घायल होते रहते थे।[७३] दूसरे तपस्वी दिन में दो बार अग्नि में मन्त्र पूर्वक हवन करते थे।[७४] इन सभी तपश्चर्याओं का आचरण मोक्ष प्राप्ति के लिये किया जाता था।

बौद्ध दृष्टिकोण—अश्वघोष ने इन अनेक प्रकार की तपश्र्याओं को दुःखात्मक[७५] और तपस्या के श्रम को स्वल्प उद्देश्य[७६] वाला बताया है। लोक परिवर्तनशील है (लोकश्चसर्वे परिणामवन्तः)। तपस्या का प्रधान फल स्वर्ग की प्राप्ति माना गया है, परन्तु इससे भी लोगों को च्युत होना पड़ता है। देखिये— अग्नि, इन्द्र, वैवस्वत, वशिष्ट, पराशर, द्वैपायन (व्यास), अंगिरा, काश्यप, विश्वामित्र, स्थूलशिरा, रूरू, पुरूरवा, तालजङ्घा, जह्नु, शान्तनु, सोमवर्मा, भीमक, जनमेजय, मन्थाल गौतम, पाण्डु[७७], शिवि मान्धाता, नहुष, इलविल, ययाति, पूर्वदेवा, महेन्द्र, उपेन्द्र[७८] सभी स्वर्ग से च्युत हुए। इसलिये वह श्रम ठीक नहीं, जिससे कुछ पुनः करना पड़े। यदि शरीर को कष्ट देना ही परम धर्म है और आहार-शुद्धि से ही पुण्य होता है तो निर्धन व्यक्तियों तथा पशुओं को भी पुण्य होना चाहिए, क्योंकि वे लोग भी तो इन्हीं तपस्वियों की भांति रूखा सूखा भोजन खाते हैं।[७९]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

तप में यदि संकल्प ही पुण्य का हेतु है तो सुख में भी संकल्प किया जा सकता है।[८०] गुणवान पुरुष जिस जल का स्पर्श करते हैं, यदि पृथ्वी पर वही इष्ट तीर्थ है, जिसके स्पर्श से पुण्य या धर्म होता है, तो यह भी तथ्यहीन है, क्योंकि वास्तव में गुण ही तीर्थ हुए पानी तो पूर्ववत् पानी ही है।[८१]

अत: अश्वघोष ने तप और तपस्वियों का उल्लेख करते हुए, बुद्ध के मुख से यह अभिलाषा प्रकट की है कि, अपुनर्जन्म की अवस्था प्राप्त करना ही सबसे श्रेयस्कर है।[८२]

कुषाण काल के पुरातात्विक प्रमाण यह सिद्ध करते हैं कि उस समय ब्राह्मण धर्म भी लोगों की दृष्टि में आदरणीय स्थान प्राप्त किये हुए था। उषवदान के अभिलेखों [८३] से भी ब्राह्मण धर्म की स्थिति पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। यह उषवदात नहपान का दामाद था और नहपान विमकदफिसेस का समकालीन था।[८४] उषवदात पहले शक था और बाद में ब्राह्मणधर्मावलम्बी हो गया था।[८५] इस धर्म-परिवर्तन के आयोजन में उसने देवताओं तथा ब्राह्मणों को १६ गांव दान में दिये और प्रति वर्ष १०० ब्राह्मणों को भोजन कराने का बचन दिया।[८६] यही नही उसने "प्रभास" नामक पुण्य तीर्थ पर ब्राह्मणों को आठ पत्नियाँ भी प्रदान की थीं।[८७] धर्म-परिवर्तन के सम्बन्ध में इसके पूर्व भी "हिल्योद्र" का प्रमाण मिलता है जिसने भागवत धर्म ग्रहण किया था।[८८]

प्रा० स्टेनक्नों द्वारा प्रकाशित मथुरा के एक[८९] लेख में एक विदेशी "वकनपति" जो कदाचित् वदकसा का रहने वाला था, के द्वारा १००० पुराणों (एक प्रकार के सिक्कों) के समर्पण का उल्लेख है। यह धनराशि उसने दो "श्रेणियों" (शिल्पी-संघो) को इसलिए प्रदान की थी कि, उसके व्याज से पुण्यशाला (अभिलेख में इसे "प्राचीनी" कहा गया है) में १०० ब्राह्मणों को प्रतिदिन भोजन करवाया जाय तथा अन्य बाहर के भूखे और प्यासे लोगों को भोजन और जल प्रदान किया जाय। अभिलेख की तिथि कुषाण सम्वत् २८ है। उस समय सम्राट् हुविष्क राज्य कर रहा था।

इस प्रकार उषवदात, हिल्योद्र तथा वकनपति के अभिलेखों से ब्राह्मण धर्म की स्थिति पर प्रकाश पड़ता है। ब्राह्मण धर्म को सम्मानित स्थान प्राप्त था और विदेशी लोग उससे प्रभावित होकर उसे ग्रहण कर रहे थे।

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

बौद्ध-धर्म

अश्वघोष का समय बौद्ध धर्म के पुनरुत्थान का युग था। कवि बौद्ध धर्म को सभी धर्मों के प्रभाव से शुद्ध रखने के लिए प्रयत्नशील था। तत्कालीन सम्राट् कनिष्क भी बौद्ध धर्म का अनुयायी था। कहा तो ऐसा जाता है कि अश्वघोष से ही प्रभावित होकर कनिष्क इस धर्म की ओर आकर्षित हुआ था। ब्राह्मण धर्म की बढ़ती हुई भक्ति-भावना बौद्धों को आकृष्ट कर रही थी। मूर्ति-पूजा तो प्रचलित थी ही। कवि ने बौद्ध धर्म में सुधार और शुद्धि के लिये प्रयास किया। परिणाम स्वरूप सम्राट् कनिष्क की संरक्षता में चतुर्थ बौद्ध संगीति बुलाई गई। यह संगीति काश्मीर के "कुण्डल वन विहार"[९०] में आयोजित हुई थी, जिसमें ५०० प्रख्यात बौद्ध भिक्षुओं ने भाग लिया था। इस संगीति के अध्यक्ष "वसुमित्र"[९१] और उपाध्यक्ष अश्वघोष थे। संगीत में पिटकों पर विचार किया गया था और उन पर भाष्य लिखे गए। सभी भाष्यों में अध्यक्ष वसुमित्र कृत "महाविभाषा-शास्त्र" प्रमुख है।

बौद्ध धर्म के प्रमुख यान

त्रिपिटकाचार्य राहुल सांकृत्यायन का मत है कि बुद्ध के महापरिनिर्वाण के लगभग सौ वर्ष बाद ही बौद्ध धर्म की दो शाखाएँ—स्थविरवादी और महासांघिक—हो गईं थीं। जिनमें स्थविरवादी लोग बुद्ध की मानवरूप में उपासना करते थे[९२] और महासांघिक दैवी रूप में। इसी महासांघिक शाखा से महायान का उदय माना जाता है।

हीन यान—यह बौद्ध धर्म का प्राथमिक रूप था। प्रारम्भ में इसे स्थविरवाद कहा जाता था। सम्राट् अशोक के समय तक स्थविरवाद ६ शाखाओं में विभक्त हो चुका था। इनमें ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में सर्वास्तिवाद शाखा उन्नत दशा में थी। जिसकी पुष्टि तत्कालीन पुरातत्व परक खोजों से भी होती है। शाह जी की ढेरी के कास्केट अभिलेख[९३] जेदा स्तम्भ अभिलेख, कुर्रम,[९४] श्रावस्ती एवं सारनाथ से प्राप्त कुषाण कालीन अभिलेख यह सिद्ध करते हैं कि अफगानिस्तान पश्चिमी पंजाब सिन्धु प्रदेश तथा श्रावस्ती और सारनाथ के क्षेत्रों में यह सम्प्रदाय अधिक लोकप्रिय था। श्रावस्ती के एक अभिलेख से ज्ञात होता है कि "भिक्षु बल" ने सर्वास्तिवादी सम्प्रदाय को दान दिया था।[९५] यहीं से प्राप्त एक दूसरे अभिलेख में कनिष्क प्रथम द्वारा एक

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

सर्वास्तिवादी आचार्य को 'कोशम्ब पुर कुटी' के दान देने का उल्लेख है।[९६] भिक्षु बल ने सारनाथ के सर्वास्तिवादी भिक्षुओं के लिए भी पूर्ण कार्य बोधिसत्व की एक प्रतिमा समर्पित की थी।[९७] यहीं से उपलब्ध एक अन्य अभिलेख में सर्वास्तिवादी आचार्यों का उल्लेख हुआ है।[९८] वस्तुतः सर्वास्तिवाद हीनयान का वह प्रमुख सम्प्रदाय था जो उत्तरी भारत में प्रचलित था।[९९] मानव रूप में ही तथागत ने चार आर्य सत्यों और अष्टांगिक मार्ग[१००] की शिक्षा दी थी। इस यान में तथागत बुद्ध की प्रतीकात्मक पूजा होती थी। ये प्रतीक मुख्यतः ३ प्रकार के थे—

शारीरिक, उद्देशिक और पारिभोगिक।

शारीरिक प्रतीकों में अस्थियां, केश और नख थे। उद्देशिक प्रतीकों के अन्तर्गत धर्म चक्र और त्रिरत्न का चित्रण किया जाता था। पारिभोगिक प्रतीकों में पिण्ड पात्र, क्षत्र तथा बोधि वृक्ष थे। शारीरिक धातु के ऊपर चैत्य और स्तूपों का निर्माण करवाया गया था इसलिए ये भी पूजे जाते थे। इन प्रतीकों का सुन्दर चित्रण भरहुत और सांची के तोरण-द्वारों पर किया गया है।

हीनयानी लोगों के निर्वाण सम्बन्धी विचार अपने थे, परन्तु वे बहुत कुछ "नैयायिक मुक्ति" के समान थे।[१०१] अश्वघोष का निर्वाण सम्बन्धी विचार बिल्कुल हीनयान के समान है। ये निर्वाण को दुख का अभाव मात्र मानते हैं परन्तु महायान मतवाले निर्वाण को आनन्द स्वरूप मानते हैं।[१०२] अश्वघोष ने सौन्दरनन्द" में कहा है कि जैसे बुझा हुआ दीपक न तो पृथ्वी पर जाता है, न आकाश में, न किसी दिशा में, न विदिशा में, प्रत्युत् स्नेह (तेल) के न रहने पर केवल शान्ति को प्राप्त होता है।[१०३] उसी प्रकार निर्वाण को प्राप्त हुआ ज्ञानी पुरुष न तो कहीं जाता है पृथ्वी पर, न अन्तरिक्ष में, न दिशा अथवा विदिशा में, वह तो क्लेशों के क्षय हो जाने पर शान्ति अवस्था को प्राप्त कर लेता है।[१०४]

वस्तुतः ज्ञान के उदय होने पर अविद्या के पाश जब स्वतः छिन्न-भिन्न हो जाते हैं तब उस अर्हत की अवस्था का नाम निर्वाण है।

महायान—यह पहले ही कहा जा चुका है कि अश्वघोष के समय में "चतुर्थ बौद्ध संगीति" हुई थी, जिसमें महायान शाखा पर बहुत बल दिया गया था। इस शाखा में बुद्ध की अलौकिक रूप में पूजा होती थी।

अश्वघोष के समय में ही कुषाण सम्राट् कनिष्क के तृतीय वर्ष में "बल" ने सारनाथ में बोधिसत्व की पूर्णकाय प्रतिमा की स्थापना की थी जो इस

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

समय सारनाथ के संग्रहालय में विद्यमान है। यह "चुनार सैण्ड स्टोन" की बनी हुई है। कुषाण कालीन बहुत से लेखों में महासांघिकों का उल्लेख है जिनका महायान से सम्बन्ध था। कनिष्क ने अपने सिक्कों पर भी बुद्धमूर्ति बनवाई थी।[१०५]

महायान शाखा पर नागार्जुन ने बहुत बल दिया। इसकी दोनों दार्शनिक शाखाएँ—माध्यमिक और योगाचार—दूसरी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में पूर्णरूप से विकसित हुईं।[१०६] डॉ० ए० एस० अल्टेकर के अनुसार महायान की इन दोनों शाखाओं में इतना अधिक दार्शनिक अन्तर बढ़ गया था कि विद्वानों की आँखों में यह खटकने लगा था। कनिष्ठ अश्वघोष ने उपर्युक्त दोनों शाखाओं के विचारों को एक में मिलाने का प्रयास किया जैसा कि उसके ५वीं शताब्दी के विरचित प्रसिद्ध ग्रन्थ "महायान श्रद्धोत्पाद" से प्रकट होता है।[१०७]

योगाचार—सौन्दरनन्द के अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है कि, अश्वघोष के समय में महायान(महासांघिक) शाखा का योगाचार निकाय विशेष रूप से प्रचलित था। महाकवि ने योगाचार का ही वर्णन नहीं किया है प्रत्युत योगानुकूल स्थान, योगविधि, योगसाधन, योगफल तथा योगाचारी बुद्धशिष्यों की लम्बी तालिका भी प्रस्तुत की है। स्वर्गीय आचार्य नरेन्द्र देव के अनुसार "अश्वघोष, आर्यासंग और दिङ्नाग इस वाद के आचार्य हैं।"[१०८] ज्ञातव्य है कि अश्वघोष इन सबसे पहले हुए थे।

'योगाचार' के अर्थ के विषय में विद्वानों ने दो मत प्रतिवादित किये हैं। प्रथम तो यह कि गोगाचारी वाह्य जगत की काल्पनिकता को समझने के लिए योग का अभ्यास करते हैं। दूसरा यह कि योगाचारी योग अर्थात जिज्ञासा और आचार अर्थात समाचणर का अभ्यास करते हैं।[१०९]

निर्जन और निःशब्द शय्या तथा आसन को योगाचार के अनुकूल बताया गया है।[११०] ऐसे स्थान निर्जन वन ही थे जो योगाचार के लिए मंगलकारी थे।[१११]

योग विधि को समझाते हुए अश्वघोष ने कहा है कि एकान्त में उत्तम आसन बांधकर, शरीर को बिल्कुल, सीधा रखकर, स्मृति को सम्मुख रखकर अपने चंचल चित्त को नाक की नोक पर, ललाट पर या दोनों भौहों के बीच में किसी भी एक चीज पर स्थिर करना चाहिए।[११२] यदि कामवासना सम्बन्धी विचार परेशान करें तो कपड़े पर पड़ी धूल के समान उन्हें दूर फेंक देना चाहिए।[११३]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

यदि द्रोह या हिंसा चित्त को क्षुब्ध करे तो उनको उनके प्रतिपक्षी भाव मैत्री और करुणा से शमित करना चाहिए।[११४] जिस प्रकार सुनार (कर्मार) धूल से ढके हुए सोने को क्रम पुर्वक जल से शुद्ध करके अग्नि में तपाता है और बार बार उलटता पुलटता है, उसी प्रकार 'योगाचारी' व्यक्ति दोषयुक्त चित्त को दोषों से भली भाँति शुद्ध करके मन को शान्त और परिशुद्ध करता है।[११५] योगाचारी, अनुराग या भक्ति से नहीं, केवल भूख मिटाने के लिए ही शरीर को भोजन देता है।[११६] दिन में मन को नियंत्रित करके, रात्रि में निद्रा को दूर करके, रात्रि को योगाभ्यास करना चाहिए।[११७] निद्रा योग का शत्रु है।[११८] इसलिए सदा जागरण के लिये जल से मुख धोना चाहिए, सभी दिशाओं में देखना चाहिए और ताराओं की ओर देखना चाहिए।[११९]

इस प्रकार निद्रा पर विजय पा लेने के पश्चात् तीन पहर वाली रात्रि के प्रथम पहर को योगाभ्यास में बिताकर दूसरे पहर में विश्राम के लिए सावधान होकर[१२०] दाई करवट आलोक (प्रकाश) की भावना करते हुए, हृदय में होश (ज्ञान) रखकर, शान्त चित्त होकर सोना चाहिए।[१२१] रात्रि के तीसरे पहर उठकर, टहलते हुए या बैठे हुए ही संयतेन्द्रिय होकर मानसिक शुद्धि में पुनः योगारूढ़ होना चाहिए।[१२२]

योगाचारी मनुष्य योगाभ्यास के द्वारा तत्व को जानकर मृत्यु-काल से संत्रस्त नहीं होता।[१२३] बुद्ध चरित में इसी को 'ध्यान योग'[१२४] कहा गया है। जिसे पा जाने पर परम पद (अमृत पद्म) प्राप्त होता है।[१२५]

योगाभ्यासी भिक्षु-भिक्षुणियों की लम्बी तालिका अश्वघोष ने प्रस्तुत की है जिसमें, कौण्डिन्य, नन्द, क्रमिल, अनिरूद्ध, तिष्य, उपसेन, विमल, राध, बाष्प, उत्तर, धौतकि, मोहराज, कात्यायन, द्रव्य, पिलिन्दवत्स, भद्दालि, भद्रायण, सर्पदास, सुभूति, गोदत्त, सुजात, वत्स, संग्रामजित, भद्रजित, अश्वजित, श्रोण, शोण, कोटिकर्ण, क्षेमा, अजित, नन्दक, नन्दमाता, (महा प्रजापती गौतमी) उपालि, वागीश, यश, यशोद, महाह्वय (महानाम) वल्कलि, राष्ट्रपाल, सुदर्शन, स्वागत, मेधिक, कम्फिन, औरुविल्व, काश्यप, महाकाश्यप, तिष्य, नन्द, पूर्ण, पूर्णक, शोणापरान्त, शारद्वती पुत्र, सुबाहु, चुन्द, कौन्देय, काप्य, भृगु, कुष्ठधान, शैवल, रेवत, कौष्ठिल, मौद्गल्यायन और गवांपति आदि के नाम प्रमुख हैं।[१२६]

मूल सिद्धान्त

श्रद्धा और इन्द्रिय-निग्रह—जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि अश्वघोष ने बौद्ध धर्म को मूलरूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है क्योंकि उस

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

समय बौद्ध धर्म में अन्य धर्मों के तत्व समाहित हो रहे थे। कवि ने श्रद्धा-शील और इन्द्रिय-निग्रह पर बल देकर चार आर्य सत्यों के उपदेश को दुहराया है।

कवि ने श्रद्धा को धर्म-उत्पादन की पहली सीढ़ी माना है।[१२७] श्रद्धा (विश्वास) और प्रयोजन दोनों मिलकर मनुष्य को किसी कार्य को करने की ओर प्रेरित करते हैं। पृथ्वी के अन्दर जल है यह विश्वास (श्रद्धा) जब मनुष्य को होता है, तभी जल की आवश्यकता पड़ने पर वह प्रयत्न पूर्वक पृथ्वी को खोदता है।[१२८]

श्रद्धा के लिए कवि ने योगाचार को महत्व दिया है। सारा दिन और रात्रि का प्रथम तथा अन्तिम याम योगाचार में बिताना चाहिए और मध्य याम में स्मृति पूर्वक (होश रखकर) शयन करना चाहिए।[१२९] यदि हृदय में अचानक अभिमान का उदय हो जाय तो अपने केश विहीन मस्तक को छूकर अपने काषाय वस्त्र तथा भिक्षापात्र (पिण्डपात्र) को देखकर और अन्य भिक्षुओं के कर्म तथा आचरण का ध्यान करके तुरन्त ही अभिमान को दबा देना चाहिए।[१३०]

इन्द्रिय निग्रह का महत्व प्रत्येक धर्म में माना गया है। चंचलता के कारण इनका निग्रह आवश्यक है। शत्रु अग्नि, सर्प, और वज्र से उतना नहीं डरना चाहिए जितना स्वयं अपनी इन्द्रियों से, क्योंकि वे निरन्तर चोट किया करती हैं।[१३१] इन्द्रियों की मार शत्रु की मार से भी कठिन है। शत्रु से मारा जाकर मनुष्य नर्क नहीं जाता, परन्तु चपल इन्द्रियों से मारा जाकर मनुष्य बलात नर्क को जाता है।[१३२] इन्द्रिय-निग्रह का सबसे बड़ा शत्रु निद्रा है। निद्रा ही मानसिक अहंकार को उत्पन्न करती है। उसके आधीन व्यक्ति कभी भी सुखी नहीं रह सकता। बैठते-उठते, चलते-फिरते, खड़े होते, देखते ऐसे ही अन्य कार्य करते समय अपने सभी कार्यों को अच्छी तरह वास्तविक रूप में जानते हुए अपनी स्मृति (जागरूकता) को स्थिर रखना चाहिए। क्योंकि द्वार पर नियुक्त द्वारपाल की भांति जिसकी स्मृति स्थिर है उसके ऊपर दोषों का आक्रमण नहीं होता जिस प्रकार रक्षित नगर पर शत्रुओं का आक्रमण नहीं होता।[१३३]

दो अन्त और मध्यम मार्ग

तथागत बुद्ध ने "ऋषिपत्तन मृगदाव" (वर्तमान सारनाथ, वाराणसी के पास) में पंच वर्गीय भिक्षुओं को उपदेश देते हुए कहा था, कि दोनों अन्तों अर्थात चरम सीमाओं-तप या काय क्लेश की चरम सीमा और भोग या काय-सुख

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

की चरम सीमा को त्याग कर मैंने तीसरा मार्ग खोजा है जिसे "माध्यम मार्ग" कहते हैं। यह मार्ग दुःख का अन्त करके प्रीति-सुख के परे चला जाता है।[१३४] यह मध्यम मार्ग दोनों चरम सीमाओं वाले मार्गों के बीच से होकर जाता है।[१३५]

चार आर्य सत्य

अश्वघोष बुद्ध वाणी में ही बौद्ध धर्म की व्याख्या करके पथ भूले हुए राही को पथ पर लाना चाहते थे। भगवान बुद्ध ने देखा था कि संसार में सभी दुःखी हैं—रोगी रोग से दुःखी है, वृद्ध वृद्धावस्था से, मृतक मृत्यु से, धनी धन-रक्षा की चिन्ता से और प्रेमी प्रेम को अविछिन्न बनाये रखने के प्रयत्न से। तथागत ने दुःख के मूल को समझा था। वह इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे, कि दुःख सभी के मूल में है। दुःख का कारण है, दुःख का निरोध है और उसके दूर करने का उपाय भी है। यही चार आर्यसत्य[१३६] या बौद्ध धर्म के प्राथमिक सिद्धान्त हैं जिनका उल्लेख कवि ने किया है।

दुःख आर्यसत्य—शरीर और दुःख दोनों भिन्न नहीं किए जा सकते। जन्म भी दुःख है, जरा भी दुःख है, रोग भी दुःख है, मृत्यु भी दुःख है, अप्रिय लोगों से मिलन भी दुःख है, प्रिय लोगों से वियोग भी दुःख है और इच्छा होते किसी वस्तु का न मिलना भी दुःख है।[१३७] जिस प्रकार पृथ्वी के अन्दर पानी, शमी लकड़ी के अन्दर अग्नि और आकाश में वायु रहती है उसी प्रकार चित्त और शरीर में दुःख रहता है।[१३८] दुःख आज है कल नहीं रहेगा या आज है कल नहीं था ऐसी बात नहीं है। दुःख चित्त और शरीर के साथ वैसे ही सम्बन्धित है जैसे अग्नि के साथ ऊष्णता, पृथ्वी के साथ कठोरता, पानी के साथ द्रवता और पवन के साथ अस्थिरता।[१३९]

कुछ मतावलम्बियों ने बौद्ध लोगों को दुःख वादी माना है, क्योंकि ये दुःख को प्रथम आर्य सत्य मानते हैं। परन्तु यह सत्य से परे है। दुख वादी के हाथ में दुख-परिहार का उपाय नहीं रहता, परन्तु बौद्ध लोग तो दुःख निरोध (दुःख निरोध अरियसच्चं) तथा उसके उपाय (मार्ग) को भी आर्य सत्य मानते हैं (दुख निरोधगामिनी पटिपदा अरिय सच्च)[१४०] इसलिए वे दुःखवादी नहीं कहे जा सकते हैं।

दुःख समुदय आर्य सत्य—दुःख क्यों उत्पन्न होता है? अश्वघोष के अनुसार दुःख का मूल कारण है जन्म और जन्म का भी मूल कारण है तृष्णा समूह।[१४१] जन्म ग्रहण के कारण को ही बुद्ध ने "प्रतीत्य समुत्पाद" कहा था।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अश्वघोष ने उसी ओर संकेत किया है। भगवान बुद्ध ने "प्रतीत्य समुत्पाद" में कहा था "यदि ऐसा है तो ऐसा होगा, यदि ऐसा नहीं है तो ऐसा नहीं होगा।"[१४२] यदि दूध है तो दही बन सकता है, यदि दूध नहीं है तो दही नहीं बन सकता। प्रतीत्य समुत्पाद में जन्म-हेतु की क्रमबद्ध बारह कड़ियां हैं—

(१) अविद्या (२) संस्कार (३) विज्ञान (४) नाम रूप (५) षडायतन (६) स्पर्श (७) वेदना (८) तृष्णा (९) उपादान (१०) भव (११) जाति (जन्म) और (१२) जरा-मरण।

सारांश में जरामरण दुःख है। उसका कारण है जन्म (जाति)। इसी प्रकार नीचे से क्रमवार सभी कड़ियां एक दूसरे का हेतु हैं, जिनसे दुःख उत्पन्न होता है। "धर्म चक्र प्रवर्तन सूत्र" में दुःख समुदय का मूल कारण तृष्णा (तण्हा) बताई गई है, जो तीन प्रकार की—काम तृष्णा, भव तृष्णा और विभव तृष्णा होती है।[१४३]

दुःख निरोध आर्य सत्य—"सौन्दरनन्द के अनुसार दुःख निरोध (उपचार) के लिए धैर्य, सरलता, लज्जा, अप्रमाद, (सावधानी) एकान्त, अल्पेच्छता, सन्तोष, आसक्ति का अभाव, सांसारिक प्रवृत्ति से अरुचि और क्षमा की नितान्त आवश्यकता है।[१४४]

दुःख निरोध गामिनी प्रतिपदा आर्य सत्य—आर्य सत्यों में चतुर्थ सत्य "मार्ग"[१४५] है, जिस पर चलकर मनुष्य शान्ति को प्राप्त कर सकता है। यह मार्ग आठ अंगों वाला है जिसके कारण इसे अष्टांगिक मार्ग कहते हैं।

अष्टांगिक मार्ग

अष्टांगिक मार्ग के आठ अंग इस प्रकार हैं[१४६] :—

(१) सम्यक दृष्टि (सम्मादिट्ठि)
(२) सम्यक् संकल्प (सम्मासंकप्पो)
(३) सम्यक् वचन (सम्मावाचा)
(४) सम्यक् कर्मान्त (सम्माकम्मन्तो)
(५) सम्यक् आजीविका (सम्माआजीवो)
(६) सम्यक् व्यायाम (सम्मावायामो)
(७) सम्यक् स्मृति (सम्मासति)
(८) सम्यक् समाधि (सम्मासमाधि)

इन सभी अंगों को मिलाकर "दुःख निरोध गामिनी प्रतिपदा" कहते हैं। अश्वघोष ने उपर्युक्त अंगों को प्रज्ञा, शील और समाधि सम्बन्धी तीन भागों में विभक्त किया है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

प्रज्ञा संबंधी मार्ग—इस मार्ग में सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प (दृढ़ निश्चय) और सम्यक् व्यायाम (प्रयत्न) आते हैं। यह मार्ग ज्ञान से सम्बन्धित है। इन अंगों का आश्रय प्रज्ञा है। प्रज्ञा-मार्ग पर चलने से क्लेशों का विनाश होता है।[१४७] जो वस्तु जैसी है उसे उसी रूप में जानना ही सम्यक् दृष्टि है। जीवन दुःखमय है, दुःख का कारण है और उसे दूर भी किया जा सकता है यही वास्तविक चिंतन सम्यक् दृष्टि कहलाता है। लक्ष्य को प्राप्त करने का दृढ़ निश्चय ही सम्यक् संकल्प है। दुर्व्यसनों को त्यागने का प्रयत्न तथा मन के पापभावों को दमन करने के प्रयत्न को सम्यक् व्यायाम या सम्यक् प्रयत्न कहते हैं। सम्यक् व्यायाम उत्पन्न अकुशल चित्त को आगे बढ़ने से रोकता है, अनुत्पन्न अकुशल को उत्पन्न नहीं होने देता, उत्पन्न कुशल को आगे बढ़ाता है और अनुत्पन्न कुशल को उत्पन्न करता है।

शील सबंधी मार्ग—इस मार्ग में सम्यक् वचन, सम्यक् कर्मान्त और सम्यक् आजीविका आती है। ये शील के मार्ग आचरण से संबन्धित हैं। इनका आश्रय शील है और इनके द्वारा कर्मों का निग्रह होता है।[१४८]

शील का सम्बन्ध शरीर, वचन और कर्म (व्यापार) से है। मनुष्य को आजीविका शुद्ध बनाने के लिए सात कर्मों की आवश्यकता है, जिनमें से तीन—जीव हिंसा न करना, चोरी न करना और व्यभिचार न करना शरीर से सम्बन्धित हैं तथा शेष चार—झूठ न बोलना कठोर न बोलना, व्यर्थ न बोलना और चुगली न करना वचन से सम्बन्धित है।[१४९] शील का तृतीय सोपान कर्म से सम्बन्धित है जिसकी शुद्धता के लिए कपट का त्याग, सिद्धान्तों के प्रतिकूल आजीविका का त्याग तथा प्रलोभनों का त्याग आवश्यक है।[१५०] मानव-जीवन में शील का विशेष महत्व है। वस्तुतः धर्मवान वही है जिसका शील विशुद्ध और अखण्ड है, अविछिन्न और अविनष्ट है। शील ही सद्‌गुणों का आश्रय है।[१५१] शील के अक्षुण्ण और विशुद्ध रहने पर इन्द्रियां चचल नहीं होने पातीं।[१५२] शील के रहते हुए क्लेशों (दोषों) का अंकुरण नहीं हो सकता जैसे अकाल में बीज अंकुरित नहीं होता। शीलाचारी पुरुष के मन पर आक्रमण करने में दोष भी लज्जित होते हैं।[१५३]

समाधि सम्बन्धी मार्ग—इस मार्ग में सत्य की प्राप्ति के लिये न्याय पूर्वक लगी हुई सम्यक् स्मृति तथा सम्यक् समाधि आती है।[१५४] इन दोनों मार्गों से चित्त का निग्रह होता है। इनका आश्रय शम (शान्ति) है। जिन विषयों का ज्ञान प्राप्त हो चुका है, उनको स्मृति में रखना तथा शरीर को शरीर, वेदना को वेदना, रूप को रूप, पहचानना ही सम्यक् स्मृति है। इसके लिये मांस

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

हड्डी, त्वचा, अंतड़ी, विष्टा, पित्त, लहू और पीव से निर्मित इस शरीर की नश्वरता को सदा ही स्मृति में रखना आवश्यक है।[१५५] स्मृति (जागरूकता) रहने पर दोष निष्क्रिय हो जाते हैं। सम्यक् स्मृति के समान न कोई मित्र है और न कोई रक्षक। सम्यक् स्मृति के नष्ट हो जाने पर सब कुछ नष्ट हो जाता है।[१५६] दृढ़ चित्त वाले वीर, स्मृति रूपी कवच पहन कर विषयों की रणभूमि में उस तरह आचरण करते हैं जैसे वे कवच पहन कर शत्रुव्यूह में निर्भयतापूर्वक घुस जाते हैं।[१५७]

समाधि क्लेषों को रोकती है, जैसे पर्वत, नदियों के महावेग को रोकता है। समाधिस्थ होने पर दोष आक्रमण नहीं करते (स्थिते समाधौ हि न धर्ष-यन्ति दोषा)[१५८]। सर एम० मोनियर-विलियम्स के अनुसार समाधि चित्त की एकाग्रता है।[१५९] "खाली समाधितो एक नकारात्मक स्थिति है, क्यों कि वह इतना ही तो करती है कि संयोजनों को अस्थायी तौर पर स्थगित रखे। इसमें मन का स्थायी परिवर्तन निहित नहीं है। सम्यक् समाधि एक भावात्मक वस्तु है। यह मन को कुशल कर्मों का एकाग्रता के साथ चिन्तन करने का अभ्यास डालती है और इस प्रकार मन की संयोजनोत्पन्न अकुशल कर्मों की ओर आकर्षित होने की प्रावृत्ति को ही समाप्त कर देती है। सम्यक् समाधि मन को कुशल और हमेशा कुशल ही कुशल सोचने की आदत डाल देती है। सम्यक् समाधि मन को वह अपेक्षित शक्ति देती है, जिससे आदमी कल्याणरत रह सके।"[१६०]

महत्व—शील, समाधि और प्रज्ञा रूपी तीन स्कन्धों वाले अष्टांगिक, अविनाशी और श्रेष्ठ मार्ग का आचरण करके मनुष्य दुःख के कारण दोषों से मुक्त हो जाता है और अत्यन्त मंगलमय निर्वाण पद को प्राप्त करता है।[१६१]

निर्वाण मार्ग

निर्वाण परम शान्ति है, जिसके लिए अर्हत् होना आवश्यक है। अर्हत् पद प्राप्त करने के लिए चार फल और चार ध्यानों को प्राप्त करना अनिवार्य है।

चार फल—बोधिअंग, अष्टांगिक मार्ग, स्मृति उपस्थान और आर्य बलों से जब मानव मार की सेना को तथा मिथ्या ज्ञान रूपी शत्रुओं को पराजित कर लेता है और आत्मदृष्टि को सर्वथा उन्मीलित कर चार आर्य सत्यों का संशय रहित हो शीलव्रत द्वारा धर्म का दर्शन करता है तब वह निर्वाण के प्रथम फल (श्रोतापत्ति फल)[१६२] को प्राप्त होता है।[१६३]

इस अवस्था के बाद जब उसे यह भाषित हो जाता है, कि कार्य सकारण होता है, विनाशक विचारों से मुक्ति, (नाशकैर्दृष्टिगतैर्विमुक्तः) शरीर की

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

असारता में विश्वास, गुरु में पूर्ण आस्था, स्मृति की स्थिरता प्राप्त कर योग द्वारा काम-इच्छा (काम-राग) और प्रतिहिंसा[१६४] को क्षीण कर देता है तब द्वितीय फल (सकृदागामि फल)[१६५] प्राप्त होता है। इस फल को प्राप्त कर लेने पर उस लोक से दुःख का अन्त करने के लिए एक ही बार लौटना पड़ता है।

द्वेष, क्रोध, धृति और क्षमा को जीतकर तीन अकुशल मूलों (लोभ, द्वेष और मोह) को, तीन विमोक्ष आयतनों (शून्यता, अनिमित्त और अप्रणिहित)[१६६] को काटकर, काम-मूल शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर, तृतीय फल (अनागामि फल)[१६७] को प्राप्त करता है। यह निर्वाण की निकटतम अवस्था है। यहाँ पहुँच कर पर-अपर का ध्यान नहीं रहता और "वसुधैव कुटुम्बकम्" का भाव उत्पन्न हो जाता है। तृतीय फल प्राप्त करके निर्वाण नगर के प्रवेश-द्वार पर पहुँचता है। चतुर्थ फल अर्हत्व है।

चार ध्यान—अर्हत्व प्राप्त करने के लिए चार ध्यान अपेक्षित हैं। तृतीय फल प्राप्त कर लेने के पश्चात् मनुष्य वह काम वासनाओं और अकुशल धर्मों से मुक्त हो, तर्क और विचार से युक्त, विवेक से उत्पन्न प्रीति व सुख से युक्त अर्हत्व की प्रथम ध्यान अवस्था में पहुँचता है।[१६८] प्रथम ध्यान के पश्चात् वितर्क (संशय) और विचार रहित, मानसिक एकाग्रता से उत्पन्न शान्ति से युक्त होने पर द्वितीय ध्यान का लाभ करता है। यह ध्यान प्रीति व सुख तथा आध्यात्मिक कल्याण का प्रदाता है।[१६९] द्वितीय ध्यान में प्रीति और सुख का आभास रहता है। प्रीति भी दुःख का कारण है। प्रीति को नाश करने के लिए आगामी ध्यान आवश्यक है।[१७०] तृतीय ध्यान की प्राप्ति के लिए प्रीति से भी विराग होना आवश्यक है। शरीर से सुख का अनुभव करता हुआ, ज्ञान (होश), उपेक्षा और स्मृति (सावधानी और जागरुकता) से युक्त होकर, धैर्यपूर्वक विहार करता हुआ तृतीय ध्यान प्राप्त करता है।[१७१] किन्तु सुख की अनुभूति भी एक विकार है, जिससे कम्पन होता है और कम्पन से दुःख होता है। इसलिए चतुर्थ ध्यान प्राप्ति के लिए सुख विकार को भी त्यागना पड़ता है।[१७२] सुख-दुःख का परित्याग कर (अथ प्रहाणात्सुखदुखयोश्च)[१७३] विशुद्ध चतुर्थ ध्यान प्राप्त होता है, जो उपेक्षा व स्मृति से युक्त तथा सुख-दुःख के विकार से मुक्त है।[१७४] यह चतुर्थ ध्यान अर्हत् पद का लाभ कराने वाला है।[१७५] जिसके प्राप्त कर लेने पर प्रिय और अप्रिय, अनुरोध और विरोध सब का अभाव हो जाता है।[१७६] यही अर्हत् पद की अवस्था है। अर्हत् ही निर्वाण लाभ करता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

बौद्ध दर्शन

बौद्धाचार्य अश्वघोष ने भगवान बुद्ध के मुख्य-मुख्य दार्शनिक तत्वों का भी उल्लेख किया है। सौन्दरनन्द में सर्वमनित्यम्, सर्वं शून्यं, सर्वं अनात्मम्,[१७७] सर्वं दुःखं व निर्वाणं शान्तं आदि शब्दों के द्वारा उन्होंने अपना दार्शनिक पक्ष प्रस्तुत किया है।

सर्वमनित्यम्—सौन्दरनन्द में कहा गया है कि संसार अनित्य है। इसकी कोई भी वस्तु नित्य नहीं है। परिवर्तनशील जगत में परिवर्तन ही सत्य है। संसार में जो पहले नहीं था वह होता है और जो है वह अभाव को प्राप्त होता है। यह होना और न होना कारण (हेतु) युक्त है, परन्तु "हेतु" स्वयं ही विनाशवान है, इसलिए उससे उत्पन्न सम्पूर्ण जगत अनित्य है,[१७८] सत्तारहित है। शरीर, त्वचा, स्नायु, चर्बी, रुधिर, हड्डी, मांस, केश आदि अपवित्र और नश्वर वस्तुओं से भरा हुआ है, उसमें किंचित मात्र भी सार नहीं है।[१७९]

सर्वं शून्यम्—व्यक्ति संस्कारों का बना हुआ है। इसका कर्ता या ज्ञाता कोई नहीं है।[१८०] नागार्जुन 'प्रतीत्य समुत्पाद' को ही शून्य मानते हैं।[१८१] उनका विचार है, कि वस्तुओं का ऐसा कोई धर्म नहीं है जिसकी उत्पति किसी अन्य पर निर्भर न हो। इसलिए जितने धर्म हैं वे सब शून्य हैं।[१८२]

सर्वमनात्मम्—संसार की समस्त वस्तुएँ आत्मारहित हैं, उनका कोई स्वरूप नहीं है। "संसार निरीह और परतंत्र है, कार्यों का कोई ईश्वर नहीं है। कारण के आश्रय से ही सबकी उत्पत्ति होती है। इसलिए संसार अनात्म है।"[१८३] सर्वमनात्मम् की सुन्दर व्याख्या "मिलिन्द प्रश्न" में मिलती है। यूनानी राजा मिलिन्द (मिनेण्डर) ने भिक्षु नागसेन से पूछा, कि आप अनात्मवादी हैं, तो हमें बताइये कि नागसेन कौन है? क्या सिर के बाल नागसेन हैं? क्या मांस, त्वचा, नाड़ियाँ दाँत नागसेन हैं? या वह बाहर का आकार या वेदना अथवा संस्कार नागसेन है? राजा के प्रत्येक प्रश्न का उत्तर नागसेन का "नहीं" था। राजा का अन्तिम प्रश्न था कि "तो क्या इन सब वस्तुओं को मिलाकर नागसेन कहते हैं अथवा इनसे बाहर कोई चीज है जो नागसेन है?" नागसेन ने इसका भी वही लघु उत्तर "नहीं" दिया।

क्रोधित राजा को, बौद्ध भिक्षु ने उनसे ही प्रश्न करके और उनके ही उत्तरों से सन्तुष्ट किया। नागसेन और राजा के प्रश्नोत्तर इस प्रकार हैं:—

नागसेन—"राजन्! क्या आप पैदल आये हैं?"

"नहीं, मैं पैदल नहीं रथ से आया हूँ।"

"राजन्। तब तो आप जानते होंगे कि रथ क्या है?"

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

"क्या, रथ में लगी हुई पताका रथ है ?"

मिलिन्द ने उत्तर दिया, "नहीं।"

"क्या वे पहिए रथ हैं अथवा धुरी रथ है ?"

"नहीं।"

"तो क्या वे रस्सियाँ अथवा कोड़ा (कुशा) रथ है ?"

"नहीं।"

"तब क्या इन अवयवों से बाहर कोई चीज़ है जो रथ है ?"

मिलिन्द ने स्तम्भित होकर उत्तर दिया, "नहीं"।

नागसेन ने कहा—"तो फिर रथ नाम की कोई चीज नहीं है।"

"राजन् ! क्या आप झूठ बोले थे ?"

मिलिन्द ने कहा, "श्रद्धेय भिक्षु ! मैं झूठ नहीं बोला था। धुरी, पहिये, रस्सी सबके सहित होने पर लोग इसे रथ कहते हैं।" प्रसन्न होकर नागसेन ने कहा कि राजन ! तुमने ठीक समझा, जिस प्रकार धुरी, पहिये और रस्सियों आदि के संघात विशेष का नाम ही रथ है, उसी प्रकार पांच स्कन्धों (रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार और विज्ञान) के अतिरिक्त कोई आत्मा नहीं है।[१८४]

सर्वं दुःखम्—संसार में जिसका जन्म होता है वह वध और बन्धन के हेतु रूप कर्मों के सम्पर्क से छुटकारा नहीं पा सकता। यहाँ दुःख प्रतिकारक उपाय को ही सुख समझ लिया जाता है। इसलिए संसार को अश्वघोष ने दुःखमय माना है।[१८५] दुःखमय संसार को पार करने के लिए बोधि अंग[१८६] और (अष्टांगिक) मार्ग[१८७], स्मृति उपस्थान[१८८] और आर्य बल[१८९] अपेक्षित हैं।

निर्वाणं शान्तम्—तथागत ने कहा था कि निर्वाण ही शान्ति है। जब तक निर्वाण की प्राप्ति नहीं होती, शान्ति नहीं मिल सकती। निर्वाण का तात्पर्य है बुझ जाना। जिस प्रकार तेल के समाप्त हो जाने पर प्रदीप शान्ति को प्राप्त हो जाता है, वह न तो पृथ्वी पर रहता है न आकाश में जाता है और न किसी दिशा व विदिशा में ही जाता है, उसी प्रकार निर्वाण को प्राप्त हुआ अर्हत् न पृथ्वी पर रहता है और न किसी दिशा अथवा विदिशा में ही जाता है, वह तो दोषों (आश्रवों के क्षीण हो जाने पर केवल शान्ति को प्राप्त करता है।[१९०] महावस्तु नामक संस्कृत बौद्ध ग्रन्थ में भी निर्वाण की उपमा तेल प्रदीप से दी गई है।[१९१] पुराने इन्धन को समाप्त करके जो नवीन इन्धन (आश्रवों अथवा दोषों) को अपने पास नहीं आने देते उन्हें मृत्युराज का दर्शन नहीं होता।[१९२]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

जनप्रिय उपासना

अश्वघोष के समय में लोग अनेक धार्मिक अन्ध विश्वासों को मानते थे। समाज में विविध पूजा—पाठों को मान्यता प्राप्त थी। सन्तानोत्पत्ति तथा उसके कल्याण के लिए अनेक मंगल कर्मों का अनुष्ठान किया जाता था। इह लोक और परलोक में लोगों का अटूट विश्वास था। स्वर्ग पाने के लिए लोग उद्यान और उपवन लगवाते थे, देवालय, कूप, आश्रम तथा पोखर बनवाते थे।[१९३] मृत्यु के समय चित्त की चंचलता से पशुयोनि और नर्क में जन्म होना माना जाता था।[१९४] स्वर्ग प्राप्ति के लिए तप को साधन माना जाता था (स्वर्गप्रधानं तपसः फलं च)।[१९५]

व्रत, जप और तंत्र-मंत्र के विश्वास ने लोगों के हृदय में घर कर लिया था। खोई हुई वस्तु की प्राप्ति के लिए तथा किसी के कल्याण के लिए लोग देवालयों में जप करते तथा व्रत रखते[१९६] थे। तंत्र-मंत्र में बढ़ते हुए अन्ध विश्वासों की कवि ने निन्दा की है, क्योंकि उनमें न संयम है, न संतोष और न जीवन ही है।[१९७]

नाग पूजा—अश्वघोष के समय में नाग-पूजा का महत्व था। लोग नाग पूजा में विश्वास करते थे। उसे सन्तानोत्पत्ति का हेतु मानते थे।[१९८] कवि के पहले से नाग पूजा होती रही थी। सर जान मार्शल ने द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व में नाग, नागिल तथा नागदत्त आदि शब्दों के आधार पर नाग सम्प्रदाय का होना माना है।[१९९] बुद्ध चरित में अश्वघोष ने कहा है कि सिद्धार्थ के जन्म लेने पर बड़े-बड़े सर्पों (महोरगाः) जिन्होंने अतीत के बुद्धों की सेवा की थी—धर्म विशेष की प्यास से उनके ऊपर व्यजन डुलाये और भक्ति के कारण अपने विलक्षण नेत्रों से मन्दार पुष्प बरसाये थे।[२००]

तथागत के निर्वाण के समय नाग दुःख से व्याकुल हो उठे थे। ऐसे दुःख के समय आकाश में पाँच फण वाले नाग वर्तमान थे, जिनके नेत्र शोक से लाल थे। उनके फण बन्द थे। उनके शरीर निर्जीव से जान पड़ते थे। वेदना के कारण उनके निश्वास गर्म थे।[२०१] उस समय नागों का इतना अधिक महत्व बढ़ गया था कि नागों के नामों पर नगर और द्वारों के नाम रखे जाते थे। कवि ने एक नगर के "नाग द्वार" का उल्लेख किया है।[२०२] नाग लोग बौद्ध धर्म में दीक्षित थे। अश्वघोष के अनुसार तथागत ने अंग नगर में श्रेष्ठ,

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

दण्ड, श्वेत, पिंगल व चण्ड नामक महानागों को बौद्ध धर्म की दीक्षा दी थी।[२०३] लोग यह विश्वास करते थे कि असन्तुष्ट हो जाने पर नाग प्रलय के समान प्रचण्ड पवन उत्पन्न कर देते हैं।[२०४] नागों को विनाशकारी शक्ति माना जाता था। कुषाण कालीन ब्राह्मी अभिलेख में कौशिक कुटुम्ब की एक स्त्री "पोटनायस" द्वारा शकों के विनाश के लिए की गई नाग-पूजा का उल्लेख हैं।[२०५]

महावंश के अनुसार अशोक के समय में नाग लोगों ने बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया था।[२०६] विद्वानों का मत है कि बौद्ध दीक्षा ग्रहण कर लेने के कारण ही बुद्ध के साथ नागों का इतना गहरा सम्बन्ध जोड़ कर उन्हें महत्व प्रदान किया गया।[२०७]

साहित्यिक सामग्री के अतिरिक्त उस समय की पुरातात्विक सामग्री भी नाग-पूजा की पुष्टि करती है। नागपूजा का उल्लेख कुषाण सम्राट् कनिष्क[२०८] प्रथम के आठवें वर्ष में उत्कीर्णित एक प्रतिमाभिलेख में मिलता है। यह प्रतिमा मथुरा संग्रहालय में है और नाग–क्षत्र को प्रस्तुत करती है। यह क्षत्र (आच्छादन) नाग के ऊपर सप्त फणों वाला है। साथ ही लघु आकार में दो नाग सेवक भी चित्रित हैं। लेख में उद्यान (आराम) तथा सरोवर सहित नाग–प्रतिमा के समर्पण का उल्लेख है। नाग का नाम "स्वामी नाग" था।[२०९] प्रादेशिक संग्रहालय लखनऊ में एक चौकोर शिलापट्ट पर उत्कीर्णित एक अभिलेख में[२१०] कुषाण कालीन एक स्थानीय नाग "दधिकर्ण" का उल्लेख है। लेख की तिथि नष्ट हो गई है। डॉ० वोगेल[२११] ने इसकी तिथि कनिष्क सम्वत (जिसे सम्राट् कनिष्क ने चलाया था) का २६वां वर्ष माना है। दधिकर्ण-मन्दिर कनिष्क सम्वत ४७ में हुविष्क द्वारा विनिर्मित बौद्ध विहार के समीप ही था। दधिकर्ण के अभिलेख की पुष्टि एक अन्य अभिलेख[२१२] से भी होती है। यह अभिलेख "दैविल" द्वारा दी गई शिला पर उत्कीर्णित है। दैविल दधिकर्ण मंदिर का एक सेवक था।

क्षारगांव से प्राप्त नाग-प्रतिमा पर उत्कीर्णित अभिलेख से[२१३] भी तत्कालीन नाग-पूजा की पुष्टि होती है। लेख में नाग-प्रतिमा बनाने वाले "सेनहस्तिन्" तथा "भोमुक" नामक दो मित्रों का उल्लेख है। प्रतिमा का निर्माण कुषाण सम्वत् ४० में नाग देव को प्रसन्न करने के लिए हुआ था। एक अन्य ९ फिट ४ इन्च ऊँची नाग-प्रतिमा पर भी नागपूजा सम्बन्धी लेख[२१४] उत्कीर्णित है। प्रतिमा का क्षत्र ७ सर्प फणों से बना है। प्रतिमा के दोनों ओर सर्प को लिपटा हुआ दिखाया गया है। नाग-प्रतिमा का प्रकार तथा वेशभूषा

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

कुषाण कालीन बोधिसत्व के समान है। अभिलेख की तिथि कुषाण सम्वत् ५२, तृतीय मास, वर्षाकाल का २५वां दिन है।

यक्ष पूजा—नाग पूजा के साथ-साथ अश्वघोष के समय में लोग यक्ष और यक्षिणी-पूजा में भी विश्वास करते थे। बुद्ध चरित में कवि ने लिखा है कि सिद्धार्थ का जन्म होने पर यक्षाधिप कमल पुष्प लेकर नवजात शिशु के चारों ओर खड़े हुए थे।[२१५] अंग नगर में तथागत बुद्ध ने "पूर्ण भद्र यक्ष" को दीक्षा दी थी।[२१६] सर जान मार्शल[२१७] ने द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व में भी यक्ष पूजा का होना माना है। भरहुत तथा सांची की शिल्पकला में उत्कीर्णित यक्ष और यक्षिणी के चित्रों तथा यक्ष-दासी, यक्षयिन, यक्षी और यक्षिला शब्दों के आधार पर भी उस समय यक्ष—पूजा की पुष्टि होती है।

नागों और यक्षों की पूजा लोग हानिकर शक्तियों से तथा अपशकुनों से बचने के लिए करते थे। इनकी पूजा करने का एक ध्येय वरदान प्राप्त करना भी था। इन यक्ष और नागों की अर्द्धदेव के रूप में सांची तथा भरहुत के तोरणों पर उत्कीर्ण की हुई मूर्तियाँ मिली है। डॉ० कुमार स्वामी[२१८] का मत है कि यक्ष पूजा भक्ति पूजा का एक अंग थी, जिसमें मूर्ति, मन्दिर, वेदी, आदि के साधनों से पूजा की जाती थी।

यह तो सर्वविदित ही है कि अश्वघोष बौद्ध आचार्य थे और उनके दोनों ग्रन्थों—बुद्ध चरित और सौन्दरनन्द—का कथानक छठवीं शताब्दी ईसा पूर्व के महामानव बुद्ध के जीवन से सम्बन्धित घटनाएँ हैं, परन्तु उसे अपने शब्दों में लिखकर कवि ने विशिष्ट उपमाओं द्वारा स्वकालीन धार्मिक संस्कृति इंगित की है। कवि उस समय की धार्मिक दशा को भूला नहीं है। उसने उस समय में फलते फूलते हुए ब्राह्मण तथा बौद्ध धर्म का सुन्दर चित्रण किया है। यद्यपि जैनधर्म भी उस समय प्रचलित था जिसके प्रमाण हमें तत्कालीन पुरातात्विक सामग्री में मिलते है,[२१९] परन्तु कवि की कृतियों में उसका उल्लेख न मिलने के कारण उसका वर्णन यहाँ नहीं किया गया है। कवि की कृतियों में प्राप्त धार्मिक सामग्री की पुष्टि के लिए उस समय के प्राप्त अभिलेखों से भी सहायता ली गई है। यह मानना पड़ेगा कि कवि की कृतियों से उस समय के धार्मिक वातावरण पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय चार के सन्दर्भ

१. बु०च० ७।४
२. वही, ७।६
३. सौ० १।११
४. बु०च० २।३७
५. वही, २।३७
६. वही, ८।१५
७. वही, २।४९
८. वही, ११।६५
९. कैं० म० म्यूजियम नं० क्यू १३ पृष्ठ १८९
१०. एपी० इण्डि० जिल्द २३ पृ० ४२
११. सौ० १२।१२
१२. वही, १२।१२
१३. बु०च० १०।५
१४. वही, १०।५
१५. मनु० ३।७०
१६. बु०च० १।८३
१७. मनु० ३।७०
१८. सौ० १०।१०
१९. वही, १०।१०
२०. मनु० ३।८२
२१. अष्टा० ८।३।८३
२२. सौ० २।३१
२३. वही, १।१५, २।३६, ४४
२४. सौ० २।३६
२५. वही, ४।४६
२६. वही, ४।२, ११।४०
२७. वही, ९।१९, १०।३५
२८. बु०च० ४।७२

State Museum Library Lucknow 7129

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२९. वही, ९।१०
३०. सौ० ६।२६, ४६
३१. बु०च० २।२०
३२. वही, २।२०
३३, सौ० ४।२८ तथा बु०च० २।२०
३४. बु०च० १०।३
३५. वही, १।३ तथा सौ० ४।२
३६. बु०च० १०।३
३७. वही, ८।८१ तथा सौ० १०।८
३८. सौ० ११।४०
३९. बु०च० २।१२, १३
४०. वही, १।८८
४१. वही, २।५१
४२. सौ० ४।८
४३. वही, ११।४९
४४. बु०च० ८।८१
४५. सौ० ९।१८
४६. वही, १०।८
४७. वही, २।५१ तथा बु०च० ४।२२, ११।३
४८. महा० १।४।३ पृ० ३१३
४९. अष्टा० ५।३।३६
५०. महा० ५।३।९९
५१. वही, ५।२।७६
५२. बु०च० १०।३
५३. भा० सिक्के पृ० १३३, १३४, १३६
५४. वही, पृ० १३५
५५. वही, पृ० १३६
५६. सौ० ९।१८
५७. वही, १०।९
५८. वही, १०।८
५९. बु०च० ८।८१

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

६०. घोसुण्डी लेख–एपी० इण्डि० जिल्द १० अपेंडिक्स नं० ६
६१. एपी० इण्डि० जिल्द १० ल्यूडर्स लिस्ट नं० १४,
६२. सौ० १।५ : तस्य विस्तीर्णतपसः पार्श्वे हिमवतः शुभे ।
क्षेत्र चायतनं चैव तपसामाश्रमो भवत् ।।
६३. वही, १।६
६४. वही, १।८
६५. वही, १।१५
६६. बु०च० ७।४१
६७. वही, ७।१४
६८. बु०च० ७।१५ : उच्छ्रेन जीवन्ति खगा इवान्ये
६९. वही ७।१५ : तृणानि केचिन्मृगवच्चरन्ति
७०. वही, ७।१५
७१. वही, ७।१६
७२. वही, ७।१६
७३. वही, ७।१७ :
मीनैं समं केचिदपो विगाह्य वसन्ति कूर्मोल्लिखितैः शरीरैः ।
७४. वही, ७।१७ : द्विः पावके जुहवति मंत्र पूर्वम्
७५. वही, ७।२०
७६. वही, ७।२०
७७. सौ० ७।२५-४५ बु०च० ४।१७, १३।१२ व ११।१३-१५, १८
७८. सौ० ११।४२-५०
७९. बु०च० ७।२८ :
आहार शुद्धया यदि पुण्यमिष्टं तस्मान्मृगाणामपि पुण्यमस्ति ।
ये चापि वाह्याः पुरुषाः फलेभ्यो भाग्यापराधेन पराङ्मुखार्था ।।
८०. वही, ७।२९
८१. वही, ७।३१
८२. वही, ७।४८ : ममाभिलाषस्त्वपुनर्भवाय
८३. एपी० इण्डि० जिल्द ८ पृ० ७८
८४. ज० इ० हि० जिल्द २० पृ० २७५
८५. ज० इ० हि० जिल्द २२ पृ० ४
८६. पाण्डे, हि० लि० इ० पृ० ५९, उषवदात का नासिक गुहा लेख

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

"देवताभ्यः ब्राह्मणेभ्यश्च षोडस ग्रामदेन अनुवर्षं ब्राह्मण शत साहस्त्री-भोजापयित्रा ।"

८७. वही, पृ० ५९ "प्रमासे पुण्य तीर्थे ब्राह्मणेभ्यः अष्टम्भार्याप्रदेन ।"

८८. आ० स० इ० ऐ० रि० १९१४-१५ पृ० ६६

८९. एपी० इण्डि० जि० २१ पृ० ५५

९०. कर्न, मैनुवल ऑफ बुद्धिज्म पृ० १२१

९१. दि० एज० ऑफ ईम्पीरियल यूनिटी पृ० ३८४

९२. बौ० सं० पृ० २९

९३. का० इ० इ० जि० २ भाग १ पृ० १३५

९४. वही, पृ० १४२

९५. वही, पृ० १५५

९६. एपी० इण्डि० जि० ८ पृ० १८०

९७. वही, जि० ९ पृ० २९१

९८. आ० स० इ० ऐ० १९०६-७ पृ० ९६

९९. डॉ० पुरी, इ० अ० कु० पृ० १४२

१००. धर्म चक्र प्रवर्तन सूत्र

१०१. बौ० दर्शन पृ० १८०

१०२. वही, पृ० १७६

१०३. सौ० १६।२८ :
दीपो यथा निर्वृतिमभ्युपेतो नैवावनिं गच्छति नान्तरिक्षम् ।
दिशं न कांचिद्विदिशं न कांचित्स्नेहक्षयात्केवलमेतिशान्तिम् ॥

१०४. सौ० १६।२९ :
एवं कृती निर्वृतिमम्युपेतो नैवावनिं गच्छति नान्तरिक्षम् ।
दिशं न कांचिद्विदिशं न कांचित्क्लेशक्षयात्केवलमेतिशान्तिम् ॥

१०५. भा० सिक्के १३५

१०६. द० वा० गुप्ता एज पृ० ३८४

१०७. द०वा०गुप्ता एज पृ० ३८६ : डॉ अल्टेकर ने "महायान श्रद्धोत्पाद" को ५वीं शताब्दी की कनिष्ठ अश्वघोष की रचना बताया है परन्तु बुन्यु नेन्जों ने अपनी पुस्तक सूची में इसे बुद्ध चरित काव्य के रचयिता अश्वघोष की रचना बतलाया है, जो प्रथम शताब्दी के बौद्धाचार्य और महाकवि थे ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१०८. बौ० ध० द० पृ० ३०२

१०९. दत्त और चाटोपाध्याय, भारतीय दर्शन पृ० ९८-९९ (द्वितीय संस्करण, पुस्तक भण्डार, पटना, १९६४)

११०. सौ० १४।४६

१११. वही, १०।८० : एतान्यरण्यान्यभितः शिवानि,
योगानुकूलान्यजनेरितानि ।

११२. वही, १५।१-२ : यत्र तत्र विविक्ते तु बद्ध्वा पर्यंकमुत्तमम् ।
ऋजुं कायं समाधाय स्मृत्याभिमुखयान्वितः ।।१
नासाग्रे वा ललाटे वा भ्रुवोरन्तर एव वा ।
कुर्वीथाश्चपलं चित्तमालम्बनपरायणम् ।।२

११३. वही, १५।३

११४. वही, १५।१२-१३

११५. वही, १५।६८

११६. वही, १४।१९ : योगाचारस्तथाहारं शरीराय प्रयच्छति ।
केवलं क्षुद्विघातार्थं न रागेण न भक्तये ।

११७. वही, १४।२०

११८. वही, १४।३१

११९. वही, १४।२४
प्रक्लेद्यमद्भिर्वदनं विलोक्याः सर्वतो दिशः ।
चार्या दृष्टिश्च तारासु जिजागरिषुणा सदा ।।

१२०. वही, १४।३२ :
पूर्वं यामं त्रियामायाः प्रयोगेणातिनाम्य तु ।
सेव्या शय्या शरीरस्य विश्रामार्थं स्वतन्त्रिणा ।।

१२१. वही, १४।३३ :
दक्षिणेन तु पार्श्वेन स्थितयालोकसंज्ञया ।
प्रबोधं हृदये कृत्वा शयीथाः शान्तमानसः ।।

१२२. वही, १४।३३ :
यामे तृतीये चोत्थाय चरन्नासीन एव वा ।
भूयो योगं मनः शुद्धौ कुर्वीथा नियतेन्द्रियः ।।

१२३. वही, ५।३२

१२४. बु०च० १२।१०५

१२५. वही, १२।१०६

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१२६. सौ० १६।८७-९१

१२७. वही, १२।४० : यस्माद्धर्मस्य चोत्पतौ श्रद्धा कारणमुत्तमम् ।

१२८. वही, १२।३३

१२९. बु०च० २६।४२

१३०. वही, २६।५१

१३१. सौ० १३।६१ : भेतव्यं न तथा शत्रोर्नाग्नेर्नाहेर्न चाशने: ।
इन्द्रियेभ्यो यथा स्वेभ्यस्तैरजस्त्रं हि हन्यते ।।

१३२. वही, १३।३३ : न च प्रयाति नरकं शत्रुप्रभृतिभिर्हत: ।
कृष्यते तत्र निघ्नस्तु चपलैरिन्द्रियैर्हत: ।।

१३३. सौ० १४।३५, ३६ :

अथासनगतस्थानप्रेक्षितव्याहृतादिषु ।
संप्रजानन् क्रिया: सर्वा: स्मृतिमाधातुमर्हसि ।।
द्वाराध्यक्ष इव द्वारि यस्य प्रणिहिता स्मृति: ।
धर्षयन्ति न तं दोषा: पुरं गुप्तमिवारय: ।।

१३४. बु० च० १५।३४

१३५. देखिये "धर्मचक्र प्रवंतन सूत्र"

१३६. सौ० ३।१२ : इति दु:खमेतदियमस्य समुदयलता प्रवर्तिका ।
शान्तिरियमयमुपाय इति प्रविभागश: परमिदं चतुष्टयं ।।

१३७. धर्म चक्र प्रवर्तन सूत्र

१३८. सौ० १६।११ :

आकाशयोनि: पवनोयया हि यथा शमीगर्भशयो हुताश: ।
आपो यथान्तर्वसुधाशयाश्च दु:खं तथा चित्तशरीरयोनि ।।

१३९. वही, १६।१२ :

अपां द्रवत्वं कठिनत्वमुर्व्या वायोश्चलत्वंध्रुवमौष्ण्यमग्ने: ।
यथा स्वभावो हि तथा स्वभावो दु:खं शरीरस्य च चेतसश्च ।।

१४०. धर्मचक्र प्रवर्तन सूत्र

१४१. सौ० १६।१९

१४२. एवं सति एवं होति । एवं असति एवं न होति ।।

१४३. धर्म चक्र प्रवर्तन सूत्र

१४४. सौ० १६।३८

१४५. वही, १६।३९ :
आर्येण मार्गेण स शान्तिमेति कल्याण मित्रै: सह वर्तमान:

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१४६. बु०च० १५।३५, ३६, ४६

१४७. सौ० १६।३२ :

सत्येषु दुःखादिषु दृष्टिरार्या, सम्यग्वितर्कश्च पराक्रमश्च ।
इदं त्रयं ज्ञानविधौ प्रवृत्तं, प्रज्ञाश्रयं क्लेश परिक्षयाय ॥

१४८. वही, १६।३१

१४९. वही, १३।१३

१५०. बु०च० २६।२७-२८

१५१. वही, २६।३१

१५२. वही, २६।३२

१५३. सौ० १६।३४ :

क्लेशांकुरान्न प्रतनोति शीलं बीजांकुरान् काल इवातिवृत्तः ।
शुचौ हि शीले पुरुषस्य दोषा मनः सलज्जा इव धर्षयन्ति ॥

१५४. वही, १६।३३ :

न्यायेन सत्याधिगमाय युक्ता सम्यक् स्मृतिः सम्यगथो समाधिः ।
इदं द्वयं योगविधौ प्रवृतं शमाश्रयं चित्तपरिग्रहाय ॥

१५५. बु०च० २४।२५

१५६. वही, २६।६२

१५७. वही, २६।६३

१५८. सौ० १६।३५

१५९. मोनियर विलियम्स—बुद्धिज़म पृ० १२६ (चौखम्भा, वाराणसी, १९६४)

१६०. भगवान बुद्ध और उनका धर्म पृ० १००

१६१. सौ० १६।३७

१६२. वही, १७।२७ पा० टि०

१६३. वही, १७।२७

१६४. वही, १७।३७

१६५. वही, १७।३७ पा० टि०

१६६. वही, १७।४०

१६७. वही, १७।४० पा० टि०

१६८. वही, १७।४२

१६९. वही, १७।४७

१७०. वही, १७।४८

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१७१. वही, १७।५०

१७२. वही, १७।५३

१७३. वही, १७।५४

१७४. वही, १७।५४

१७५. वही, १७।५६

१७६. वही, १७।६७ :

न मे प्रियं किंचन नाप्रियं में न मेऽनुरोधोऽस्ति कुतो विरोधः।
तयोरभावात्सुखितोऽस्मि सद्यो हिमातपाभ्यामिव विप्रमुक्तः ।।

१७७. वही, १७।१६-१७

१७८. वही, १७।१८ :

यस्माद्भूत्वा भवतीहसर्वं भूत्वा च भूयो न भवत्यवश्यं ।
सहेतुकं च क्षयहेतुमच्च तस्मादनित्यं जगदित्यविन्दत् ।।

१७९. वही, १७।३६

१८०. वही, १७।२०

१८१. माध्यमक वृत्तिः २४।१८

१८२. वही, २४।१९

१८३. सौ० १७।२१

१८४. मिलिन्द प्रश्न पृ० ३०-३४

१८५. सौ० १७।१९

१८६. वही, १७।२४ पा० टि० :

साप्तबोधि अंग—स्मृति, धैर्य, वीर्य, प्रीति, प्रश्नब्धि, समाधि और उपेक्षा

१८७. यहां मार्ग का तात्पर्य अष्टांगिक मार्ग से है जो निम्न प्रकार है :—

सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वचन, सम्यक् कर्मान्त, सम्यक् आजीविका, सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति और सम्यक् समाधि।

१८८. सौ० १७।२५ पा० टि० :

चार स्मृति उपस्थानः—कायानुपश्यना, वेदनानुपश्यना, चित्तानुपश्यना, और धर्मानुपश्यना ।

१८९. वही, १७।२६ पा० टि :

पंच बल या आर्य बल :—श्रद्धा, वीर्य, स्मृति, समाधि और प्रज्ञा

१९०. वही, १६।२८-२९ :

दीपो यथा निर्वृतिमभ्युपेतो, नैवावनिं गच्छति नान्तरिक्षं ।
दिशं न कांचिद्विदिशं न कांचित्स्नेहक्षयात्केवलमेति शान्तिं ।।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

एवं कृती निर्वृतिमभ्युपेतो नैवावनिं गच्छति नान्तरिक्षं ।
दिशं न कांचिद्विदिशं न कांचित्क्लेशक्षयात्केवलमेति शान्तिं ।।

१९१. महावस्तु जि० १।२९३।१२-१५
१९२. वही, जि० १।२९३।१९-२३
१९३. बु० च० २।१२
१९४. वही, २२।३०
१९५. वही, ७।२०
१९६. वही, ८।१५
१९७. वही, २६।२९
१९८. साउथ इन्डियन गाड्स एण्ड गाडसेस, पृ० २५१
१९९. दि मानूमेण्ट ऑफ सांची, पृ० २९९
२००. बु० च० १।१९
२०१. वही, २६।९९, १००
२०२. वही, १७।७०
२०३. वही, २१।११
२०४. ज०रा०ए०सो० १९०१ पृ० ४६१
२०५. एपी० इण्डि० जिल्द १ नं० ३३ पृ० ३९६
२०६. महावंश अध्याय १२ पृ० १३८-३९
२०७. लाइफ इन एशेण्ट इण्डिया पृ० ३२७
२०८. एपी० इण्डि० जिल्द १७ पृ० १०
२०९. वही, जिल्द १७ पृ० १०
२१०. वही, जिल्द १ नं० १८ पृ० ३९०
२११. आ०स०इ०ऐ० रिपोर्ट १९०८-९ पृ० १५९
२१२. इण्डि० ऐन्टी० जिल्द ३३, १९०४ पृ० १०२
२१३. कैं०म०म्यूजियम नं० सी० १३
२१४. कैं०म० म्यूजियम नं० सी० २१
२१५. बु०च० १।१७
२१६. वही, २१।११ :
अंग नगर में तथागत बुद्ध ने पूर्णभद्र यक्ष को दीक्षा दी थी।
२१७. दि मानूमेण्ट ऑफ सांची-पृ० २९९
२१८. कुमार स्वामी, यक्षाज़ पृ० ३७

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२१९. मथुरा के एक लेख में क्षुद्रा (खुदा) द्वारा वर्धमान की (वधमानस्य) प्रतिमा-स्थापना का उल्लेख है। क्षुद्रा का सम्बन्ध कोट्टियगण, ब्रह्मदासिक कुल तथा उचेनागरी शाखा से था। लेख देवपुत्र कनिष्क के ५वें वर्ष का हैं— एपी० इण्डि० जिल्द १ नं० १ पृ० ३८१। यहीं से प्राप्त अन्य दूसरा लेख चार "जिनों" की चतुर्मुखी प्रतिम की चरण चौकी पर उत्कीर्णित है, जिसमें सूचिल की प्रथम पत्नी के दान का उल्लेख है। यह सूचिल, कोट्टियगण का सदस्य था—एपी० इण्डि० जिल्द १ नं० १ पृ० ३८२

कोट्टियगण के अतिरिक्त कनिष्क के ४४वें वर्ष के एक लेख में वारणगण का भी उल्लेख है—एपी० इण्डि० जि० १ नं० ९ पृ० ३८७

ये उपर्युक्त गण उस समय के जैन धर्म के विभिन्न सम्प्रदाय थे। गण कुलों में विभाजित होता था और कुल शाखाओं और सम्भोगों में विभक्त होते थे।

इस प्रकार उस समय जैन धर्म भी फल-फूल रहा था।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय ५

आर्थिक दशा

सामाजिक प्रगति का आधार आर्थिक सुव्यवस्था है। किसी भी देश अथवा काल में यदि आर्थिक परिस्थिति ठीक नहीं तो समाज और देश दोनों अवनति के मार्ग पर बढ़ते चले जायेंगे। भारतीय आर्थिक परिस्थिति सदैव से ही कृषि पर आधारित रही है और इस क्षेत्र में राजनैतिक विप्लवों तथा क्रान्तियों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। इस अध्याय में अश्वघोष की कृतियों तथा कुषाण कालीन लेखों के आधार पर तत्कालीन आर्थिक व्यवस्था पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। इस सम्बन्ध में हम कृषि-कर्म, पशु-पालन, गण उद्योग, व्यापार तथा वाणिज्य, विनिमय और आवागमन के साधनों की विवेचना करेंगे।

कृषि-कर्म और पशु पालन

क्षेत्र की तैयारी—कृषि के लिये सबसे पहले क्षेत्र का होना आवश्यक है। आजकल की भाँति उस समय भी क्षेत्र को हल से जोता जाता था।[१] हल में लोहे का फल लगा होता था जिसे 'सीर'[२] कहते थे। यह बैलों से खींचा जाता था। हल खींचने से बैल बहुत ही विकल हो जाते थे।[३] बुद्ध चरित के सन्दर्भ[४] से प्रतीत होता है कि चक्रधर तपस्वी भी हाथों में जुए रख कर हल खींचते थे। हल की रेखाएँ क्षेत्रों में, जल की लहरों की भाँति समानान्तर दीख पड़ती थीं।[५] क्षेत्र जोतने से छोटी-छोटी घास तथा 'कुश' आदि नष्ट हो जाते थे[६] और खेत साफ हो जाता था। इस प्रकार की क्षेत्र की तैयारी को 'कृषि कर्मान्त'[७] और तैयार की गई खेतिहर भूमि को उद्यान भूमि[८] कहते थे।

क्षेत्र को तैयार करने में हवा तथा सूर्य की तेज किरणों से कृषक जन आकुल तथा धूल धूसरित हो भिन्न वर्ण के प्रतीत होते थे।[९] किसान लोग प्रति-दिन कृषि-कार्य में जुटे रहते थे।[१०] तत्कालीन अभिलेखों में सहस्त्रों हल तथा सहस्त्रों गायों के दान से भी कृषि कार्य की महत्ता पर प्रकाश पड़ता है।[११]

बीज वपन—अधिक अन्न उपजाने के लिये क्षेत्रों को भली-भाँति जोतकर कृषक उनमें उत्तम बीज बोते थे।[१२] बीज-वपन की दो विधियाँ ही सम्भव

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

हैं। प्रथम या तो हल की बनी 'सीरा' में बीज बोया जाता होगा अन्यथा सर्वत्र छिटक कर बीज बोया जाता होगा।[१३] बीज बोने के पहले एक तरह के उत्तम बीज की छटनी की जाती थी।[१४]

सिंचाई के साधन—सिंचाई के लिये नदी[१५], सरोवर[१६], कुएँ[१७] (कूप) आदि साधन थे। नदी आदि में बाँध बनाकर भी जल प्राप्त किया जाता था। जल-वेग को रोकने के लिए बाँध (सेतु) बनाये जाते थे।[१८] कभी-कभी अधिक जल-वेग के कारण नदी के बाँध टूट जाते थे।[१९] तत्कालीन अभिलेखों से भी इन साधनों की पुष्टि होती है। रुद्रदामन प्रथम के १५० ई० के गिरिनार शिलाभिलेख से ज्ञात होता है कि ई०पू० चतुर्थ शताब्दी में सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य के राष्ट्रीय वैश्य पुष्यगुप्त द्वारा गिरिनार की पहाड़ियों से निकलने वाली सुवर्णसिकता और पलाशनी आदि नदियों के पानी को रोकने के लिये विशाल बाँध (सेतुम्) बनवाया गया था। सम्राट् अशोक के इस प्रान्त के प्रान्तीय शासक यवन राज तुषास्प ने उससे नहरें निकलवाई थीं। महाक्षत्रप रुद्रदामन प्रथम के शासनकाल में घोर वर्षा और तूफान से वह जर्जर हो गया था जिसका पुनर्निर्माण अपने कोष से प्रचुर धन व्यय करके शक महाक्षत्रप ने करवाया था।[२०] सन् २९६ ई० के साँची के अभिलेख में भी श्रीधर वर्मन द्वारा एक कूप-निर्माण का उल्लेख मिलता है।[२१]

उत्पादित अन्न—चावल लोगों का प्रमुख भोजन था। धान के कई प्रकार उस समय उत्पन्न किये जाते थे। कृषि में उत्पन्न धान को 'शाली'[२२] धान भी कहते थे, जिसकी खेती में परिश्रम अधिक करना पड़ता था। दूसरे प्रकार का धान जंगलों में स्वतः उत्पन्न होता था और ऋषि-मुनियों का मुख्य भोजन होता था इसे 'नीवार'[२३] कहते थे। तत्कालीन अन्य बौद्ध धर्म के ग्रन्थों तथा अभिलेखों से पता चलता है कि उस समय सरसों (सर्षप[२४]) कुल्थी (कुलमाष[२५]) तिल[२६], जौ (यव),[२७] गेहूँ (गोधूम)[२८] मसूर[२९], मूँग (मुद्रग),[३०] उर्द (माष)[३१] इत्यदि उत्पन्न किये जाते थे। अन्नों के अतिरिक्त हरी तरकारियाँ (हरित कलापक[३२]) भी उगाई जाती थीं।

उपर्युक्त अन्नों के अतिरिक्त ईख (इक्षु) भी कृषि में उत्पन्न की जाती थी। ईख को कोल्हू में पेरा जाता था और खोई को सुखा कर जलाने के काम में लाया जाता था।[३३]

पशु पालन—भारतीय कृषि-कार्य में पशुओं का विशेष महत्व है। बैल[३४] हल खींचते थे। बैलों को गाड़ी (शकट) और रथ खींचने के काम में भी

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

लाया जाता था।[३५] रथ खींचने के लिये घोड़े भी काम में लाये जाते थे जिन्हें शीघ्र वाहन कहते थे।[३६] बैलों से बोझा भी ढोया जाता था। गायों को पूज्य माना जाता था। वे हृष्ट-पुष्ट और साध्वी तथा उत्तम और अधिक दूध देने वाली होती थीं। उनके बछड़े ऊंचे होते थे।[३७] कभी-कभी वे कृषि को अधिक क्षति पहुंचाती थीं।[३८] गाय-बैल के अतिरिक्त भैंस (महिषी)[३९] और भैंसें (महिष)[४०] भी पाले जाते थे।

पालतू पशुओं के गले में पट्टा (व्यंजन)[४१] बांध दिया जाता था, जो आभूषण का कार्य करता था। यद्यपि पशुओं का पालन सभी कृषक जन करते थे परन्तु विशेष रूप से 'गोप'[४२] ही पशु पालते थे।

कृषि-कार्य से सम्बन्धित पशुओं के अतिरिक्त सूकर,[४३] अश्व,[४४] खर,[४५] ऊष्ट,[४६] हाथी,[४७] और मेढ़ों[४८] आदि पशुओं का भी उल्लेख अश्वघोष के काव्यों में हुआ है।

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

उद्योग और व्यवसाय

अतीत काल की भांति अश्वघोष के समय में भी उद्योग और व्यवसाय अधिकतर 'श्रेणी' ओर 'पूगों' द्वारा होते थे। प्रसिद्ध अट्ठारह श्रेणियों (अष्टादश श्रेणियों) का उल्लेख संस्कृत बौद्ध ग्रन्थों[४९] में मिलता है। श्रेणी के प्रधान को श्रेठिन् (सेटठी) कहते थे। अश्वघोष के काव्यों श्रेष्ठिन्[५०] के अतिरिक्त महावणिक[५१] का भी उल्लेख हुआ है। कवि की कृतियों में निम्नलिखित उद्योग-धन्धों का उल्लेख प्राप्त होता है।

वर्द्धकि—इसे 'पाली' में 'बट्ढकी' और हिन्दी में बढ़ई कहते है। ये लोग रथ,[५२] पालकी (शिविका)[५३] नदियों आदि को पार करने के लिये नावें[५४] बनाते थे। इसके अतिरिक्त बैलों द्वारा खींची जाने वाली गाड़ी (शकट)[५५] तथा भवन-निर्माण हेतु आवश्यक सामग्री एवं घरेलू उपयोग के उपकरण भी तैयार करते थे।[५६] लकड़ी चीरने तथा उसके खण्ड खण्ड करने के लिये 'आरा' का प्रयोग करते थे, जिसे दो आदमी खींचते थे।[५७] लकड़ी काटने के लिये साधारण रूप में कुल्हाढ़ी काम में लाई जाती थी।[५८] कुषाण सम्वत् १२ में उत्कीर्णित एक अभिलेख[५९] में एक वर्द्धकि-कन्या का उल्लेख है।

कुम्भकार—ये लोग मिट्टी के बर्तन[६०] बनाते थे, जिनका उपयोग घरों में किया जाता था। ये शीघ्र टूटने वाले होते थे।[६१] सौन्दरनन्द के एक श्लोक में मिट्टी के कच्चे घड़े का उल्लेख है।[६२] परन्तु उन्हें पकाया भी जाता था। दिव्यावदान पक्के घड़ों का उल्लेख करता है।[६३]

मिट्टी के बर्तनों के अलावा कुम्भकार सुन्दर छोटे छोटे खिलौने (क्रीडनक) भी तैयार करते थे। राजकुमार सिद्धार्थ के खेलने के लिये मृग युक्त छोटे छोटे रथ,[६४] हाथी, मृग और अश्व[६५] के खिलौने, बैल जुते हुए लघु रथ[६६] और रंग-बिरंगी पुतलियां[६७] बनाईं गई थीं। राजा होने के कारण ये खिलौने सोने और चांदी के बने हुए थे परन्तु गरीब परिवारों में बच्चों के लिये ये खिलौने (कीडनक) अवश्य ही मिट्टी के बनते होंगे और कुम्भकार बनाते रहे होंगे। इसकी पुष्टि तत्कालीन अन्य संस्कृत बौद्ध ग्रन्थों से भी होती है, जिनमें 'गोरथकानि',[६८] अजरथकानि,[६९] मृगरथकानि[७०] का उल्लेख मिलता है।

बुनकर—अश्वघोष के काव्यों में यद्यपि स्पष्ट रूप से बुनकर का उल्लेख नहीं हुआ है परन्तु उस समय समाज में विभिन्न प्रकार के वस्त्रों के प्रयोग से

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

उनकी उपस्थिति सिद्ध है। पुरुष कंधे पर उत्तरीय डालते थे।[७१] सिर पर पगड़ी (शिरोवेष्टि)[७२] बांधते थे। पुरुषों के सुनहले,[७३] पीले[७४] तथा श्वेत[७५] वस्त्र बनाये जाते थे। 'भिक्षुओं' के लिये 'काषाय'[७६] 'वस्त्रों' का निर्माण किया जाता था। स्त्रियों के प्रयोग के लिये बुनकर लोग कमल के समान लाल वस्त्रों,[७७] श्वेत वस्त्रों,[७८] पीत वस्त्रों,[७९] तथा नील वस्त्रों,[८०] को तैयार करते थे काशी रेशमी-वस्त्र-निर्माण का केन्द्र था, जहाँ के बने रेशमी कपड़ों को 'काशिक वस्त्र'[८१] कहा जाता था।

उस समय के कपड़े के उद्योग की पुष्टि तत्कालीन पुरातात्विक सामग्री से भी होती है। लखनऊ संग्राहालय[८२] में तत्कालीन एक स्त्री की प्रतिमा है जो लम्बी चोली तथा लहंगा पहने है। मथुरा संग्रहालय[८३] में तत्कालीन एक पुरुष की मूर्ति है, जो धोती पहने हुए है और कमर में दुपट्टा कसे है।

इन सभी तथ्यों से तत्कालीन बुनकर-उद्योग की उन्नतावस्था सिद्ध होती हैं।

चित्रकार—अश्वघोष के समय में चित्र कला की भी यथेष्ट उन्नति हुई थी। चित्रकार अपने ही बनाये चित्रों के सौन्दर्य पर मुग्ध हो जाते थे। ऐसे चित्रों में नारी-चित्र मुख्य थे।[८४] चित्र बनाने के लिये जिन रंगों का प्रयोग किया जाता था, उनमें सुनहला,[८५] पीला[८६] (पीत) कमल के समान लाल (पद्मराग),[८७] नीला (नील)[८८] तथा काषाय[८९] रंग प्रमुख थे। पुरुषों के अतिरिक्त स्त्रियां भी चित्र-कला में प्रवीण होती थीं। नन्द की पत्नी 'सुन्दरी' ने पति की मूछों (श्मश्रु) को देखकर अपने चेहरे पर भी वैसा ही मूछों का चित्रण किया था।[९०]

नापित—'सौन्दरनन्द' तथा 'बुद्ध चरित' में बालों के काटने का उल्लेख मिलता है।[९१] नापित (हिन्दी नाई) बाल काटने का कार्य करते थे। इसकी पुष्टि महावस्तु से भी होती है जिसमें नापित[९२] का उल्लेख है।

शैल रूपकार—अश्वघोष के समय में पत्थर की प्रतिमाएँ बनने लगी थीं जिनका ज्ञान तत्कालीन पुरातत्विक सामग्री से भी प्राप्त होता है। कनिष्क के राज्यकाल के तीसरे वर्ष 'भिक्षु बल' ने 'सारनाथ' में बोधिसत्व की पूर्णकाय प्रतिमा की स्थापना की थी।[९३] पत्थर पर काम करने वालों को शैल वर्द्धकि (सेल बढाकिस)[९४] भी कहते थे।

रजक—ये लोग वस्त्रों को साफ करने का कार्य करते थे। इसके लिए वे क्षार (सोडा) को प्रयोग में लाते थे।[९५]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

लौहकार—आधुनिक समय में इन्हें "लोहार" कहते हैं। यह बहुत पहले से अपने कार्य में पारांगत थे और लोहे के अस्त्र-शस्त्रों को बनाते थे। अश्वघोष के समय में प्रचलित अस्त्र-शस्त्रों में बाण (शल्य)[९६] इषिका[९७] (बाणविशेष) तलवार (असि)[९८], त्रिशूल[९९], भाला[१००], बर्छी[१०१], कुठार[१०२], कुल्हाड़ी[१०३], प्रमुख थे, जिनका निर्माण लौहकार करते थे। बाण रखने के लिए तरकस[१०४] तथा शरीर रक्षा के लिए कवच[१०५] भी ये ही लोग तैयार करते थे।

अस्त्र-शस्त्रों के अतिरिक्त ये विशाल लौह-स्तम्भ (स्तम्भमायसम्)[१०६] भी बनाते थे। तीक्ष्ण दांतों वाले कुत्ते तथा तेज चोंच वाले कौवे भी लोहे के बनाये जाते[१०७] थे। कृषि-कार्य के लिए खेत जोतने के लिए हलों की 'सीर'[१०८] मछली पकड़ने के लिए कटिया (गिरत्यायसं)[१०९]

घरेलू प्रयोग के लिए लोहे के कड़ाह[११०] बनाये जाते थे। लोहे की विभिन्न स्वेच्छित वस्तुयें तैयार करने के लिए लोहे को गलाकर द्रव रूप किया जाता था।[१११]

मथुरा के तीन अभिलेख भी उस समय में लौहकारों के अस्तित्व की पुष्टि करते हैं। प्रथम लेख "हग्गु देव" नामक लौहकार की पत्नी का है। उसका नाम "मित्रा" था और "जयभट्टि" नामक मणिकार की पुत्री[११२] थी। अन्य दो लेखों में से एक में सरस्वती देवी की मूर्ति का उल्लेख है जिसे गोवा के एक लौहकार ने बनाया था। दूसरी मूर्ति को "गोट्ठिक" नामक लौहकार ने बनाया था[११३]।

स्वर्णकार और हिरण्यकार—महाकवि अश्वघोष ने स्वर्णकार के लिए सुवर्ण कर्मार[११४] शब्द का प्रयोग किया है। ये लोग स्वेच्छानुसार स्वर्ण अलंकारों को तैयार करते थे[११५]। स्वर्ण-शुद्धि की परख उसे काटकर, तपाकर, अथवा उससे तार बनाकर की जाती थी।[११६]

ये लोग अधिकतर सोने के आभूषण बनाने का उद्योग-धन्धा करते थे। रौप्य निर्मित केयूर पर सोने के तारों की मढ़ाई का कार्य होता था।[११७] घरेलू वस्तुओं में कंकण[११८] नथनी. (गोत्र)[११९], लड़ी (कांचीगुण)[१२०], राजा महाराजाओं के लिए घोड़ों के लिये सोने की लगाम (रुक्मखलीन) तथा सोने के बर्तन (हेम भाण्डम्)[१२१] बनाये जाते थे।

सौन्दरनन्द में खानों से सोना निकालने का भी उल्लेख मिलता है। सोना धूल के कणों को धोकर साफ किया जाता था। शुद्धि की दृष्टि से छोटे और बड़े कणों को अलग अलग रखा जाता था[१२२]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

हिरण्यकार धूलयुक्त सोने को पहले पानी से धोकर बाद में उसे अगीठी पर अग्नि में तपाता था, और बार बार उलटता-पलटता रहता[१२३] था। सोना तपाने के लिए अंगीठी (उल्कामुख) का प्रयोग किया जाता था। अंगीठी को धौका जाता था और समय समय पर अग्नि को कम या ज्यादा करने के लिए उसे जल से सिंचित किया जाता था और बाद में उसे चुपचाप छोड़ दिया जाता[१२४] था। असमय में धौकने से सोना जल जाता था, असमय में जल डाल देने से वह ठडा हो जाता था और असमय में अगल रख देने से वह परिपक्व नही होता थीं[१२५]। इससे स्पष्ट होता है कि सोने को तपाने में बहुत ही कुशलतापूर्वक कार्य करना पड़ता था।

सोने की छोटी छोटी वस्तुओं के अतिरिक्त बड़ी बड़ी वस्तुएँ भी बनती थीं। सौन्दरनन्द में स्वर्णस्तम्भ (हैमो महास्तम्भ)[१२६] का उल्लेख है। स्वर्ण उद्योग की पुष्टि तत्कालीन अन्य साहित्य व अभिलेखों से भी होती है। कुषाण कालीन एक ब्राह्मी अभिलेख मे देव नामक स्वर्णकार की पुत्री द्वारा वर्द्धमान की प्रतिमा-स्थापना का उल्लेख है।[१२७] स्वर्णकार पके सोने का कार्य करते थे। कच्चे सोने का कार्य करने वाले हिरण्यकार कहलाते थे।

मणिकार—ये लोग मणियों का उद्योग करते थे। अश्वघोष के समय में मणियों के हार पहने जाते थे जिन्हें ये लोग ही बनाते थे। केयूर, जो भुजा पर बांधने का आभूषण होता था वैडूर्यमणि का बनाया जाता था। उसे "वैडूर्य केयूर"[१२८] कहते थे। मणि मुक्ताओं को भी सोने के आभूषणों तथा मालाओं की भांति प्रयोग में लाया जाता था।[१२९]

रजतकार—तत्कालीन समाज में प्रचलित आभूषणों में कुछ चांदी (रौप्य) के भी बनते थे, जिनके बनाने का कार्य रजतकार करते थे। चांदी के आभूषणों में सबसे मुख्य "आंगद" था जिसे रजत निर्मित होने के कारण "रुप्यांगद"[१३०] कहा जाता था।

गान्धिक—अश्वघोष के समय में सौन्दर्य-वर्द्धन के लिए विलेपन,[१३१] अंगराग (विशेषकं),[१३२] अंजन,[१३३] चन्दन चूर्ण[१३४] और अनुलेपन[१३५] का प्रयोग किया जाता था। इनमें से कुछ वस्तुएँ तो घर में ही तैयार कर ली जाती थीं यथा "विलेपन"[१३६] इत्यादि और कुछ गान्धिक की दूकानों से खरीदी जातीं थीं। ऐसी वस्तुओं में सुगन्धित तेलों[१३७] का विशेष महत्व था। मथुरा के तीन ब्राह्मी अभिलेखों में भी गान्धिक का उल्लेख मिलता है, जिससे कवि के उल्लेख की पुष्टि होती है। प्रथम अभिलेख[१३८] में एक गान्धिक की

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

माता "कुमारभट्टी" द्वारा वर्द्धमान की प्रतिमा के प्रतिष्ठापन का उल्लेख है। दूसरे अभिलेख[१३९] में "ऋतुनन्दी" की पुत्री "जितमित्रा" द्वारा अर्हत् की प्रतिमा स्थापना का और तीसरे लेख[१४०] में "जिनदासी" के दान का उल्लेख है। दिव्यावदान में भी गान्धिक का उल्लेख मिलता है।[१४१]

वणिक—सौन्दरनन्द में "वणिक" का उल्लेख मिलता है। कपिलवस्तु की गलियों से निकलते हुए "तथागत" के दर्शनार्थ बड़े-बड़े दूकानदार अपनी-अपनी दुकानों से (महापणोभ्या)[१४२] बाहर निकल आये थे। उनमें से कुछ दर्शन और प्रणाम करके शीघ्र ही अपनी दुकानों को लौट गये थे।[१४३] छोटे-छोटे वणिकों के अतिरिक्त "महावणिक"[१४४] भी होते थे जो दूर-दूर तक मरुस्थलों के पार भी व्यापार करते थे। वणिक लोग लाभ पाने के लिए सौदा (पण्य) खरीदते थे।[१४५]

सपेरे—ये लोग सर्पों (भुजंग) को मंत्रों के वश (मंत्रबद्ध)[१४६] करके पकड़ते थे और आजकल की भाँति उनका प्रदर्शन करके जीविका चलाते थे।

मछुए—ये लोग मछलियाँ पकड़ते थे। तालाब की मछलियाँ "जाल" द्वारा पकड़ी जातीं थीं।[१४७] इसके अतिरिक्त मछुए लोग "कटियों (गिरत्या) द्वारा भी मछलियाँ पकड़ते थे। कटिया में मांस का टुकड़ा लगा लिया जाता था जिसे खाने के लालच में मछलियाँ फँस जाती थीं।[१४८]

लुब्धक—ये लोग पशु-पक्षियों का शिकार करते थे। मृगों को गायन[१४९] के द्वारा और पक्षियों को जाल[१५०] की सहायता से पकड़ते थे।

श्रम-सेवा

अन्य उद्योगों की भाँति उस समय लोग पारिवारिक सेवा का कार्य भी करते थे। इन लोक-सेवकों में स्त्री-पुरुष दोनों होते थे।

नारी सेविकाएं—राजघरानों में कुछ नारी सेविकाएं शारीरिक शृंगार सम्बन्धी उपकरणों को तैयार करने के लिए नियुक्त होती थीं। जैसे अंगलेप पीसने के लिये, वस्त्रों को सुगन्धित करने के लिये, स्नानविधि का आयोजन करने के लिये तथा मालाएँ आदि गूँथने के लिये।[१५१] वे स्वामी की क्रीड़ा के अनुरूप तैयारी करती थीं।[१५२] नन्द के महल में इन कार्यों के लिये बहुत सी स्त्रियां नियुक्त थीं।

दूसरे प्रकार की नारी सेविकाएं मनोरंजन तथा आमोद-प्रमोद के लिये नियुक्त होती थीं जो मीठी बोली से, विविध क्रीडाओं से, मधुरहास से, भ्रूभंगों और कटाक्षों से लोगों का मनोरंजन करती थीं[१५३] वे उंगलियों से मृदंग

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

बजाकर (नारी कराग्राभिहतैर्मृदंगैः)[१५४] तथा मनोहारी नृत्य से लोगों का मनोरंजन करती थीं[१५५]। इस वर्ग में विशेषकर गाणिकाएँ, वादिकाएँ तथा नृत्यकाएं ही होती थीं।[१५६]

तीसरे प्रकार की वे नारी सेविकाएँ थीं जो धात्री[१५७] आदि का कार्य करती थीं। वे बच्चों का लालन-पालन करती थीं[१५८] और उन्हें मिट्टी आदि खाने से बचाती थीं।[१५९] दिव्यावदान में आठ प्रकार की धात्रियों का उल्लेख किया गया है।[१६०]

पुरुष सेवक—पुरुष सेवक प्रायः धनी परिवारों में रहते थे, जिनका कार्य अपने स्वामी तथा उसके कुटुम्बी-जनों की आज्ञा पालन करना था। इस क्षेत्र में उनके कार्य बटे हुए थे, जैसा कि उनके नामों से प्रतीत होता है।

नगर और प्रासाद रक्षा के लिये सिंहद्वार (प्रवेश द्वार) पर द्वाराध्यक्ष की नियुक्ति होती थी। नगर या राज प्रासाद में प्रवेश पाने के लिए इसकी आज्ञा आवश्यक होती थी। शत्रु के आते ही वे इसकी सूचना राजा को शीघ्र ही देते थे। द्वाराध्यक्ष की सतर्कता से नगर रक्षित रहता था। उस पर शत्रुओं के आक्रमण का भय नहीं रहता था।[१६१] इसे दौवारिक[१६२] और द्वार पाल[१६३] भी कहा गया है।

रथ-संचालन के लिए सारथि होता था। सुयोग्य बलवान तथा पवित्र व्यक्ति सारथि बनाया जाता था[१६४]। सारथि[१६५] को रश्मिधर,[१६६] "साङ्ग्राहक[१६७] "सूत"[१६८] तथा अश्वरक्षक,[१६९] भी कहते थे। सारथि स्वामी की आज्ञा पाकर उसके लिए अश्व लाता था; और उसे लगाम लगाकर पीठ पर पलान सजाकर तैयार करता था।[१७०]

हाथियों की देखभाल के लिए—हस्ति रक्षक (महावत[१७१]) नियुक्त किया जाता था।

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वाणिज्य और व्यापार

वाणिज्य और व्यापार का आर्थिक स्थिति के मूल्यांकन में महत्वपूर्ण स्थान है। अश्वघोष प्रसिद्ध कुषाण सम्राट् कनिष्क के समकालीन थे। उस समय भारत का सम्बन्ध चीन और रोम जैसे प्रसिद्ध व्यापारिक देशों से था, जिसका उल्लेख 'टॉलमी' तथा 'पैरीप्लस' के वर्णनों में भी मिलता है।

व्यापारी और सार्थवाह—व्यापार सदा लाभ उठाने के लिये किया जाता[१७२] है। खरीदी हुई वस्तु लागत से अधिक दामों पर बेची जाती थी। व्यापारी लोगों को 'वणिक' कहा जाता था। बड़े बड़े व्यापारी (महावणिक[१७३]) दूर दूर मरूस्थलों के पार तक व्यापार के लिये जाते थे। इस प्रकार के दूर दूर के व्यापार काफिलों[१७४] द्वारा होते थे 'काफिले का पथप्रदर्शन 'सार्थवाह' करता था! उस समय व्यापारिक मार्ग, बीहड़ रेगिस्तानों और बनों के मध्य से होकर जाते थे, जिनमें यदि कोई यात्री छूट जाता था तो वह बहुत पीड़ित होता था।[१७५] सार्थवाह काफिले का नेतृत्व करता था और दल के आगे आगे चलता था।[१७६] सार्थवाह विभिन्न प्रकार की व्यापारिक विक्रय साग्रमी (पण्य) साथ लेकर चलता था।[१७७] वह काफिले की ठगों तथा लुटेरों से रक्षा करता था और शिविर (रात्रि में रुकने) का प्रबंध करता था[१७८]। अश्वघोष के व्यापारिक वर्णन की पुष्टि तत्कालीन पुरातात्विक प्रमाणों से भी हो जाती है। एक ब्राह्मी अभिलेख में एक व्यापारी की पत्नी के दान का उल्लेख है।[१७९]

व्यापारिक केन्द्र और बन्दरगाह—वस्तुओं को, निर्यात-स्थान से बाहर भेजने का प्रबंध था। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार जलयानों द्वारा होता था जिनके लिये शूर्पारक[१८०] (सुपारा) तथा भड़ोच[१८१] नामक प्रसिद्ध बन्दरगाह थे। भड़ौच बन्दरगाह से उज्जैनी, काश्मीर तथा हिन्दुकुश तक का सामान भेजा जाता था। उस समय भारत से निर्यात की जाने वाली वस्तुओं में सुगन्धित द्रव्य, मशाले, इत्र, औषधियों के लिये जड़ी-बूटियां, रंग, मोती, जवाहरात, हीरे, नीलमणि, लोहा, स्टील, ताँबा, चन्दन, पशुओं की खालें, सूती कपड़े, नील, हाथी-दाँत और शीशा आदि मुख्य थीं।[१८२] इनका व्यापार चीन, रोम और मिस्र से होता था।

व्यारिक नगरों में मथुरा,[१८३] श्रावस्ती[१८४], कपिलवस्तु[१८५], कौशाम्बी[१८६],

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वाराणसी[१८७], आदि का उल्लेख अश्वघोष ने अपने काव्यों में किया है। कार्ले, कन्हेरी तथा नासिक के गुफाभिलेखों में सुपारा के एक व्यापारी का उल्लेख हुआ है। इसी प्रकार भरहुत अभिलेख में भड़ौच के एक व्यापारी का उल्लेख मिलता है।[१८८]

विनिमय का माध्यम—निश्चित रूप से उस समय सोने, चाँदी और ताँबे के सिक्के चलते थे[१८९], परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में स्वर्ण मुद्राएँ ही प्रयोग की जाती थीं।[१९०] यद्यपि विम कदफिसेस का केवल एक चांदी का सिक्का प्राप्त हुआ है जो ब्रटिश संग्रहालय में[१९१] हैं पर 'पुराण' नामक चांदी के सिक्के पहले से ही प्रचलित थे और उनका व्यापार में प्रयोग होता था। कुषाण काल में स्वर्ण मुद्रा को रोम की मुद्रा के बराबर रखा गया था, जिसकी तौल प्रायः १२४ ग्रेन होती थी। स्वर्ण मुद्रा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक विनिमय के लिये थी परन्तु चांदी और ताँबे की मुद्राएँ सामान्य विनियम का माध्यम थीं।

तौल और नाप—'बुद्ध चरित' तथा 'सौन्दरनन्द' में तत्कालीन तौल-नाप का उल्लेख नहीं मिलता, परन्तु इस विषय पर तत्कालीन पुरातात्विक साक्ष्यों से पर्याप्त प्रकाश पड़ता है और इस दृष्टिकोण से मथुरा का ब्राह्मी अभिलेख[१९२] अधिक महत्वपूर्ण है। जिसमें तौल नाप के निम्नलिखित पारिभाषिक शब्द मिलते हैं:—

१—आढक

२—प्रस्थ

३—घटक

सर मोनियर विलियम्स के अनुसार 'आढक' अनाज तौलने का बांट था जो १।४ कार्ष के बराबर या ४०९६ माशा के बराबर या यों कहें कि लगभग ७ पौण्ड २ औंस के बराबर था।[१९३] 'प्रस्थ' ३० पल या १।४ आढक के बराबर होता[१९४] था और 'घटक' एक द्रोण या ४ आढक के बराबर होता था।[१९५] यह लेख हुविष्क के समय का है जिसमें एक विदेशी व्यक्ति का उल्लेख हैं जिसने ब्रह्मणों तथा भूखें और प्यासे लोगों को प्रतिदिन भोजन कराने के लिए दान समर्पित किया था। इसके नित्य के भोजन में निम्निलिखित तौल की भोज्य सामग्री सम्मिलित रहती थी :—

३ आढक, जौ की रोटियां (सक्तना)

१ प्रस्थ, नमक (लवृण)

२ प्रस्थ, सत्तू (शक्त)

३ घटक, हरी सब्जी (हरित कलापक)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

आवागमन के साधन

अश्वघोष की कृतियों से स्पष्ट प्रतीत होता है कि यातायात के लिये स्थल और जल के विभिन्न साधन थे—

स्थल के साधन—इस श्रेणी में रथ, शकट, शिविका और ऊष्ट्र आते थे। यद्यपि अश्व और हस्ति भी आवागमन के साधन थे, परन्तु इसकी अपेक्षा उनका सैनिक महत्व अधिक था। रथ, श्री सम्पन्न लोगों की सवारी थी। रथ खींचने में समान्य रूप से बैलों का प्रयोग किया जाता था।[१९६] परन्तु राजकुमारों के रथों में द्रुतगामी अश्वों का प्रयोग किया जाता था, जिन्हें भांति-भांति के आभूषणों से अलंकृत किया जाता था।[१९७] रथों की धुरों की रक्षा के लिए उसमें स्निग्ध पदार्थ लगाये जाते थे।[१९८]

शिविका उच्च स्तर के लोगों के आवागमन का साधन थी। इसे मनुष्य कंधों द्वारा ढोते थे। श्री सम्पन्न लोगों की शिविकाएँ हाथी दांत की बनी होती थीं जिन पर श्वेत पुष्पों द्वारा अलंकरण होता था और मणि तथा प्रदीप उनकी शोभा बढ़ाते थे।[१९९]

सामान्य जनों के आवागमन का मुख्य साधन बैलगाड़ी (शकट) थी। कवि ने इसे 'यान' की संज्ञा दी है और कहा है कि इसका प्रयोग लोग थकावट से बचने लिये करते थे।[२००]

जल के साधन—'सौदरनन्द' और 'बुद्ध चरित' में जलयान तथा नाव का उल्लेख मिलता है। कौटिल्य ने तीन प्रकार के जलमार्गों का उल्लेख किया है:—

१—कूल पथ — समुद्रतटीय मार्ग

२—सयान पथ — समुद्र के मध्य का मार्ग, और

३—नदियाँ

समुद्रतटीय मार्ग अधिक उपयोगी होते थे।[२०१] इन मार्गों को पार करने के लिये जलयान और नावें होती थीं।

जलयानों का प्रयोग अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए भी होता था। उस समय भड़ौच[२०२] और शूर्पारक[२०३] (सुपारा) प्रसिद्ध बन्दरगाह थे। जहां से व्यापारी अपने जहाज लेकर फारस की खाड़ी होते हुए "मास्कस" और "अन्तियोक" पहुँचते थे। भारतीय लोग समुद्र की भीषण लहरों से जलयानों के आहत तथा क्षतिग्रस्त हो जाने से भी परिचित थे। किसी जलयान के ऐसी परिस्थिति में पड़ जाने पर यात्रियों की रक्षा करने की पूरी कोशिश की जाती थी।[२०४]

नाव का प्रयोग नदियों को पार करने में किया जाता था। लोगों को

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

यह भली-भांति ज्ञात था कि प्रतिकूल प्रवाह में नाव कठिनता से चलती है।[२०५] नाव के संचालक को "कर्णधार" कहा जाता था। जलयात्रा के ये ही दो मुख्य साधन थे।

सम्पूर्ण अध्याय कवि की कृतियों पर आधारित है। यद्यपि कवि ने बुद्ध के जीवन सम्बन्धी ग्रन्थ लिखे, पर इनमें दी गई उपमाओं के आधार पर तथा कुषाण कालीन लेखों की पुष्टि देकर तत्कालीन आर्थिक दशा का चित्र प्रस्तुत किया गया है। निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि उस समय कृषि करके लोग अन्न उत्पन्न करते थे। उद्योग और व्यवसाय करके पेट पालन करते थे तथा वाणिज्य और व्यापार करके धनोपार्जन करते थे। रोम और चीन जैसे देश व्यापारिक मित्र थे। यद्यपि अन्तर्राष्ट्रीय विनिमय का माध्यम स्वर्ण मुद्रा ही थी, परन्तु सामान्य रूप से चांदी और तांबे की मुद्राओं का भी चलन था। यातायात के लिये जल और थल के साधन सुलभ थे।

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय पाँच के सन्दर्भ

१. बु०च० ५।५; दिव्या० ७७।१०
२. बु०च० ५।४; दिव्या० ७७।१०
३. बु०च० ५।६; दिव्या० ७८।१०
४. बु०च० ७।३
५. वही, ५।४
६. वही, ५।५
७. लैफमैन, ललित० १२८।१६
८. वही, पृ० १२८ पं० १६
९. बु०च० ५।६ कृषतः पुरुषांश्च वीक्षमाणः पवनार्काशुरजोविभिन्नवर्णान् ।
१०. दिव्या० २।२१, २३, २४
११. एपी० इण्डि० जि० २१ पृ० ९४
१२. सौ० ११।२७ यथाफल विशेषार्थं बीजं वपति कार्षकः ।
१३. दिव्या० १९।९-१०
१४. आर्य मंजुश्री मूल कल्प-जि० ३।६७६।११ (गणपति शास्त्री, १९२०)
१५. सौ० १०।५
१६. वही, १०।५, ११।६१; बु०च० २।१२
१७. बु०च० २।१२
१८. वही २४।५३, २६।६५, २७।५८
१९. वही १३।६
२०. पाण्डे, हि० लि० इ० पृ० ६२-६३
२१. एपी० इण्डि० जि० १६ पृ० २३२ व २३५
२२. बु०च० ९।३९
२३. सौ० १।१०
२४. दिव्या० ४३।२०
२५. वही, ५४।३२, ५५।४, २४, ३२
२६. वही, १८४।१०; ललित० ३१२।१८ (मित्रा)
२७. दिव्या० १८४।१०
२८. वही, १८४।११

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२९. वही, १८४।११
३०. वही, १८४।१०
३१. वही, १८३।१०
३२. एपी० इण्डि० जिल्द २१ पृ० ६०, मथुरा ब्राह्मी-अभिलेख, वर्ष २८ पं० ७
३३. सौ० ९।३१
३४. वही, १४।४८
३५ बु०च० २।२२; दिव्या ३।१६-१७
३६. सौ० १।३०: रथानारुरुहुः सर्वे शीघ्रवाहानलंकृतान् ।
३७. बु०च० १।८४, २।५
३८. सौ० ९।४२
३९. अवदान० १।३०७।८; वैद्य, अवदान १८४।२
४०. वही, १४८।६
४१. सौ० १८।११
४२. वही, १४।४८
४३. बु०च० १३।१९
४४. सौ० १।५२, ८।५८, ११।२५; बु०च० १३।१९
४५. बु०च० १३।१९
४६. वही, १३।१९
४७. सौ० १।५२; बु०च० १३।१९
४८. सौ० ११।२५
४९. महावस्तु जिल्द ३।३९२।६-७ (सेनार्ट)
५०. बु०च० १४।१०५
५१. सौ० १८।५०
५२. वही, ९।२३, १।३०, बु०च० २।२१, ३।५३
५३. बु०च० १।८६, २७।६०
५४. सौ० १८।४८; बु०च० १४।७५
५५. बु०च० ११।३८ : यहाँ पर "यान" शब्द का प्रयोग किया गया है जो कि बैलगाड़ी के लिए प्रयुक्त हुआ है ।
५६. दिव्या० ३।१६, १४४।९, १४७।१४, १७; १५०।२, २०५।२३; बु०च० ११।३८
५७. सौ० ९।३२ : यथा हि नृभ्यां करपत्रमीरितं समुच्छितं दारू भिनत्यनेकधा।
५८. बु०च० १४।१६

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

५९. एपी० इण्डि० जिल्द १० पृ० १११
६०. सौ० ९।९, १०
६१. वही, ८।६२
६२. वही, ९।१०
६३. दिव्या० १९।१८, ९, १०
६४. बु०च० २।२१
६५. वही, २।२२
६६. वही, २।२२
६७. वही, २।२२ : चामीकर रुप्यचित्रा ।
६८. सद्धर्म० ५५।१५ (नलिनाक्ष दत्त, १९५३)
६९. वही, ५५।१५,१६
७०. वही, ५५।१६
७१. सौ० ५।७
७२. बु०च० २३।६
७३. वही, २३।२
७४. वही, २३।३
७५. वही, ६।६२, २३।२
७६. वही, ६।६०, ६१
७७. सौ० ७।२६
७८. वही, ७।७
७९. बु०च० ५।५
८०. वही, १२।११०
८१. दिव्या० १७।३१
८२. लखनऊ म्यु० लेविल नं० जे० ८५
और देखिये-कैं० मथुरा म्युजियम नं० एफ० २० पृ० १०९
८३. कैं० मथुरा म्युजियम नं० सी १३ पृ० ८७ (वोगेल, इलाहाबाद, १९१०)
८४. सौ० १५।३९ : स्वयमेव यथालिख्य रज्येच्चित्रकरः स्त्रियं ।
तथा कृत्वा स्वयं स्नेहं संगमेति जनै जनः ।।
८५. बु०च० ३२।२
८६. वही, २३।२
८७. सौ० ६।२६
८८. बु०च० १२।१०

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

८९. वही ६।६०, ६१
९०. सौ० ४।१४ : भर्तुस्ततः श्मश्रु निरीक्षमाणा विशेषकं सापि चकार तादृक्।
९१. सौ० ५।५२-और भी देखिये;
बु०च०६।५७ : निष्कास्य तं चोत्पलपत्रनीलं चिच्छेद चित्रं मुकुटं सकेशम्।
९२. महावस्तु जि० २।४८७।२
९३. सारनाथ, पृ० ४ (वी० एस० अग्रवाल)
९४. एपी० इण्डि० जि० २० पृ० २२ पं० ४
९५. सौ० १०।४२
९६. वही १७।७, १।३५
९७. वही १२।३८; बु०च० ८।३९
९८. बु०च० ६।५६, १३।१८
९९. वही, १३।२६
१००. वही, १३।१८
१०१. वही, १३।३५
१०२. वही, १४।१६
१०३. वही, २६।६७
१०४. सौ० १।३५
१०५. वही, ८।५८
१०६. बु०च० १४।१२
१०७. वही, १४।१४
१०८. वही, ५।४
१०९. वही, ११।३५
११०. वही, १४।१३
१११. वही, १४।१२
११२. एपी० इण्डि० जि० १ पृ० ३८३
११३. एपी० इण्डि० जि० १ पृ० ३९१
११४. सौ० १५।६९, १६।६५
११५. वही, १५।६९ : यथा च स्वच्छन्दादुपनयति कर्माश्रयसुखं।
सुवर्णं कर्मारो बहुविधमलंकारविधिषु ॥
११६. बु०च० २५।४५
११७. सौ० १०।९
११८. बु०च० २१।४८

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

११९. वही, ८।२२

१२०. वही, ३।१४

१२१. वही, ५।३

१२२. सौ० १५।६६

१२३. वही, १५।६८ : क्रमेणादिभः शुद्धं कनकमिह पाँसुव्यवहितं।
यथाग्नौ कर्मारः पचति भृशमावर्तयति च ॥

१२४. वही, १६।६५ : उल्कामुखस्थं हि यथा सुवर्णं सुवर्णकारो धमतीह काले।
काले परिप्रोक्षयते जलेन क्रमेण काले समुपेक्षते च ॥

१२५. वही, १६।६६ : दहेत्सुवर्णं हि धमन्नकाले जले क्षिपन्संशमयेदकाले।
न चापि सम्यक् परिपाकमेनं नयेदकाले समुपेक्षमाणः ॥

१२६. वही, १८।२०

१२७. एपी० इण्डि० जि० २ पृ० २०५

१२८. सौ० १०।७

१२९. वही, ८।५०

१३०. वही, १०।९

१३१. वही, ४।२६

१३२. वही, ४।१३, १४

१३३. वही, ८।५०

१३४. वही, १८।२०

१३५. वही, ८।५०

१३६. वही, ४।२६

१३७. बु०च० २७।६१, २८।५८

१३८. एपी० इण्डि० जि० १ पृ० ३८५

१३९. एपी० इण्डि० जि० २ नं० १६ पृ० २०३

१४०. कैं० म० म्यु० नं० १३२ पृ० ६२

१४१. दिव्या० २१६।१५, २१७।२५, २८

१४२. सौ० ५।१

१४३. वही, ५।२

१४४. वही, १८।५०

१४५. वही, ११।२६

१४६. वही, १६।३५

१४७, वही, ११।६१

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१४८. बु०च० ११।३५
१४९. वही, ११।३५; सौ० ८।१५
१५०. सौ० ८।१६
१५१. वही, ४।२६
१५२. वही, ४।२७ : तस्मिन् गृहे भर्तुरतश्चरन्तयः,
कीडानुरूपं ललितं नियोगं ॥
१५३. बु०च० २।३१
१५४. वही, २।३०
१५५. वही, २।३०
१५६. वही, ५।५०-५६
१५७. वही, १।५९
१५८. सौ० १४।३७
१५९. वही, ५।४७
१६०. दिव्या० ६३।३
१६१. सौ० १४।३६ : द्वाराध्यक्ष इवं द्वारि यस्य प्रणिहिता स्मृतिः ।
१६२. लेफमैन, ललित० १०२।८-९, ११; ११५।३, १३५।५;
दिव्या० १८१।३, १९
१६३. महावस्तु जि० २।४९२।१९, २।४९३।३-४
१६४. बु०च० ३।८
१६५. वही, ३।४०, ४२
१६६. वही, ३।८
१६७. वही, ३।२७
१६८. वही, ३।२८, ३१
१६९. वही, ५।६८
१७०. वही, ५।७२
१७१. वही, २१।४७
१७२. सौ० ११।२६
१७३. वही, १८।५०
१७४. बु०च० १४।१०५, २५।२७
१७५. सौ० ५।४०, १८।४१; बु०च० २५।२७
१७६. महावस्तु जि० ३।३०३।८-९ :
सर्वस्य सार्थवाहस्य पुरतो सार्थवाहस्य यानकं वहन्ति ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१७७. महावस्तु जि० ३।३५१।२
१७८. इण्डियन कल्चर जि० १२ पृ० ८४
१७९. एपी० इण्डि० जि० १ पृ० ३९५
१८०. बु०च० २१।२२
१८१. एशेण्ट इण्डिया पृ० १५५
१८२. इम्पीरियल यूनिटी पृ० ६०४; मजूमदार, क्लैसिकल एकाउण्ट्स ऑफ इण्डिया, पृ० ३०५ (आर० सी० मजूमदार, कलकत्ता १९६०)
१८३. बु०च० २१।२५
१८४. वही, १८।५८, ८२; २०।५३,५६
१८५ सौ० ५।१
१८६. बु०च० २१।३३
१८७. वही, १५।६, १५; २०।१७; २१।२१; सौ० ३।१५, ७।३०
१८८. एपी० इण्डि० जि० ४९ पृ० ३३
१८९. भा०सि० पृ० १३०
१९०. वही, पृ० १२९ और भी देखिये इण्डियन कल्चर वा० १२ पृ० ८७
१९१. इण्डियन कल्चर वा० १२ पृ० ८७
१९२. वही, वा० २१ पृ० ५५
१९३. संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी पृ० १३४; शब्दार्थ कौस्तुभ पृ० १७९ में आढक को ४ सेर के बराबर बताया गया है।
१९४. वही, पृ० ६९९
१९५. वही, पृ० ३७५
१९६. बु०च० २।२२
१९७. सौ० १।३०
१९८. वही, १४।१२
१९९. बु०च० १।८६
२००. वही, ११।३८
२०१. मुकर्जी, च० मौ० हि० टा० पृ० २०९
२०२. एशेण्ट इण्डिया पृ० १५५ (टॉलमी)
२०३. बु०च० २१।२२
२०४. सौ० १८।४८
२०५. वही, ४।४४

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय ६

राजनैतिक दशा

अश्वघोष का युग कुषाण-साम्राज्यवाद का युग था। यद्यपि कवि का सीधा सम्बन्ध बौद्ध धर्म से था तथापि कुषाण सम्राट् कनिष्क के धर्म गुरु होने के कारण उन्होंने राजनीति ओर शासन व्यवस्था को देखा था। यही कारण है कि, उनके ग्रन्थों में राज्य तथा राज्य-व्यवस्था सम्बन्धी सामग्री प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती है। विधि प्रणेता भृगु, अंगिरा, शुक्र और वृहस्पति के राजशास्त्रों[1] से वह भली-भाँति अवगत थे। शिक्षा का महत्वपूर्ण अंग होने के कारण ही राज-शास्त्र तथा उसके विविध अंगों :—नीति शास्त्र,[2] राजधर्म,[3] दण्डनीति[4] तथा नय[5] का अध्ययन-अध्यापन होता था।

राज्य

अश्वघोष ने एकतन्त्र राज्य, गणतन्त्र या संघ राज्य और धर्म राज्य-तीन प्रकार के राज्यों का उल्लेख किया है। गण-राज्यों[6] और संघ राज्यों[7] में राज्य-कार्य के संचालन हेतु गण परिषद[8] या सभा[9] होती थी। धर्मराज्य की स्थापना भगवान बुद्ध ने की थी, जिसका परिपाक सम्राट् अशोक के समय हुआ। धर्मराज्य का विस्तार भूमि विजय करके नहीं, लोक-हृदय को जीतकर होता था। धर्म राज्य में दण्ड और शस्त्र की आवश्यकता नहीं थी।[10] धर्म-राज भूमि पर राज्य विस्तार के बिना भी चक्रवर्ती सम्राट् की भांति शोभा पाता था।[11] धर्म ही उसकी व्यवस्था का आधार था।[12]

राज्यांग—प्राचीन विचार सारणी के अनुसार ही अश्वघोष ने राज्य[13] और चक्रवर्ती[14] राज्य का उल्लेख करते हुए उसके "सप्तांगों"[15] का भी यथा स्थान वर्णन किया है। सप्त अंगों में स्वामी (राजा) अमात्य, पुर, राष्ट्र, कोष, दण्ड (बल) और सुहृत (मित्र) बतलाये गये हैं।

राजा या स्वामी सप्तांग राज्य का प्रथम और महत्वपूर्ण अंग था, जिसके बिना राज्य, चन्द्रमा के बिना सहस्त्रों नक्षत्रों युक्त रात्रि के समान था।[16]

राजोदय.—सौन्दरनन्द के अनुसार अराजकता को समाप्त कर सुव्यवस्था स्थापित करने के लिए (शमं प्रपेदेजगदव्यवस्था)[17] राजा का उदय हुआ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

राजा विहीन राज्य शोभा विहीन ही था। (अराजकं नैव रराज राष्ट्रम्)।[१८] प्रजा के त्याग और तप से भी गुणवान राजा का उदय माना जाता था।[१९] इस युग में ब्राह्मण साहित्य में उल्लिखित राजा की दैवी उत्पत्ति का महत्व नहीं था। लोग देवत्व से मनुष्यत्व की आधार भूमि पर खड़े हो गये थे। राजा का निर्वाचन जानपद करते थे।[२०]

राजगुण

आचार, विनय, नीति और कार्य कुशलता राजोचित गुण थे।[२१] महती कुलीनता (जातो वा विपुले कुले)[२२] भी राजा होने में सहायक थी। आचार—शुद्ध कर्म, जितेन्द्रिय[२३] बल (बलीयान्)[२४], पराक्रम (विक्रांत)[२५], धैर्य[२६] आत्म संयम (आत्मवत्तया)[२७], धर्म पालन[२८] आदि विशिष्ट गुण युक्त होने पर भी अपनी समृद्धि के कारण दूसरों का अपमान न करना,[२९] अप्रिय किन्तु हितकारी वचनों को ध्यानपूर्वक सुनना, अनेक अपकारों को भी भूल कर अणुमात्र भी उपकार को स्मरण रखना,[३०] श्री सम्पन्न होकर भी उद्धत न होना (श्री प्राप्तौ न विसिस्मिये)[३१] और मर्यादा पालन भी राजा के आवश्यक गुण माने जाते थे।

आर्यभाव—सात्विक वृत्ति (सत्व सम्पन्नः)[३२] वृद्धों का सम्मान[३३] और शत्रु के गुणों को भी प्रशंसा करना,[३४] दूसरों का अपमान न करना[३५] राजा के विनय सम्बन्धी गुण थे।

नीति—(नयवान)[३६] नीति-कौशल्य राज्य व्यवस्था की चेतना है। शत्रु को जीत कर भी अभिमान न करना, और शरण में आ जाने पर उसे न त्यागना,[३७] भारतीय राजगुणों की परम्परा ही है।

कार्य कौशल्य—(क्रियावान) धैर्य, पराक्रम,[३८] प्रतिज्ञा की रक्षा (धृत्यावाक्षीत्प्रतिज्ञां)[३९], शत्रु दमन-शक्ति[४०] राजा की शोभा थी। विषयी कार्यों का असेवन तथा मित्र अथवा शत्रु के लिये भी निन्द्य कार्यों का न करना[४१] राजा की श्री-वृद्धि के हेतु थे।

राजवृत

प्राचीन राज शास्त्र प्रणेताओं ने राज-कर्त्तव्यों (राज वृत्ति)[४२] पर भी विशेष बल दिया है।

राष्ट्र रक्षण और प्रजा रंजन—देश-रक्षण (जुगोप राष्ट्रं)[४३], और प्रजा पालन[४४] तथा प्रजा-रंजन[४५] ही "राजन्" संज्ञा का आधार था। कल्याण प्रद, पथ-प्रदर्शन के कारण ही उसे "लोक नेता"[४६] कहा गया है। प्रजा के

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

लिये शरद चन्द्र की भाँति सुख कर बनना (शरच्चन्द्र इव प्रजानां)[४७] तथा अपने मंगल कर्मों (विशुद्ध-वृत्त)[४८] द्वारा उसे आकृष्ट[४९] करना, और सद्गुणों द्वारा बन्धु-बान्धवों को प्रसन्न रखना (गुणैर्बन्धूनरीरमत)[५०] राजा का परम कर्तव्य था। विनय और शील से वह शरणागतों की रक्षा (प्रणताननुजग्राह[५१]) आपदजनों की विपत्ति-निवारण (आपन्नान्परिजग्राह)[५२] तथा दुखियों का दुख विमोचन (अहार्षीद्दुःखमार्तानां)[५३], करता था।

शत्रु निग्रह—राज्य में सर्वत्र शान्ति स्थापित करने के लिए शत्रु-दमन (अरीणांनिग्रह)[५४] भी राजा का आवश्यक कर्त्तव्य था। राज-कर्तव्यों के आवश्यकतानुकूल क्रमिक विकास पर प्रकाश डालते हुए अश्वघोष ने कहा है कि राजा को सबसे पहले राजधानी का निर्माण करना चाहिए (पुरं विधाय) तत्पश्चात् दण्ड की व्यवस्था (अनुविधाय दण्डं), मित्रों का संग्रह (मित्राणि संगृह्य) तथा शत्रुओं का दमन कर (रिपून्विगृह्य) राज्य विस्तार करना चाहिए (राजा यथाप्नोति हि गामपूर्वा) और "नीति" का आश्रय लेना चाहिए।[५५] राजा अपने वंशानुगत शत्रुओं के साथ युद्ध कर (विजग्राह कुल द्विषः[५६]) कुमार्ग गामियों का दमन (निजग्राहास्थितान्पथि)[५७] करता था। वह अपनी कान्ति,[५८] तेज और तप से शत्रु-सेना को नष्ट कर[५९] उसे प्रभाहीन कर देता था।[६०]

सर्व धर्म-व्यवस्था—राजा के लिए "धर्म-चर्या"[६१] आचरणीय थी। सभी धर्माचारियों की सुव्यवस्था कर, प्रजा के सुख दुःख का ध्यान रखना[६२] राज धर्म[६३] था। यही कारण था, कि वह सत्पात्रों को दान देता था (दानान्यदित पात्रेभ्यः)[६४], विद्वानों की उपासना करता था, (विदुषः पर्युपासिष्ट)[६५]। वह निरन्तर दानप्रदाता था (दानैरजस्त्रविपुलैः)।[६६] पापवृत्ति से दूर (पापंनाकृतकिंचन्)[६७] स्वयं अधार्मिक कार्यो से परिमुक्त हो दूसरों को धर्म की ओर आकृष्ट करता था[६८]। लोक कल्याण के लिये वह उद्यान, देव मंदिर (देवायतन), आश्रम, कूप, पनसाले (प्रपा), जलाशय (पुष्पकरिणी) तथा उपवन (वनानाम्)[६९] लगवाता था। सम्राट् अशोक के ये जनकल्याणकारी कार्य इतिहास प्रसिद्ध हैं।[७०]

इस प्रकार स्वरूपवान किन्तु निराभिमानी, अनूकूल किन्तु कौटिल्य रहित, तेजस्वी किन्तु सहनशील और कार्य कुशल किन्तु विस्मय रहित[७१] राजा, प्रजा में आनन्द-वृष्टि कर[७२] विशुद्ध व्यवहार से अपने यश के जलते हुए प्रदीप से पृथ्वी को आलोकित करता था।[७३] इस प्रकार "पुण्यकर्मा"[७४] राजा

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

राजलक्ष्मी[७५] (नृपश्री)[७६] को प्राप्त कर नीति-बल से पृथ्वी को जीतता हुआ अपने यश को फैलाता था।[७७]

राज विरुद—अश्वघोष का युग कुषाण साम्राज्य-वाद का युग था। अतः उस समय विभिन्न राज-विरुद्धों का प्रचलित होना स्वाभाविक ही था। प्रजारंजन के कारण राजा[७८] तथा मनुष्यों का पालक होने के कारण नृप[७९], उसकी लोकविदित संज्ञाएँ थीं। इसी से सम्बन्धित नराधिप[८०], नरपति[८१] नृपति[८२] तथा राष्ट्र रक्षण के कारण भूप[८३], भूपति[८४], भूमिपति[८५], भूमिपाल[८६]-भूमिप[८७] महीपति[८८], वसुधाधिप[८९], पार्थिव[९०] और पार्थिववान[९१] संज्ञायें सार्थक थीं। नरेन्द्र[९२], नरदेव[९३], नृदेव[९४] विरुद्ध उसके दैवी स्वरुप के द्योतक थे। इसकी पुष्टि तत्कालीन अभिलेखों[९५] से भी होती है। महाराज[९६] तथा चक्रवर्ती सम्राट्[९७] जैसी उपाधियां साम्राज्यवादिता की सूचक है। ज्ञातव्य है कि सभी कुषाण सम्राटों को महाराज राजाधिराज या राजाधिराज युवराज और विमकदफिसेस को सर्वलोक ईश्वर और महीश्वर या महेश्वर कहा गया है।[९८]

युवराज—लक्ष्मी और यश की रक्षा के लिये राजकुमार का होना आवश्यक था। इसीलिए उसका विशेष रूप से पालन-पोषण होता था।[९९] उसके मनोरंजन के लिए मंत्री-पुत्र[१००] और मंत्रणा देने के लिए पुरोहित का सुयोग्य पुत्र (धीमान)[१०१] नियुक्त किया जाता था।[१०२] वंश-लक्ष्मी को स्थिर रखने के लिये प्रत्येक सक्य कार्य करना युवराज का कर्त्तव्य होता था[१०३]

उत्तराधिकार—उत्तराधिकार वंशानुगत (कुलक्रमात्)[१०४] होता था। आयु और गुणों में ज्येष्ठ भाई ही[१०५] उत्तराधिकार का अधिकारी था। श्रेष्ठ गुण (वरान् गुणान्)[१०६] सौम्य स्वभाव,[१०७] यशवृत्ति और नीति (यशोमतिश्च)[१०८] तथा अनेक विद्यायों का अर्जन (बह्वीरध्यगमद्विया)[१०९] आदि गुण उत्तराधिकार के लिए आवश्यक थे।

अभिषेक—राजा का प्रथम और पवित्र संस्कार था, जब उसे पवित्र जल से अभिसिंचित[११०] किया जाता था। तत्पश्चात् धर्मपालन के लिए (धर्माय) उसे राजछत्र प्रदान कर (धृतातपत्रः)[१११] राज-दीक्षा दी जाती थी (समुदीक्षमाणः)[११२]

राज्य परित्यागन्—[११३] प्राचीन राजतन्त्र की यह विशेषता रही है, कि वृद्ध होने पर राजा अपनी सन्तान को राज्य-श्री प्रदान कर स्वयं ही वन चले जाते थे।[११४] इस प्राचीन परम्परा को बनाये रखने के लिए ही राजा शुद्धोदन ने कुमार सिद्धार्थ को राजपद पर अभिषिक्त कर तथा राजछत्र प्रदान कर प्रसन्नता पूर्वक वन चले जाने की अभिलाषा व्यक्त की थी।[११५]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

राज पत्नी—[११६] रानी की सेवा के लिये हजारों दासियां नियुक्त होती थीं (नारी सहस्रै रभिनद्यमाना)।[११७] प्रायः रानी राजा की कान्ति के समान ही प्रभावशाली (दीप्त्यानरेन्द्रस्य समप्रभावा), सुरुपवान (पद्मेवलक्ष्मी) पृथ्वी के समान धीर (पृथिवीवधीरा)[११८] निष्पाप (पापविवर्जिता)[११९] होती थी। उसके निवास के लिये "अन्तः पुर"[१२०] की व्यवस्था होती थी। लक्ष्मी[१२१] और देवी[१२२] उसकी दैवी उपाधियां थीं।

राजदोष—गुण ग्रहण के साथ ही साथ दोषों से दूर रहना (विषयेष्व-कुतुहल)[१२३] भी राजा के लिये आवश्यक था। राजदोषों (कामवृत्ति) के कारण पराभूत हुए अनेक राजाओं एवं रार्जषियों का उल्लेख सौन्दरनन्द[१२४] तथा बुद्ध चरित[१२५] में मिलता है। व्यसनों के वसीभूत होकर प्रजा से बलात्, "कर' लेना, प्रजा का पालन न करना[१२६] और अश्रुबहाना[१२७] ऐसे दोष थे, जिनसे राजा पराभव को प्राप्त होता था।

मंत्रि-मण्डल—कौटिल्य ने राजा और मंत्री को राज्य-रथ के दो पहिए बतलाया है।[१२८] जिससे मंत्रियों का महत्व स्पष्ट है। अश्वघोष के समय में भी उनका महत्व पूर्ण स्थान था। राजा के लिए उनकी सहायता आवश्यक थी। इसीलिए वह मंत्रियों से घिरे रहते थे (मंत्रिगणेरुपास्यमानम्)[१२९]। सप्तांग राज्य के शीर्ष राजा के वे नेत्र थे (नृपस्य चक्षू)[१३०]।

अर्हताएँ और कोटियां—मंत्रियों की अनेक कोटियां थीं। "मति सचिव"[१३१] सबसे अधिक विश्वस्त और राजा को परामर्श देने वाला होता था। इसे अमात्य भी कहा जाता था।[१३२] मति सचिव विद्या, विनय तथा अन्य उत्तम गुणों से सम्पन्न (श्रुतविनयगुणान्वितः)[१३३] होते थे। मति सचिवों के अतिरिक्त सामान्य "सचिव"[१३४] भी होते थे, जो शास्त्र के अनुसार राजा का निर्देशन करते थे।[१३५]

पुरोहित[१३६] प्रायः वृद्ध (प्रवयाः)[१३७] ब्राह्मण (द्विज)[१३८] ही होता था। वेद-ज्ञान, नम्र स्वभाव (विनय) तथा सद्गुण पुरोहित के प्रमुख गुण थे। राजा के शोक ग्रस्त समय में मति सचिव के साथ पुरोहित भी उसे समझाते थे।[१३९] राजा का आदेश पालन पुरोहित और अमात्य का परम कर्तव्य था।[१४०] पुरोहित राजकुमारों की शिक्षा-दीक्षा के साथ उन्हें भी उचित परामर्श देते थे।[१४१]

मंत्री[१४२] नीति को धारण करने वाले (मंत्रधर)[१४३] होते थे। राजनीति पर एक पूर्ण स्वामित्व होने के कारण उन्हें "मन्त्राधिकृत"[१४४] कहा जाता था।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

मंत्रिमण्डल का प्रत्येक सदस्य बुद्धिमान (धीमान)[१४५] नीति और शास्त्र का ज्ञाता (नीतिशास्त्रज्ञ)[१४६] होता था। राजा का "प्रिय" और "हित" (प्रिय हितं चैव)[१४७] देखना उसका परम कर्तव्य था। मन्त्री "राजभक्त" होते थे, जिनके सामने व्यक्ति गत हित और इच्छा से बढ़कर राजाज्ञा और राजहित होता था।[१४८]

मंत्रि पद और नियुक्ति—मंत्रि-पद पैतृक था। योग्य मंत्री-पुत्र राजकुमार के साथ रहते थे[१४९] और कालान्तर में वे ही मंत्री होते थे। यद्यपि मंत्रियों की नियुक्ति के लिए 'उपधाओं' जैसी परीक्षाओं का उल्लेख कवि ने नहीं किया है तथापि बुद्धि वाणी और पराक्रम आदि भिन्न भिन्न गुणों के अनुरूप विभागों में ही उन्हें नियुक्त किये जाने[१५०] का उल्लेख कवि ने अवश्य किया है।

राष्ट्र

"भूमि"[१५१] राज्य का आधार था। राष्ट्र[१५२] के बिना राजा का कोई मूल्य नहीं था। साथ, ही बिना राजा के राष्ट्र भी शोभा विहीन था। (अराजकं नैव रराज राष्ट्रम्)[१५३]। राजधानी के अतिरिक्त राज्य का शेष समस्त भाग ही राष्ट्र था जिसमें ग्राम, नगर और निगम स्थित होते थे।

राजधानी

अश्वघोष के अनुसार राजा को सबसे पहले राजधानी (पुर)[१५४] का निर्माण करना चाहिए। प्रायः सबसे पहले शत्रुओं के आक्रमण राजधानी पर ही होते हैं अस्तु उसकी सुरक्षा के लिए विशेष प्रबन्ध आवश्यक होता है। राजधानी के चारों ओर नदी की भांति चौड़ी परिखा (सरिद्विस्तीर्णपरिखं) तथा पर्वत की भांति ऊँची चहार दिवाल (शैल कल्प महावप्रम्)[१५५] होती थी। राजधानी द्वार की रक्षा सदा ही "द्वाराध्यक्ष" करता था, जिससे शत्रु सरलतापूर्वक आक्रमण नहीं कर सकता था।[१५६] राजधानी के नागरिकों को पौर[१५७] या पौरजन कहते थे।

कोष

कोष[१५८] आकर्षण का कारण होता था। इसके अधिकारी कोषाध्यक्ष का उल्लेख सभी राज शास्त्र प्रणेताओं ने किया है। अश्वघोष के युग में कोषाध्यक्ष को कोष्ठागारिक (कोथाकारिक)[१५९] कहा जाता था।

कर व्यवस्था—"कर" राजकीय आय का प्रधान साधन था, जिसे लोक सुरक्षा के लिए प्रजा से एकत्रित किया जाता था। कर लगाने में सदा ही इस बात का ध्यान रखा जाता था कि उससे प्रजा को कष्ट न पहुंचे

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(करैर्नापीपिडत्प्रजा:)[१६०] उपज का छठवां अंश भूमि–कर के रूप में लिया जाता था।[१६१] भूमि पर अनुचित कर नहीं लगाये जाते थे।[१६२] आवश्यकता पड़ने पर प्रजा से उसकी इच्छा के अनुकूल जो कर लिया जाता था उसे भेंट (बलि)[१६३] कहते थे। कवि ने बार बार इस बात का उल्लेख किया है कि उसके समय में अनुचित कर नहीं लगाये जाते थे और न प्रजा को उत्पीड़ित ही किया जाता था।[१६४] इससे यह प्रतीत होता है कि अश्वघोष के पहले अनुचित कर लगाकर प्रजा को उत्पीड़ित किया जाता था।

बल

शत्रु-निग्रह और राष्ट्र-रक्षण के लिये "बल" राज्य का आवश्यक अंग था। चतुरग बल[१६५] का उल्लेख कवि ने किया है। सेना[१६६] और चमू[१६७] बल के ही दूसरे नाम थे।

हस्ति सेना—प्राचीन भारत में सेना में हाथियों[१६८] को प्राथमिकता दी जाती थी। लौह[१६९] अंकुश से उसे शान्त रखा जाता था। लड़ाकू हाथियों की चिंघाड़ बड़ी भयानक होती थी। शत्रु पर आक्रमण करते समय उन्हें दूर जंगलों में छिपा दिया जाता था।[१७०] हाथियों की देखरेख के लिये हस्तिरक्षक नियुक्त किये जाते थे।[१७१]

रथसेना—चतुरंगिणी सेना का द्वितीय प्रधान अंग था। रथों[१७२] में घोड़े जोते जाते थे। रथ चालक को "रश्मिधर"[१७३] तथा "रथ प्रणेता"[१७४] भी कहते थे।

अश्वसेना—अश्वों को पहले भारतीय सेना में गौड़ स्थान दिया जाता था। परन्तु युनानियों के आक्रमण के समय से सेना में अश्वों को प्रधानता दी गयी।[१७५] उपर्युक्त तीनों सेना के अंगों का उल्लेख कवि ने अनेक बार एक साथ (हयगजरथौघसंकुलं) किया है।[१७६] जिससे सामुहिक सामरिक महत्व स्पष्ट है।

पदाति—पैदल सैनिकों को "भृत्य"[१७७] कहा जाता था। इस सैन्य-अंग में वीरयोद्धा (वीर पुरुषा:)[१७८] रखे जाते थे। शत्रु-दमन में पदाति सेना का सबसे महत्वपूर्ण स्थान था।[१७९] मल्ल सेना (प्राय: सभी गण राज्य सेनाओं) में पदाति सेना की प्रधानता थी। धनुष बाण और तलवार उनके प्रमुख अस्त्र-शस्त्र थे।[१८०]

सेनाधिकारी—"सेनापति"[१८१] तथा "महासेनापति"[१८२] सेना के अधिकारियों का उल्लेख मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि सेनापति सेना के एक अंग का अध्यक्ष होता था और चारों सेनापतियों के ऊपर महासेनापति होता था।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

व्यूह रचना और युद्ध—व्यक्तिगत स्वार्थ आपस में टकराकर युद्ध को जन्म देते हैं। राज्यों और राजाओं के उदय के साथ ही साथ युद्ध का भी उदय हुआ। बुद्ध चरित में भी व्यूह रचना और युद्ध पर धुंधला प्रकाश पड़ता है। शत्रु-दमन राजा का परम कर्तव्य था। अस्तु उसके दमन हेतु प्रस्थान करने के पूर्व मार्ग साफ करवाया जाता था[१८३] समान उद्देश्य वाले कई राजा कभी कभी आपस में मिलकर भी शत्रु पर आक्रमण करते थे। महापरिनिर्वाण को सुनकर लोकनायक बुद्ध के अवशेष पुष्पों में भाग प्राप्त करने के लिये अजातशत्रु आदि सात पड़ोसी राजाओं ने[१८४] संघ बनाकर कुशीनारा के मल्लों पर आक्रमण किया था।

कुशीनगर के चारों ओर गुप्त रूप से उन्होंने घेरा डाला था। गोपनीयता के लिये चिंघाड़ने वाले हाथियों को उन्होंने दूर वनों में छिपा दिया था। पूर्णरूप से व्यूह की तैयारी हो जाने पर नगर के प्रत्येक द्वार को हाथियों और घोड़ों से घेर लिया गया था। हाथियों की चिंघाड़ और घोड़ों की हिनहिनाहट तथा रणभेरियों की घनघोर ध्वनि से नगर गूंज उठा था।

शत्रुओं द्वारा इस प्रकार व्यूह की रचना देखकर वीर मल्ल भक्तों ने भी अपने आयुध संभाले और सुरक्षा-प्राचीर पर एकत्रित हो गये थे। साहसी मल्लों की तलवारें, तीर और बर्छियाँ शत्रुओं पर बाज के समान लपकने लगीं। मल्ल वीरांगनाओं ने पुत्रों को कवच पहनाये और उन्हें युद्ध में आगे जाने के लिये प्रोत्साहित किया। उन्होंने युद्ध में घायलों के लिये औषधियाँ और पुरस्कार भेजे। माताओं ने मंगल कार्य किये। परन्तु द्रोण व्यक्ति के प्रयत्नों से दोनों दलों के मध्य सन्धि हो गयी थी।[१८५] इस अतीत के दृष्टान्त से स्पष्ट है कि उस युग के लोग व्यूह रचना और युद्ध कला से भली भाँति अवगत थे।

आयुध—आत्म रक्षा और शत्रु विनाश के लिये अस्त्र-शस्त्रों (आयुध)[१८६] की आवश्यकता होती है। तलवार[१८७] (असि)[१८८] भारतीयों का पुराना आयुध है। सुरक्षा के लिये उन्हें म्यान (कोश) के अन्दर रक्खा जाता था। विशिष्ट तलवारों पर सोने के पानी से चित्रांकन भी होता था (कांचनभक्तिचित्रं) उनकी मूंठ मणियों से जड़ी (मणित्सरुं)[१८९] होती थी। ऐसी तलवारें कमल के नीले पत्ते के समान (उत्पलपत्रनीलं)[१९०] चमकदार होती थीं। दूर से प्रहार करने के लिये धनुष-वाण मुख्य आयुध था। बाण[१९१] तीर[१९२] शर[१९३] और इषु[१९४] को धनुष[१९५]-चाप[१९६] की सहायता से फेका जाता था, जिनका पृष्ठ भाग सुनहले रंग का बनाया जाता था।[१९७] शल[१९८] शल्य[१९९] शूल[२००] त्रिशूल[२०१]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

प्रभास[२०२] (भाला) बर्छी[२०३] के अतिरिक्त वृक्षों[२०४] तथा शिलाओं[२०५] का भी प्रयोग युद्ध में किया जाता था। समर भूमि में वीर पुरुष, कवच[२०६] (वर्म)[२०७] धारण करते थे क्योंकि युद्ध में कवच विहीन योद्धा शत्रु-आयुधों का लक्ष्य होता था। ऐसे समय में कवच ही शरीर रक्षक था।[२०८]

मित्र

मित्र[२०९] सप्तांग राज्य का मुख्य अंग था। अश्वघोष के अनुसार राजा के लिये मित्र संपत्ति (मित्रसंपदा)[२१०] थी। अपने अविजित शत्रुओं को पराजित करने हेतु राजा के लिये बलवान और श्रेष्ठ मित्र की नितान्त आवश्यकता होती थी।[२११] राजाओं के शत्रुओं[२१२] में से कुछ शत्रुओं को तो धन-दौलत देकर शान्त कर लिया जाता था,[२१३] परन्तु वंश परम्परा के शत्रुओं को मित्रों के सहायता तथा सेना से ही शान्त किया जाता था। महाकवि अश्वघोष ने अहित से रोकना, हित में लगाना और निन्दा तथा विपत्ति में साथ न छोड़ना मित्र के तीन लक्षण बतलाये हैं।[२१४]

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

शासन व्यवस्था

अश्वघोष का युग सुख और समृद्धि का युग था। सुशासन और सुरक्षा प्रवंध के कारण प्रजा निर्भय होकर सुख की नींद सोती थी, जैसे बच्चे अपने पिता की गोद में सुख से सोते हैं।[२१५] दूसरों की सम्पत्ति को विषैले सर्प की भाँति जान कर लोग उसका हरण नहीं करते थे।[२१६] दीन-दुखियों को अभय दान देने में निरत राज-धनुष के कारण प्रजा को कोई कष्ट नहीं देता था।[२१७] लोग शील का समाचारण करते थे और धन की भाँति वे सद्‌गुणों का अर्जन करते थे।[२१८] लोग स्वेच्छा पूर्वक अपने-अपने धर्म का परिपालन करते थे।[२१९] राज्य की ओर से 'सर्व धर्म व्यवस्था'[२२०] वा पूर्ण प्रबन्ध था। धर्मानुसार राज्य-रक्षण और व्यवस्था राजा के सुयश तथा स्वर्ग-प्राप्ति के साधन थे।[२२१]

न्याय और दण्ड व्यवस्था

दण्ड, न्याय-व्यवस्था के लिये आवश्यक साधन है। सुव्यवस्था के लिये उस युग में राजा रात्रि में स्वयं परिभ्रमण करता था, अपराधियों का पता लगाता था और उन्हें दण्ड द्वारा शान्त करता था।[२२२] दण्ड कठोर (दारुण) थे। अपराधियों को अनेक प्रकार के दण्डों से पीड़ित किया जाता था। (दुःखैर्बहुविधैः पीड्यन्ते),[२२३] उपद्रवी तथा कुख्यात अपराधियों को पिघले हुए लोहे का अग्नि वर्णी गर्म पानी पिलाया जाता था, गर्म लौहस्तभों पर चढ़ाया जाता था।[२२४] तथा दारुण कुत्तों द्वारा कटवाया जाता था (भक्ष्यन्ते दारुणैः श्वभिः)।[२२५] मृत्यु दण्ड भी दिया जाता था।[२२६] मृत्यु दण्ड प्राप्त व्यक्ति को नशे में बेहोश करके, हथकड़ियाँ डाल कर वध-भूमि को ले जाया जाता था।[२२७] जहाँ तलवार द्वारा उसका वध किया जाता था।[२२८] निष्कर्ष रूप में उस युग में 'राजधर्म' दण्ड प्रधान था।[२२९]

दण्ड में कमी—राजकुमारों के जन्मोत्सव तथा अन्य राज उत्सवों के समय अपराधियों के दण्ड में कमी करने की परम्परा का उल्लेख चाणक्य ने भी किया है। अश्वघोष के समय में भी यह परम्परा प्रचलित थी। राज पुत्र के जन्म के उपलक्ष में मृत्युदण्ड प्राप्त अपराधियों को भी जीवन दान दिया जाता था, यद्यपि उन्हें बिलकुल ही दण्ड-मुक्त नहीं किया जाता था क्योंकि यह बात नीति के विरुद्ध थी।[२३०]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

बन्दियों की मुक्ति—अंगभंग के दण्डों के साथ ही साथ कारावास का दण्ड[२३१] भी दिया जाता था। कौटिल्य के युग में युवराज के अभिषेक के दिन, राज पुत्र के जन्म के दिन, किसी विजय के दिन, राजा की वर्ष गांठ के दिन अथवा किसी विशेष उत्सव के दिन बन्दियों को मुक्त करने की प्रथा थी। यह परम्परा अश्वघोष के युग में भी सास्वत ही बनी रही जिसके अनुसार ही राजकुमार सिद्धार्थ के जन्म के अवसर पर शुद्धोदन ने राज्य के समस्त बन्दियों को मुक्त कर दिया था।[२३२]

चर व्यवस्था

राज्य की गुप्त से गुप्त बात का भी पता पाने के लिये गुप्तचरों की व्यवस्था करना राजा का आवश्यक कार्य था। गुप्तचरों[२३३] की नियुक्ति उनके पवित्र चरित्र[२३४] पर ही आधारित थी। मगधराज अजात शत्रु के मंत्री वर्षकार (वर्षाकर) का लिच्छवियों के विनाश के लिये किया गया चर-कार्य भारत के इतिहास में प्रसिद्ध ही है।[२३५]

दूत व्यवस्था

पड़ोसी राजाओं से मैत्री-सम्बन्ध स्थापित करने के लिये राज दूतों की नियुक्ति की जाती थी। तथागत की 'धातु' प्राप्ति के लिये पड़ोस के सात राजाओं ने अपने अपने दूत मल्लों के पास कुशीनारा भेजे थे।[२३६] ये वास्तव में राजदूत ही थे। दूत का कार्य मध्यस्थता का था। उपर्युक्त सात राजाओं और मल्लों के मध्य युद्ध की सम्पूर्ण तैयारी देखकर युद्ध की ज्वाला को शान्त करने के लिये द्रोण नामक विद्वान पुरुष ने दोनों दलों के मध्य दौत्यकार्य था।[२३७]

अधिकारियों की नियुक्ति

अधिकारियों की नियुक्ति तथा पदोन्नति में राजा को विशेष सतर्कता वरतनी पड़ती थी। यद्यपि योग्यता और कर्तव्य परायणता नियुक्ति के मुख्य आधार थे तथापि किसी भी अधार्मिक व्यक्ति को, चाहे वह सकट काल के लिये उपयोगी ही क्यों न हो नियुक्त नहीं किया जाता था और न ही अपना प्रिय जन समझ कर पक्षपात पूर्वक किसी भी अयोग्य व्यक्ति की पदोन्नति ही की जाती थी।[२३८]

उपाय

राज्य-प्रबन्ध में उपाय (नय)[२३९] का विशिष्ट स्थान है। उपायों के अभाव में सुप्रबन्ध असम्भव है। साम, दान, दण्ड और भेद चार उपाय सभी

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

प्राचीन भारत के विधि प्रणेताओं ने बतलाये हैं, परन्तु अश्वघोष ने इन चारों उपायों के साथ ही 'संयम (नियम) पांचवां 'उपाय[२४०] भी बतलाया है।

राजपुरुष

राजाओं की सेवा के लिये राजपुरुष[२४१] भृत्य[२४२] राजभृत्य[२४३] जन[२४४] और अनुचर (विनीतानुचर)[२४५] भी होते थे।

इस प्रकार कवि ने उपमाओं और रूपकों द्वारा राज्य के विभिन्न अंगों, शासन पद्धति, सुरक्षा, न्याय, दण्ड-व्यवस्था का सामयिक चित्रण प्रस्तुत किया है, जिसकी पुष्टि तत्कालीन अन्य ग्रन्थों तथा पुरातात्विक प्रमाणों से भी होती है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय छः के सन्दर्भ

१. बु० च० ११४१
२. वही, ४।६२
३. वही, ९।४८; सौ० २।३१
४. सौ० २।२८
५. वही, ११६२, २।३,१६, १५।६१
६. बु० च० १।२५
७. सौ० १०।१२
८. वही, ३।८; बु० च० १३।५५
९. सौ० ११५१
१०. दिव्या० ८७।२९-३०
११. चौ० बु० च० १९।३७
१२. बु० च० २०।१६
१३. वही, ९।४९, ५०; चौ० बु० च० १९।२१
१४. बु० च० ८।८४
१५. वही, २।४१
१६. सौ० १।६० : तारासहस्रै रपि दीप्यमानै रनुत्थिते चन्द्र इवान्तरीक्षम् ।
१७. बु० च० १।२७
१८. सौ० १।६०
१९. बु० च० ८।५४ : गुणवान् हिताद्द्शोनृपः प्रजाभाग्यगुणैः प्रसूयते
२०. सौ० १।६१
२१. वही, १।६२
२२. वही, २।८
२३. वही, २।१
२४. वही, २।३
२५. वही, २।३
२६. वही, २।१२,२५
२७. वही, २।१४
२८. बु० च० २।५४

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२९. सौ० २।२ : नावमेने परानृद्ध्या परेभ्यो नापि विव्यथे ।
३०. वही, २।९ : हितं विप्रियमप्युक्तो यः शुश्राव न चुक्षुभे ।
दुष्कृतं बह्वपि त्यक्त्वा सस्मार कृतमण्वपि ।।
३१. वही, २।२
३२. वही, २।३
३३. वही, २।२६
३४. वही, २।२१
३५. वही, २।२
३६. वही, १।६२ २।३
३७. वही, २।४१ : ते नारिरपि दुःखार्तो नात्याजि शरणागतः ।
जित्वा दृप्तानपि रिपून्न तेनाकारि विस्मयः ।।
३८. वही, २।३
३९. वही, २।१३
४०. वही, १३।३८
४१. वही, २।४३
४२. वही, २।१०
४३. वही, १।६२
४४. वही, ३।१५
४५. वही, २।३०
४६. बु०च० १।३३
४७. वही, १।१
४८. वही, १।१
४९. सौ० २।२२ : आक्रक्षद्वपुषा दृष्टीः प्रजानां चन्द्रमा इव ।
५०. वही, २।२७
५१. वही, २।१०
५२. वही, २।१०
५३. वही, २।१६
५४. वही, १३।३८
५५. वही, १७।११
५६. वही, २।१०
५७. वही, २।१०

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

५८. वही, २।२९ : दीप्त्या तम इवादित्यस्तेजसारीनवीवपत् ।

५९. वही, २।३६ : तपसा तेजसा द्विषत्सैन्यममीमपत् ।

वही, २।३३ : द्विषद्दर्पमदीदपत ।

६०. वही, २।३९ : तेजसा च त्विषा चैव रिपूद्दप्तानबीभसत् ॥

६१. वही, २।४६

६२. वही, २।३४ : प्रजा नादीदपच्चैव सर्वधर्मव्यवस्थया ।

६३. बु०च० २०।१०

६४. सौ० २।१२,४०

६५. वही, २।१४, २।३५

६६. वही, २।३१

६७. वही, २।१२

६८. वही, २।३२

६९. बु० २।१२

७०. अशोक का द्वितीय शिलाभिलेख ।

७१. सौ० २।४ : वपुष्मांश्च न च स्तब्धो दक्षिणो न च नार्जवः ।
तेजस्वी न च न क्षान्तः कर्ता च न च विस्मितः ॥

७२. वही, २।३० : सलिलेनेव चाम्भोदो वृत्तेनाजिह्लदत्पजाः ॥

७३. वही, २।३९ : यशोदीपेन दीप्तेन पृथिवीं च व्यबीभसत् ॥

७४. बु०च० २।५०

७५. सौ० १६।८५

७६. बु०च० १।५६, २।५०; चौ० बु०च० २९।३३

७७. सौ० २।१६ : अचैषीच्च नयैर्भूमि भूयसा यशसैव च ।

७८. बु०च० १।१३, २८, ३५, ३९, ४४, ८९; २।१, ३।३२, ४३, ५४, ५।३४
९।१३, ६९, ७२, ८२, १०।१२, १६, ११।४४, ६८; १९।१८, २०।१२
२१।६; सौ० २।१, ४५, ७।४३

७९. बु०च० १।६, ३१, ३९, ५२, ५४, ८७, २।१७, ३।३, २९, ४।१, ९।१,
२१, ४०, ७२, ८१, १०।२०, ११।५८, ६९, २०।३५

८०. वही, ३।६३, ८।७९, ९।३३, ६७; सौ० २।४७

८१. बु०च० १।८९, ८।८६, २०।१५

८२. वही, ५।२७, ८।८७; सौ० ३।२७, ८।१३

८३. बु०च० १।३५

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

८४. वही, १।४८, १९।१९, २०।१४, ५४
८५. वही, २।४५
८६. वही, २।४७, ५५
८७. वही, ९।३१
८८. सौ० २।४८
८९. बु०च० ९।५०
९०. वही, ११।७३, १२।७
९१. वही, १।५१
९२. वही, १।५०, ५९,७८, २।५५, ३।७, ५३,६३; ९।१९,१२; सौ० २।६०
९३. बु०च० ५।२८
९४. सौ० २।४९
९५. एपी० इण्डि० जि० ९ पृ० २४०, जि० १४ पृ० २९४
९६. बु०च० २०।३१
९७. वही, ८।८४ १९।३५; सौ०२।३२
९८. डॉ० पुरी, इ० अ० कु० पृ० ८०
९९. बु० च० २।५५ : रिरक्षिषन्तः श्रियमात्मसंस्थां,
रक्षन्ति पुत्रान् भुवि भूमिपालाः
१००. वही, ५।२
१०१. वही, ४।८
१०२. वही, ४।६३ : अहं नृपतिना दत्तः सखा तुभ्यं क्षमः किल ।
१०३. वही, ४।२२ : तदेवं सति विश्रब्धं प्रयतध्वं तथा यथा ।
इयं नृपस्य वंशश्रीरितो न स्यात्पराङ्मुखी ।।
१०४. सौ० २।१
१०५. वही, १।६१
१०६. बु०च० १।३९
१०७. वही, ३।११
१०८. वही, १।४०
१०९. सौ० २।२५
११०. वही, १।६१; बु०च० ९।२२
१११. सौ० १।६२
११२. बु०च० ९।२२
११३. वही, १।६९

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

११४. वही, १२।७ : नाश्चर्यं जीर्णवयसो यज्जग्मुः पार्थिवा वनम् ।
अपत्येभ्यः श्रियं दत्वा भुक्तोच्छिष्टामिव स्रजम् ।।

११५. वही, ९।२२ : इच्छामि हि त्वामुपगह्य गाढं कृताभिषेकं सलिलार्द्रमेव।
धृतातपत्रं समुदीक्षमाणस्तेनैव हर्षेण वनं प्रवेष्टुम् ।।

११६. वही, १।८

११७. वही, १।८

११८. वही, १।२

११९. वही, १।३

१२०. वही, १।५१

१२१. वही, १।२

१२२. सौ० २।४९

१२३. वही, २।२५, २।४२, ४३, ८।२९

१२४. वही, ५।२५-५१

१२५. बु० च० ४।१६-२२, वही, ४।७२-९५

१२६. सौ०९।३८ : यथा प्रजाभ्यः कुनृपो बलाद्बलीन्हरत्यशेषं च नचाभिरक्षित ।

१२७. बु० च० ८।८३

१२८. दृष्टव्य कौटलीय अर्थशास्त्र

१२९. बु० च० ५।२७

१३०. वही, ९।७२

१३१. वही, ८।८२; पाण्डे, हि० लि० इ० पृ० ६५ : रुद्रदामन प्रथम के गिरनार शिलाभिलेख में भी मति सचिव और कर्म सचिव का उल्लेख हुआ है । मति सचिव परामर्शदाता और कर्म सचिव, कार्य कारी या अधिशासक होते थे (हि० लि० इ० पृ० ६५ पा० टि० २)

१३२. वही, ८।८७; चौ० बु० च० १९।३

१३३. वही, ८।८२

१३४. वही, ४।१०३, ९।८०; सौ० १।४७

१३५. बु० च० ५।४० : सचिवैस्तु निर्दशितो यथावद् ।
बहुमानात्प्रणयाच्च शास्त्र पूर्वम् ।।

१३६. वही, ४।८, ८।८७, ९।१, ९; चौ० बु० च० १९।३

१३७. बु० च० ८।८२

१३८. वही, ९।८०

१३९. वही, ८।८२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१४०. वही, ८।८७
१४१. वही, ९।१२-३०, ९।५२-७१
१४२. चौ० बु० च० २२।३
१४३. बु० च० ९।९, ५२
१४४. वही, १०।१
१४५. वही, ४।८
१४६. वही, ४।६२
१४७. वही, ९।७२
१४८. वही, ९।७
१४९. वही, ५।२
१५०. सौ० १।४७ : व्यस्तैस्तैर्गुणैर्युक्तान्मतिवाग्विक्रमादिभिः ।
कर्मसु प्रतिरूपेषु सचिवांस्तान्न्ययूयुजन् ।।
१५१. वही, १७।१२
१५२. वही, १।६२, २।२३, ३३; बु० च० २।१५
१५३. सौ० १।६०
१५४. वही, १७।११, १२; बु० च० ५।२३
१५५. सौ० १।४२; बु० च० २८।१०
१५६. सौ० १४।३६
१५७. वही, १।४९; बु० च० ३।१०
१५८. बु० च० १६।६४
१५९. एपी० इण्डि० जि० २० पृ० २२
१६०. सौ० २।२७
१६१. महावस्तु जि० १।३४८।३
१६२. सौ० २।१९
१६३. वही, २।३३
१६४. वही, १।५६, २।२०
१६५. बु० च० २८।१६
१६६. सौ० ७।४३
१६७. वही, १७।४०
१६८. वही, १।५२
१६९. बु० च० २६।३७
१७०. बु० च० २८।५

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१७१. वही, २१४७
१७२. सौ० ११५२
१७३. बु० च० ३।८
१७४. वही, ३।२९
१७५. वही, २८।४, १६; सौ० ११५२
१७६. सौ० ३।१; ५।१, १।५२ ९।२३
१७७. वही, २।३३
१७८. वही, ९।२३
१७९. सौ० २।३३ : भृत्यैरेव च सोद्योगं द्विषद्दर्पमदीदपत् ।
१८०. बु० च० २८।१०
१८१. सौ० ७।४३
१८२. एपी० इण्डि०, जि० १४ पृ० १५५
१८३. सौ० १६।८५
१८४. महापरिनिब्बान सुत्त—दीघ निकाय जि० २ पृ० १२८ :
मगध राज अजातशत्रु, वैशाली के लिच्छवी, कपिलवस्तु के शाक्य, अल्लकप्प के बुलिय, राम ग्राम के कोलिय, वेट्ठदीप के ब्राह्मण, पावा के मल्ल ।
१८५. बु० च० २८।१,५३
१८६. वही, १३।२०
१८७. वही, २८।१०
१८८. वही, १३।१८
१८९. वही, ६।५६, २८।३८
१९०. वही, ६।५७
१९१. वही, १३।१५, १६, १७
१९२. वही, २८।१०
१९३. वही, १३।१४
१९४. वही, १३।४७
१९५. सौ० १०।६२
१९६. वही, ८।५८; बु० च० १०।३१
१९७. बु०च० २८।३८
१९८. वही, १३।१८

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१९९. सौ० १८।७

२००. बु० च० १३।२३

२०१. वही, १३।२६

२०२. वही, १३।१८

२०३. वही, २८।१०

२०४. वही, १३।१८, ३८

२०५. वही, १३।३८

२०६. वही, २८।१३, ३८; सौ० ८।५८

२०७. वही, ५।३०, ३२, १३।४

२०८. वही, १४।३८

२०९. सौ० २।१८, १७।११, १२, १८।२८; बु० च० २।१

२१०. सौ० २।२६

२११. वही, १७।५६ : संधाय मैत्रं बलवन्तमार्यं राजेव देशानजितान् जिगीषुः ॥

२१२. वही, १४।३१, ५२, १५।३७, १७।११, १२

२१३. वही, १४।१८

२१४. बु० च० ४।६४ : आहितात् प्रतिषेधश्च हिते चानुप्रवर्तनम् ।

२१५. सौ० २।७ : यस्य सुव्यवहाराच्च रक्षणाच्च सुखं प्रजाः ।
शिश्यिरे विगतोद्वेगाः पितुरङ्कगताइव ॥

२१६. वही, २।२२: परस्वं भुवि नामृक्षन्महाविषमिवोरगं ॥

२१७. वही, २।२३: नाक्रुक्षद्विषये तस्य कश्चित्कैश्चित्क्वचित्क्षतः
अदिक्षत्तस्य हस्तस्थमार्तेभ्यो ह्यभयं धनुः ॥

२१८. वही, २।११: प्रायेण विषये यस्य तच्छीलमनुवर्तिनः ।
अर्जयन्तो ददृशिरे धनानीव गुणानपि ॥

२१९. वही, २।३७: प्रजाः परमधर्मज्ञः सूक्ष्मं धर्ममवीवसत् ॥

२२०. वही, २।३४

२२१. बु० च० २०।१६

२२२. सौ० २।२८ : स्पष्टया दण्डनीत्या च रात्रिसत्रानवीवपत् ॥

२२३. बु० च० १४।११

२२४. वही, १४।१२: पाय्यन्ते क्वथितं केचिदग्निवर्णमयोरसम् ।
आरोप्यन्ते रुवन्तोऽन्ये निष्टप्तस्तम्भमायसम् ॥

२२५. वही १४।१४

२२६. वही, २।४२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२२७. सौ० ५।४२
२२८. बु० च० १४।१५
२२९. वही, ९।४८
२३०. वही, २।४२
२३१. सौ० ८।२९
२३२. बु० च० १।८२ : नरपतिरपि पुत्रजन्मतुष्टो विषयगतानि विमुच्य बन्धनानि
२३३. चौ० बु० च० १९।३
२३४. बु० च० ९।८२
२३५. वही, २२।३; दृष्टव्य "महापरि निब्बान सुत्त"
२३६. वही, २८।१
२३७. वही, २८।३४
२३८. सौ० २।३८
२३९. वही, १६।९६
२४०. वही, १५।६१ : साम्ना दानेन भेदेन दण्डेन नियमेन वा ।
२४१. बु० च० १०।११
२४२. सौ० २।२७; चौ० बु० च० १९।२१
२४३. बु० च० १०।१६
२४४. वही, ३।१३
२४५. वही, ३।६, ९

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय ७

शिक्षा और साहित्य

किसी भी युग की उन्नति-सामाजिक, नैतिक, आर्थिक अथवा राजनैतिक, तत्कालीन शिक्षा-स्तर द्वारा नापी जा सकती है। प्राचीन काल से ही भारत में शिक्षा पर ध्यान दिया जाता रहा है। अश्वघोष के समय में भी शिक्षा का स्तर ऊँचा था, जिसके फलस्वरूप महाकाव्य, प्रवन्ध काव्य, दर्शन के ग्रन्थ, नाटक और वैद्यक-ग्रन्थ इत्यादि का सृजन हुआ। अश्वघोष[१], मातृचेटि[२], चरक[३] तथा कुछ विद्वानों के अनुसार नागार्जुन और आर्य शूर जैसे असाधारण विद्वान इसी काल की देन हैं। बौद्धाचार्य अश्वघोष दार्शनिक, कवि तथा नाटक आदि के रचयिता अथवा सभी गुणों के मिश्रित विद्वान थे। यहां पर तत्कालीन शिक्षा का महत्व, उसका उद्देश्य, शिक्षा के केन्द्र, विद्यार्थी-जीवन, गुरु-शिष्य सम्बन्ध, शुल्क और गुरु-दक्षिणा, स्त्री शिक्षा, अध्ययन के विषयों तथा साहित्य और साहित्यकारों का वर्णन किया गया है।

शिक्षा का उद्देश्य—मानव अपने पूर्वजों की संस्कृति को अपने तथा अपने उत्तराधिकारियों तक पहुँचाने के लिये शिक्षा का माध्यम अपनाता है। वास्तव में शिक्षा ही भावों को व्यक्त करने का माध्यम है। इसीलिए इसका मुख्य उद्देश्य ज्ञान प्राप्ति रहा है। भाष्यकार पतंजलि ने व्याकरण शास्त्र के अध्ययन का मुख्य उद्देश्य वेदों की रक्षा करना बतलाया है।[४]

शिक्षा के केन्द्र तथा संस्थाएं—अश्वघोष के समय में शिक्षा के केन्द्र आश्रम ही थे। विद्यार्थी ज्ञान-प्राप्ति के लिये आश्रम जाते थे। कवि ने "कपिल मुनि गौतम" के आश्रम का उल्लेख किया है, जहाँ "इक्ष्वाकु वंशी" राजकुमार शिष्यत्व ग्रहण करने तथा वहीं निवास करने के लिये गये थे[५]। विन्ध्यपर्वत पर मुनि "अराड" का आश्रम था, जिन्होंने नैष्टिक कल्याण में दृष्टि पाई[६] थी। स्वयं राजकुमार सिद्धार्थ (बुद्ध) ज्ञान-प्राप्ति के लिये उस आश्रम को गये थे।[७] आश्रम में मुनि शिक्षार्थी के ज्ञान की परीक्षा करने के पश्चात् उसके ज्ञान के अनुसार ही उसे शिक्षा देते थे। कभी कभी आचार्य कुछ विद्यार्थियों के ज्ञान की माप कुछ संकेतों से ही लेकर, बिना प्रत्यक्ष परीक्षा लिये हुए शिक्षा देना प्रारम्भ कर देते थे।[८]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अराड-आश्रम के अतिरिक्त उत्तर दिशा की ओर हिमालय के समीप ऋषियों और तपस्वियों के अनेक आश्रम थे, जहां पर भी राजकुमार सिद्धार्थ ज्ञान प्राप्ति के लिए गये थे। जिसका उल्लेख अश्वघोष ने एक सम्पूर्ण सर्ग में किया है।[९] अन्य आश्रमों में जहां सिद्धार्थ के ज्ञानार्जन का उल्लेख करते हुए कवि ने तत्कालीन शिक्षा-केन्द्रों का उल्लेख किया है, उनमें मुनि रुद्रक[१०] तथा राजर्षि गय[११] के आश्रम मुख्य थे।

आश्रमों के अतिरिक्त प्रत्येक धार्मिक श्रमण सम्प्रदाय, सचल शिक्षा संस्था का कार्य करता था। बौद्ध संघ जहां भी रुकता था वहां के लोगों को धार्मिक तथा सामाजिक शिक्षा और उपदेश दिया करता था। बौद्ध-संघ की भाँति परम ब्रह्मवादी ब्राह्मण ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए "ब्रह्मवाद" की शिक्षा देते थे।[१२]

विद्यारम्भ की आयु और प्रवेश—ज्ञान प्राप्ति के लिए सात या आठ वर्ष की आयु उपयुक्त मानी जाती थी।[१३] छोटे छोटे बच्चों का प्रवेश 'लिपिशाला'[१४] में 'दारकाचार्य'[१५] करते थे। आश्रमों में प्रवेश के लिए प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष परीक्षा होती थी।[१६] विद्यारम्भ पवित्र संस्कार माना जाता था, जिसका प्रारम्भ सहस्रों मंगल-मंन्त्रों द्वारा सम्पन्न किया जाता था।[१७]

लेखन सामग्री—पट्टिका, जिस पर बालक लिखना प्रारम्भ करते थे चंदन की बनी होती था।[१८] सोने और मणियों से जड़ी हुई पट्टियों का भी उल्लेख मिलता है।[१९] सारनाथ संग्रहालय में एक पट्टिका लिये हुए बालक सिद्धार्थ की मूर्ति है। गुप्तकालीन यह मूर्ति उन्हें अक्षर ज्ञान कराने के समय की है।[२०]

विद्यार्थी-जीवन—विद्यार्थियों का जीवन ब्रह्मचर्य का जीवन होता था। गुरुओं के साथ ही शिष्य आश्रमों में रहते थे। हिमालय के शुभांचल में प्रसिद्ध कपिलमुनि गौतम का आश्रम था,[२१] जहां विद्याध्ययन के लिये इक्ष्वाकु वंशी राजकुमार गये थे[२२] और आश्रम में ही शालवृक्षों के नीचे निवास करते थे।[२३] विन्ध्याचल पर्वत पर स्थित असित मुनि के आश्रल में ५०० विद्यार्थी कन्द मूल, फल-फूलों पर जीवन निर्वाह करते हुए वेदाध्ययन करते थे।[२४]

अध्यापकों की विभिन्न संज्ञायें—अश्वघोष ने शिक्षकों के लिये परम्परागत आचार्य, मुनि तथा उपाध्याय पदों का ही प्रयोग किया है। कपिल मुनि गौतम इक्ष्वाकु वंशी राजकुमारों के लब्ध प्रतिष्ठ उपाध्याय थे।[२५] भोगाचार में निपुण और भिक्षुचर्या में असमर्थ नन्द के आचार्य स्वयं बुद्ध भगवान थे, जिनके उपदेशों का संबल पाकर उसने ब्रह्मचर्य का पालन किया था।[२६] गुरु[२७] संज्ञा उस समय भी गुरुता सूचक थी।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

गुरु शिष्य सम्बन्ध––गुरु और शिष्यों के मध्य के सम्बन्ध उदार थे। गुरु अपने शिष्यों के लिये समृद्धि की शुभकामना करते थे (वृद्धिचिकिर्षया)।[२८] अपना अभिप्राय सुनाने के लिये शिष्य, गुरु के पास अभिमान त्याग कर जाते थे। उनकी गति मन्द होती थी।[२९] निकट पहुँचकर वे गुरु को प्रणाम करते थे।[३०] दोनों ही एक दूसरे से उचित रीति से स्वास्थ्य के विषय में पूछते थे। गुरुजन शिष्यों को बैठने के लिये काष्ठ का आसन भी प्रदान करते थे।[३१] शिष्य, गुरु से अपना अभिप्राय सदा ही[३२] हाथ जोड़कर (कृत्वांजलि), लज्जायुक्त (ह्रिया) विनीत भाव से (अवांगमुख) व्यक्त करते थे। विद्याध्ययन समाप्त करके शिष्य अपने अपने अभिलषित कार्यों में सफलता प्राप्त कर गुरु दर्शन के लिये जाते थे।[३३] मस्तक झुकाकर गुरुओं को प्रणाम करने (स मूर्ध्ना गुरवे प्रणेमे)[३४] की प्राचीन परम्परा भी प्रचलित थी।

शिक्षा शुल्क और गुरु दक्षिणा—गुरु की स्मृति में गुरु के नाम से नगर भी निर्मित करवाये जाते थे। इसी गुरु-दक्षिणा के रूप में ही इक्ष्वाकुवंशी राजकुमारों ने अपने गुरु 'कपिल मुनि' के आश्रम पर उनके शरीरान्त के पश्चात् कपिलवस्तु नामक नगर का निर्माण करवाया था।[३५] शिष्य, गुरुओं के गोत्र से अपना गोत्र मानना भी प्रारम्भ कर देते थे। इक्ष्वाकु वंशी राजकुमार इसी प्रकार 'गौतम गोत्र' के कहलाये थे।[३६] शिक्षा-शुल्क गुरु-दक्षिणा के रूप में देने की प्रथा प्रचलित थी।[३७] नितान्त निर्धन किन्तु विद्याव्यसनी छात्र आश्रम में गुरु की सेवा श्रूषा करते थे। वे यज्ञ आदि के लिये लकड़ियां लाते थे। उन्हें 'समिधाहारक'[३८] कहा जाता था।

स्त्री शिक्षा—सौन्दरनन्द तथा बुद्ध चरित में स्त्री-शिक्षा का मूल रूप में उल्लेख नहीं मिलता, तथापि कवि के संकेतों और उपमाओं से इस विषय पर अवश्य ही प्रकाश पड़ता है। राजमहलों में राजकुमारों के मनोरंजन के लिये स्पष्ट, अर्थपूर्ण और मधुर गीतों को अभिनयात्मक ढंग से (स्वर और ताल के साथ) गाने वाली[३९] तथा वीणा[४०] और पणव[४१] वाद्य यन्त्रों में दक्ष गायिकायें नियुक्त होती थीं। चित्रांकन की शिक्षा भी वे ग्रहण करती थीं।[४२] धर्म का अध्ययन करने वाली स्त्रियों को "माणविका"[४३] कहा जाता था।

अध्ययन के विषय

साहित्य अपने युग का प्रतिबिम्ब होता है और यही कारण है, कि युग विशेष की साहित्यिक प्रवृत्तियां, विचारधारायें तथा विषयादि का उल्लेख तत्कालीन साहित्य में अवश्य ही विद्यमान रहता है। अश्वघोष की कृतियों से भी कुषाण युग के अध्ययन के विषयों-वेद-वेदांग, शल्य, चिकित्सा, आयुर्वेद और औद्योगिक शिक्षा पर विशेष प्रकाश पड़ता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वेद वेदांग शिक्षा—यद्यपि अश्वघोष का युग बौद्ध धर्म के पुनरुद्धार का युग था तथापि वेद-वेदांगों[४४] और उपपुराणों[४५] की शिक्षा का लोप नहीं हुआ था। इन विषयों के साथ साथ आगम (विविधागमा)[४६] और ज्योतिष (स्वप्नविद्या) की शिक्षा[४७] भी दी जाती थी। वेदों के अध्ययन अध्यापन[४८] पर उस समय भी बल दिया जाता था। उनका निरन्तर अध्ययन[४९] किया जाता था। नष्ट हुए वेदों को पुनः व्यक्त करने वाले सारस्वत तथा उन्हें विभागों में विभक्त करने वाले व्यास के कार्यों से कवि भलीभाँति अवगत था।[५०] काव्य[५१] की भी शिक्षा दी जाती थी। जिसके फलस्वरूप ही कवि ने सरल शैली में और छोटे छोटे समासों में उपमाओं के द्वारा कठिन से कठिन विषय को भी सरलता से समझा दिया है। "दीपक" और "यमक" अलंकारों का प्रायः प्रयोग हुआ है।[५२] श्लोक, उपजाति, वंशस्थ, शिखरणी जैसे विविध छंदों की रचना करके कवि ने छन्द शास्त्र का महत्व स्पष्ट कर दिया है। "कहा जाता कि इसी का उपयोग करके शिला लेखक हरिषेण या महाकवि कलिदास ने या दोनों ने अलग 'मन्दाक्रान्ता' का आविष्कार किया होगा"। सप्तम सर्ग का अन्तिम पद्य ही "मन्दाक्रांता" का पूर्व रुप है।[५३]

ज्योतिष भी शिक्षा का प्रचलित विषय था। लोगों का उसमें अटूट विश्वास था। ज्योतिष शास्त्र की शिक्षा द्विज लोगों में ही प्रचलित थी। इस शास्त्र के पारंगत विद्वानों को ज्योतिष-शास्त्री द्विज (स्वप्नविदोद्विजाः)[५४] कहा जाता था। स्वप्न विद्या विशारद स्वप्न को सुनकर ही उसका फल बतला देते थे।[५५]

शास्त्र और विद्यायें—शास्त्रों का भी अध्ययन होता था। शास्त्र में पारंगत ज्ञानी को "कृतशास्त्र"[५६] कहा जाता था। राजशास्त्र[५७], नीतिशास्त्र[५८], योगाचार[५९], के साथ-साथ राजकुमारों को अस्त्र-शस्त्र की शिक्षा भी दी जाती थी। इस विद्या में उत्तीर्ण व्यक्ति को "कृतास्त्र"[६०] कहा जाता था। "विनय"[६१] की भी शिक्षा दी जाती थी। इनके अतिरिक्त और भी अनेक विद्यायें थीं जिनके अर्जन के लिये विषय-वासनाओं को तिलांजलि देना आवश्यक था।[६२]

धातु शिल्प प्रशिक्षण

अश्वघोष के काव्यों से ज्ञात होता है कि, उस समय धातुओं के कार्यों का प्रशिक्षण भी दिया जाता था। इनमें सोने और लोहे की विभिन्न वस्तुएँ तैयार करने की शिक्षा दी जाती थी। लोहे के स्वेच्छिक उपकरण तैयार करने के लिये लोहे को पानी की भाँति पिघलाया जाता था, जिसका रंग बिलकुल आग के

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

समान होता था।[६३] तत्पश्चात् कुत्ते और कौवों की मूर्तियाँ,[६४] घरेलू उपकरण युद्ध के लिये उपयोगी अस्त्र-शस्त्र[६५] तथा विशाल लौह स्तम्भ (स्तम्भमायसम्)[६६] भी बनाये जाते थे।

इसी प्रकार स्वर्ण औद्योगिक प्रशिक्षण भी दिया जाता था। सोने को खानों से निकालकर धोया जाता था और छोटे बड़े कणों को अलग किया जाता था।[६७] तत्पश्चात् शोधन के लिए अंगीठी (उल्कामुख) पर तपाया जाता था। अंगीठी को धौंककर अपेक्षित गर्मी दी जाती थी। अग्नि को कम-ज्यादा करने के लिये पानी का छिड़काव किया जाता था और समय पर उसे शान्त छोड़ दिया जाता था,[६८] क्योंकि असमय में अंगीठी धौंकने से सोना जल जाता था (दहेत्सुवर्णं हि धमन्नकाले) असमय में जल डाल देने से वह ठंडा हो जाता था (जले क्षिपन्संशमयेदकाले) और असमय में अंगीठी से निकाल लेने पर कच्चा रह जाता था (न चापि सम्यक् परिपाकमेनं नयेदकाले समुपेक्षमाणः)।[६९] इस प्रकार कच्चे सोने को पकाने में बड़ी सावधानी और सतर्कता की आवश्यकता थी। निश्चयतः इस सम्पूर्ण प्रक्रिया का प्रशिक्षण अवश्य ही दिया जाता होगा। प्रशिक्षित होकर लोग जीवनोपयोनी आभूषणों के अतिरिक्त विशाल स्वर्ण स्तम्भ (हैमो महास्तम्भ)[७०] भी बनाते थे।

हस्त कला की शिक्षा—अश्वघोष के ग्रन्थों से तत्कालीन अन्य कलाओं की भी महत्ता सिद्ध होती है। कला के शिक्षण के लिये ही गन्धार और मथुरा की कला संस्थायें कुषाण युग में प्रसिद्ध रहीं। जहाँ सबसे पहले भगवान बुद्ध की प्रतिमा का सृजन हुआ। कला की श्रेष्ठता से कभी कभी चित्रकार स्वनिर्मित नारी चित्र पर ही मुग्ध हो जाते थे।[७१] पुरुषों के अतिरिक्त स्त्रियाँ भी चित्रकला सीखती थीं। सुन्दरी ने अपने पति नन्द की मूछों के अनुरूप ही अपने मुख पर मूछों का चित्रांकन किया था।[७२] चित्रकार चित्रांकन में सुनहले[७३], पीले (पीत)[७४] लाल (पद्मराग)[७५] तथा नीले[७६] रंगों का प्रयोग भी करते थे।

चन्दन और सोने की औषधियों युक्त मूर्तियाँ तथा रत्नहार[७७] भी बनाए जाते थे। मृगों (मृगप्रयुक्तान्) या बैलों से जुते हुए छोटे छोटे रथ, स्वर्णमय हाथी, घोड़े और मृग (हिरण्मयान् हस्तिमृगाश्वकांश्च) तथा चांदी और सोने की रंग-विरंगी पुतलियाँ (पुत्रीश्च चामीकररुप्यचित्राः)[७८] भी बनायी जाती थीं।

कपिलवस्तु नगर के निर्माण के वर्णन के पढ़ने से उस युग की भवन निर्माण कला की विशिष्ठताओं का परिचय मिल जाता है। नगर निर्माण और भवन

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

निर्माण कला में पारंगत प्रशिक्षित विद्वानों को (वास्तुज्ञाः)[७९] कहा जाता था। निश्चय ही इस कला की भी शिक्षा प्रचलित रही होगी।

संगीत वाद्य और नृत्य की शिक्षा—आचार्य अश्वघोष ने राजकुमार सिद्धार्थ के मनोरंजन महल का वर्णन करके संगीत आदि पर विशेष प्रकाश डाला है।[८०] राजकुमार के आमोद-प्रमोद के लिये अभिनयात्मक संगीत में प्रवीण[८१] और सुयोग्य (योग्याः), संगीतवाद्य और नृत्यादि कलाओं में निपुण (कलास्वभिज्ञा) और सम्मानित श्रेष्ठ वेश्याओं (वारमुख्याः) को नियुक्त किया गया था[८२]। उपर्युक्त कलाओं में योग्यता, निपुणता, स्वर और लय के लिये उनके प्रशिक्षण का भी प्रबन्ध रहा होगा।

विद्याओं को प्राप्त करने के लिये विषयों (कामेच्छाओं) से दूर रहना आवश्यक था।[८३] शिक्षित व्यक्ति शिष्ट[८४] कहलाता था। शिष्टता के लिये गुण अनिवार्य थे, जिसकी संवृद्धि के लिये शिक्षा ही माध्यम थी।[८५]

साहित्य और साहित्यकार

अश्वघोष की कृतियों से पूर्व से प्रचलित साहित्य और साहित्यकारों का भी ज्ञान प्राप्त होता है। वेदों[८६], वेदाँगों[८७] और उपागों (वेदान्सांगोंपांगेन)[८८] और विविध शास्त्रों (विविधागम)[८९] का अध्ययन-अध्यापन होता था। सौन्दरनन्द में बताया गया है कि सरस्वती पुत्र सारस्वत ने नष्ट हुए वेदों को कहा और व्यास ने उन्हें कई भागों में विभक्त किया।[९०] वज्रसूचीकार चारों वेदों[९१]—ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्व-वेद से परिचित था।[९२] यद्यपि कवि की कृतियों में 'रामायण' का नामोल्लेख नहीं हुआ है तथापि आदि कवि वाल्मीकि[९३] का उल्लेख मिलता है, जिन्होंने सबसे पहले पद्य रचना की (वाल्मीकि रादौच ससर्ज पद्यं)[९४]। महाभारत (भारत)[९५] के अनेक उदाहरण वज्र सूची में मिलते हैं। बौद्धाचार्य के समय तक एक से अधिक स्मृतियों की रचना हो चुकी थी। तभी तो कवि ने उन्हें बहुबचन में (स्मृतयः)[९६] लिखा है। व्याकरण और ज्योतिष, वेदांग तथा सांख्य, मीमांसा और वैशेषिक दर्शन[९७] प्रमुख रूप से विद्वज्जगत मे प्रचलित थे। शुक्र और वृहस्पति के राजशास्त्रों की रचना हो चुकी थी।[९८] चिकित्सा सम्बन्धी साहित्य में आत्रेय का चिकित्सा शास्त्र[९९] प्रसिद्ध था। बौद्ध साहित्य में मंजुघोष के वांङ्गमय का उल्लेख अश्वघोष ने किया है[१००]

उपर्युक्त विवरण से अश्वघोष कालीन शिक्षा-प्रणाली, शिक्षण केन्द्र, पाठ्य विषय एवं साहित्य पर महत्वपूर्ण प्रकाश पड़ता है।

————

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

चिकित्सा और आयुर्वेद

आयुर्वेद का महत्व उसके नाम (वेद) से ही सिद्ध है। प्रत्येक मनुष्य सुखी और स्वस्थ रहना चाहता है परन्तु वह किसी न किसी शारीरिक अथवा मानसिक क्लेश से व्यथित रहता है, उसी व्यथा से मुक्ति पाने के लिये चिकित्सा आयुर्वेद की आवश्यकता हुई।

प्राचीनता—अश्वघोष ने चिकित्सा शास्त्र की प्राचीनता और इतिहास को दिखाते हुए कहा है, कि जिस चिकित्सा शास्त्र को अत्रि मुनि नहीं बना सके उसे 'आत्रेय ऋषि' ने बनाया।[१०१] आयुर्वेदाचार्य 'चरक' अश्वघोष के युग के प्रतिनिधि चिकित्सक थे।[१०२] आत्रेय के रूप में कवि ने चरक का ही वर्णन किया है जिनका 'चरक संहिता' ग्रंथ आज भी भारतीय औषधियों का आधार है। डॉ० बी० एन० पुरी का भी यही मत है कि परम्परायें चरक को कनिष्क का समकालीन बताती हैं। सुश्रुत बाद में उनके अनुगामी हुए।[१०३]

रोगोत्पत्ति—अश्वघोष के अनुसार रोगोत्पत्ति का कारण भोजन का आधिक्य है, जिससे प्राण-वायु तथा अपान-वायु में रुकावट पड़ती है, आलस्य और निद्रा की वृद्धि तथा पराक्रम का ह्रास होता है।[१०४] जैसे अधिक भोजन अनर्थ का मूल है, उसी प्रकार अत्यल्प भोजन भी शक्ति का विनाशक है।[१०५] वायु, पित्त और कफ त्रिदोषों में से किसी भी दोष का प्रकोप रोगोत्पादक है।[१०६] त्रिधातु प्रकोप से ही प्राणी वृद्ध होता है (धातुप्रकोपप्रभवः प्रवृद्धः) तथा रोगों और अनर्थों का उदय होता है (रोगाभिधानः सुमहाननर्थः)।[१०७]

रोग—रोग[१०८] दो प्रकार के होते हैं—शारीरिक और मानसिक।[१०९] कुष्ठ[११०] और पित्त ज्वर (पित्तदाह)[१११] जैसे कायिक रोगों का उल्लेख कवि ने किया है। 'मानसिक व्याधि'[११२] का मूल अनुराग है।[११३] फोड़े (व्रण)[११४] और घावों[११५] से भी लोग पीड़ित रहते थे। त्रिधातु रोग में पेट फूल जाता था (स्थूलोदरः), साँस लेने से भी शरीर कांपने लगता था। (श्वासचलच्छरीरः) कंधे और बाहें ढीली हो जाती थीं (त्रस्तांसबाहुः), शरीर दुर्बल और पीला (कृशपाण्डुगात्रः) हो जाता था।[११६] रोग के वशीभूत होकर शक्ति शाली व्यक्ति भी शक्तिहीन हो जाता था (शक्तोऽपि ये नैष कृतोऽस्वतंत्रः)।[११७] रोग दोष सामान्य माना जाता था (साधारण एष दोषः) जिससे सामान्यतः लोग दुःखी होते थे (रोगैः परिपीड्यमानः)।[११८]

निदान—रोगों-कायिक और मानसिक, के अनुकूल ही उनका उपचार भी किया जाता था। कायिक रोग को दूर करने के लिये शीघ्र ही वैद्य से उसे

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

बतलाना आवश्यक था, क्योंकि रोग को छिपाने से रोगी विपत्ति में पड़ जाता था।[११९] उपचार शल्य[१२०] अथवा चिकित्सा[१२१] द्वारा किया जाता था। मानसिक व्याधियाँ दार्शनिकों के उपदेशों से ही दूर होती थीं। स्त्री अनुराग[१२२] में बद्ध और व्यथित नन्द को तथागत ने उपदेशामृत से ही स्वस्थ किया था।[१२३] योगाचार भी मानसिक विकारों के लिये उपादेय अभ्यास था।[१२४] जागरण के लिये जल से मुख को धोना, चारों ओर दृष्टिपात करना और ताराओं की ओर देखना[१२५] जैसे अभ्यास भी प्रचलित थे।

पित्त ज्वर में शीतोपचार हानिकारक था।[१२६] कड़ुवी होने के कारण कभी कभी मरणासन्न रोगी भी दवाओं को पीने के लिये वैद्य का कल्याणकारी परामर्श नहीं मानता था।[१२७] ऐसी औषधियों में शहद मिलाकर उन्हें पीने योग्य (पातुं तिक्तमिवौषधंमधुयुतं)[१२८] बनाया जाता था। रोगी के लाभ के लिये उसे बलपूर्वक भी दवायें पिलायी जाती थीं।[१२९] विष[१३०] को शान्त करने के लिये 'महौषधि'[१३१] का प्रयोग किया जाता था।

शल्य चिकित्सा भी उन्नति पर थी। तीरों से घायल[१३२] व्यक्ति के लिये शल्य चिकित्सा ही शरण थी। शरीर में विधे हुए बाण को संडसी (संदश) से बाहर निकालकर[१३३] घाव (वृण) को मरहम (आलेपन) द्वारा ठीक किया जाता था।[१३४]

औषधियों के अतिरिक्त रोग निवारण के लिये लोग मंत्रों का भी प्रयोग करते थे। सर्प के विष को शान्त करने के लिये मंत्र ही साधन थे।[१३५]

रोगी और वैद्य के मध्य सम्बन्ध—वैद्य, रोगी के शुभचिन्तक होते थे। रोगी से रोग निकालने के लिये कभी कभी उसे प्रारम्भ में अधिक कष्ट भी दिया जाता था।[१३६] वैद्य पहले रोगी को देखता था, उसके रोगोत्पत्ति के कारणों को खोजता था, तत्पश्चात् उसकी दवा प्रारम्भ करता था। जिससे रोगी को शीघ्र ही लाभ होता था।[१३७] रोग से मुक्त होकर रोगी वैद्य के प्रति कृतज्ञ होता था (मुक्तो रोगादरोगो भिषजं कृतज्ञः)।[१३८]

चिकित्सक-संज्ञाए और कोटियां—चैत्सिक और दैहिक दो प्रकार की वेदनाओं को दूर करने के लिये शास्त्र और उपचार जानने वाले दो प्रकार के चिकित्सक भी होते थे।[१३९] चिकित्सकों को वैद्य[१४०], भिषक[१४१] और महाभिषक[१४२] कहते थे। त्राता[१४३] उनकी जन कल्याण सूचक संज्ञा थी। भिषक और महाभिषक चिकित्सकों की कोटियां उस युग की चिकित्सा और आयुर्वेद की उन्नतावस्था की द्योतक हैं।

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय सात के सन्दर्भ

१. विन्टरनित्ज, हि० इ० लि० जि० २ पृ० २५७ पा० टि० १
२. वही, जि० २ पृ० २७०
३. वही, जि० २ पृ० २५७ पा० टि० १
४. महाभाष्य १।१।१ पृ०१९ (रघुनाथ काशीनाथ शास्त्री, बम्बई, १९४८)
५. सौ० १।१८
६. बु० च० ७।५४
७. वही, १२।१
८. वही, १२।१०
९. वही, सर्ग ७ (तपोवन प्रवेश)
१०. वही, १२।८४
११. वही, १२।८९
१२. वही, १२।४२ : इत्यर्थं ब्राह्मणा लोके परमब्रह्मवादिनः ।
ब्रह्मचर्यं चरन्तीह ब्राह्मणान्वासयन्ति च ।।
१३. महावस्तु जि० २।४३४।९-११
१४. ललित० १२३।१६
१५. वही, १२४।१०
१६. बु० च० १२।१०
१७. ललित० १२३।१५-१६
१८. वही, १२५।१७
१९. वही, १२५।१८
२०. साहनी, कैं० म्यू० आ० सा० पृ० १९३-९४
टिप्पणी :—स्वर्ण और मणि रत्नों से मण्डित लिपि फलक सम्भवतः धनी वर्ग के छात्रों को ही उपलब्ध थे। निर्धन छात्र लकड़ी की साधारण पट्टिका पर मिट्टी से या भूमि पर बिछी हुई बारीक मिट्टी के समतल धरातल पर उँगली से लिखते रहें होंगे ।
२१. सौ० १।५
२२. वही, १।१८

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२३. वही, १।२४

२४. महावस्तु जि० ३।३८२।१६-१७

२५. सौ० १।२२ तेषां मुनिरुपाध्यायो गौतमः कपिलोऽभवत् ।

२६. वही, ११।४

२७. वही, १२।११

२८. वही, १।२८

२९. वही, १२।११

३०. वही, १२।११

३१. बु० च० १२।३ : तावुभौ न्यायतः पृष्ट्वा धातुसाम्यं परस्परम् ।
दारव्योर्मेध्ययोर्वृष्योः शुचौ देशे निषेदतुः ।।

३२. सौ० १२।११

३३. वही, १८।१

३४. वही, १८।५

३५. वही, १।५७ : कपिलस्य च तस्यर्षेस्तस्मिन्नाश्रमवास्तुनि ।
यस्मात्त तत्पुरं चक्रुस्तस्मात्कपिलवास्तु तत् ।।

३६. वही, १।२२ : तेषां मुनिरुपाध्यायो गौतमः कपिलोऽभवत् ।
गुरुगोत्रादतः कौत्सास्ते भवन्ति स्म गौतमाः ।।

३७. दिव्या० १५३।६

३८. वही, ४२९।१३-१४

३९. बु० च० ४।३७

४०. वही, ५।५५; सौ० ६।३२

४१. बु० च० ५।५६

४२. सौ० ४।१४

४३. दिव्या० ४२२।६

४४. सौ० १।४४

४५. ललित० १५६।१९

४६. सौ० ३।२

४७. वही, २।५१

४८. वही, २।१२

४९. वही. २।४४

५०. बु० च० १।४२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

५१. सौ० १।४

५२. सौ० ७।५२ : तस्माद्भिक्षार्थं मम गुरुरितो यावदेव प्रयात,
स्त्यक्त्वा काषायं गृहमहमितस्तावदेव प्रयास्ये ।
पूज्यं लिंगं हि स्खलितमनसो बिभ्रतः क्लिष्टबुद्धे,
र्नामुत्रार्थः स्यादुपहतमतेर्नाप्ययं जीवलोकः ।।

५३. सौन्दरनन्द की भूमिका पृ० ११-१२

५४. वही, २।५१

५५. वही, २।५१

५६. वही, २।८

५७. बु० च० १।४१

५८. सौ० २।२८

५९. वही, १४।१९-५२

६०. वही, २।८

६१. वही, १।१३

६२. वही, २।२५ : बह्वीरध्यगमद्विद्या विषयेष्वकुतूहलः ।

६३. बु० च० १४।१२

६४. वही, १४।१४

६५. वही, सर्ग ५

६६. वही, १४।१२

६७. सौ० १५।६६ :

सुवर्णहेतोरपि पांसुधावको, विहाय पांसून्बृहतो यथादितः ।
जहाति सूक्ष्मानपि तद्विशुद्धये विशोध्य हेमावयवान्नियच्छति ।।

६८. वही, १६।६५

६९. वही, १६।६६

७०. वही, १८।२०

७१. वही, १५।३९ : स्वयमेव यथालिख्य रज्येच्चित्रकरः स्त्रियः ।

७२. वही, ४।१४ : भर्तुस्ततःश्मश्रु निरीक्षमाणा विशेषकं सापि चकार तादृक् ।

७३. बु० च० २३।२

७४. वही, २३।३

७५. सौ० ६।२६

७६. बु० च० १२।११०

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

७७. वही, २।२१ : ततोमहार्हाणि च चन्दनानि ।
रत्नावलीश्चौषधिभिः सगर्भाः ।।
७८. वही, २।२१-२२
७९. सौ० १।४१
८०. बु० च० ४।१-५४
८१. वही, ४।३७
८२. वही, ३।५२
८३. सौ० २।२५
८४. वही, २।१४
८५. वही, २।२६
८६. बु० च० १।४२, २।३७; वज्र० पृ० १, २
८७. सौ० १।४४
८८. वज्र० पृ० ३
८९. सौ० ३।२
९०. बु०च० १।४२ : सारस्वतश्चापि जगाद नष्टं, वेदं पुनर्यं दद्दशुर्न पूर्वे ।
व्यासस्तथैनं बहुधा चकार न यं वसिष्ठः कृतवानशक्तिः ।।
सौ० ७।२९ : महात्मा द्वैपायनो वेद विभाग कर्ता ।
९१. वज्र० पृ० ३
९२. वही, पृ० ८
९३. सौ० १।२६
९४. बु० च० १।४३
९५. वज्र० पृ० २
९६. वही, पृ० १
९७. वही, पृ० ७
९८. बु० च० १।४१
९९. बु० च० १।४३
१००. वज्र० पृ० १
१०१. बु०च०१।४३ : चिकित्सतं यच्च चकार नात्रिः पश्चात्तदात्रेय ऋषिर्जगाद ।
१०२. विन्टरनित्ज, हि० इ० लि० जि०२ पृ० २५७ पा०टि०, १
१०३. डॉ०पुरी, इ०अ०कु०पृ० १३१
१०४. सौ० १४।२ : प्राणापानौ निगृह्णाति ग्लानिनिद्रे प्रयच्छति ।
कृतो ह्यत्यर्थमाहारो विहन्ति च पराक्रमम् ।।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१०५. वही, १४।३ : यथा चात्यर्थमाहारः कृतोऽनर्थाय कल्पते ।
उपयुक्तस्तथात्यल्पो न सामर्थ्याय कल्पते ।।

१०६. वही, १६।६९

१०७. बु०च० ३।४२

१०८. सौ० १५।४५

१०९. वही, ८।३

११०. वही, ९।४४

१११. बु०च० ११।४०

११२. सौ० १५।४६

११३. वही, सर्ग ४ से ९ तक

११४. वही, १४।११

११५. वही, १८।७

११६. बु०च० ३।४१

११७. वही, ३।४२, ४३

११८. वही, ३।४४, ४५, ४६

११९. सौ० ८।४ : तदियं यदि कायिकी रुजा भिषजे तूर्णमनूनमुच्यतां ।।
विनिगुह्य हि रोगमातुरो नचिरात्तीव्रमनर्थमृच्छति ।।

१२०. वही, १८।७

१२१. वही, १३।७, १४।११

१२२. वही, ४।४२, ५।१४

१२३. वही, सर्ग ८ से १८ तक

१२४. वही, १४।१९-५२

१२५. वही, १४।२४ : प्रक्लेद्यमद्भिर्वदनं विलोक्याः सर्वतो दिशः ।
चार्या दृष्टिश्च तारासु जिजागरिषुणा सदा ।।

१२६. बु०च० ११।४०

१२७. सौ० ९।२

१२८. वही, १८।६३

१२९. वही, ५।४८

१३०. वही, ६।२४, १२।२५, १३।३५, १६।९, ७४

१३१. वही, १८।९

१३२. वही, ६।२४

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१३३. वही, १८।७
१३४. वही, १४।११
१३५. वही, ९।१३, १६।३५
१३६. वही, १०।४३
१३७. वही, १६।४०-४१
१३८. वही, १७।३३
१३९. वही, ८।३ : द्विविधा समुदेति वेदना नियतं चेतसि देह एव च ।
श्रुतविध्युपचारकोविदा द्विविधा एव तयोश्चिकित्सकाः ।।
१४०. वही, ५।४८
१४१. वही, ८।५
१४२. वही, १०।५५
१४३. वही, १७।७३

——

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय ८

कला

कला मनुष्य जीवन का एक अभिन्न अंग है। कला विहीन पुरुष को भर्तृहरि ने बिना सींग और पूँछ का पशु कहा है।[1] स्थूल जीवन में संस्कृति की अभिव्यक्ति कला को जन्म देती है। कला का सम्बन्ध जीवन के मूर्त्त रूप से है। संस्कृति को मन और प्राण कहा जाय तो कला उसका शरीर है। मनुष्य के मन की स्फूर्ति और तदनुसार सुन्दर रूपों की सृजनशक्ति, कला की उपासना पर निर्भर है। कला कुछ व्यक्तियों के विलास-साधन के लिये नहीं होती। सांची और भरहुत के महान स्तूपों, अजन्ता के भित्ति चित्रों और वेरुल के एकाश्मक कैलास मंदिर की कला लोक के शिक्षण, आनन्द और अध्यात्म साधना के उद्देश्य को आगे बढ़ाती है।[2] इस प्रकार कला का क्षेत्र बहुत व्यापक है। बौद्धाचार्य अश्वघोष के ग्रन्थों में कला सम्बन्धी जो सूचनाएँ मिलती हैं उनका उल्लेख यहाँ किया गया है।

चित्रांकन—मनुष्य अपनी इच्छाओं को बिना शब्दावली के दूसरों से व्यक्त करने के लिये चित्रों का प्रयोग करता है। चित्र से चित्रकार और दर्शक दोनों को आनन्द मिलता था।[3] सुन्दरी ने अपने पति नन्द की मूछों के अनुरूप ही अपने मुख पर भी मूछों का चित्रण किया था।[4] चित्रांकन तूलिका द्वारा किया जाता था।[5] कभी कभी तो चित्रकार अपने ही बनाये चित्रों पर मुग्ध हो जाते थे।[6] निश्चय ही यह चित्रकला की उत्कृष्ठता का ही द्योतक है।[7]

प्रतिमाएँ—ललित विस्तर से पता चलता है कि शिव, स्कन्द, नारायण, कुवेर, चन्द्र, सूर्य, वैष्णव, शुक्र, ब्रह्मा, लोकपाल आदि देवताओं[8] तथा बुद्ध[9] की प्रतिमाएँ बनती थीं। ये मूर्तियाँ 'देवायतन'[10] और 'देवकोष्ठ'[11] में प्रतिष्ठापित की जाती थीं। कुषाण सम्राट् कनिष्क का युग बुद्ध प्रतिमा के निर्माण के लिये विशेष उल्लेखनीय है। गन्धार इसका प्रधान केन्द्र था। प्राचीन गन्धार क्षेत्र में बुद्ध मूर्तियों के निर्माण होने के कारण वहाँ की इस कला को गान्धार कला कहा गया।[12]

डॉ० अग्रवाल इस मत से असहमति प्रकट करते हुए कहते हैं "कई पश्चिमी विद्वान बुद्ध-मूर्ति के प्रथम निर्माण का श्रेय गन्धार कला को देते रहे हैं। किन्तु

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

इसके पक्ष में कोई भी पुष्ट प्रमाण अब तक नहीं मिला।........... बुद्ध मूर्ति की रचना सर्वप्रथम वहीं हुई जहाँ चक्रवर्ती और योगी इन दो आदर्शों का मेल बुद्ध में हुआ और इनकी प्रतिमाओं के लक्षण बुद्ध मूर्ति में अपनाये गये— पद्मासन, ध्यानमुद्रा, नासाग्र दृष्टि, सिंहासन, चामरग्राही, दिव्य पुष्पवृष्टि, ऊर्णा, उष्णीश आदि। इन लक्षणों की कोई सार्थकता यूनानी और ईरानी धर्म में न थी। गन्धार में बुद्ध मूर्ति का जन्म सर्वथा असंभाव्य था और इस पक्ष की सब युक्तियाँ आधार रहित हैं। मथुरा कला का यक्ष बोधिसत्व सूत्र स्वयं सिद्ध है जिसकी तुलना में गन्धार कला के अस्तव्यस्त तिथि क्रम में अन्य कुछ नहीं है।"[१३] मध्यदेश की कला से ग्रहण करने के साथ साथ गन्धार के शिल्पियों ने ईरानी और यूनानी कला के अनेक प्रभाव और अलंकरण स्वीकार किये।[१४] डॉ० अग्रवाल ने सहरी बहलोल में प्राप्त एक ८ फिट ८ इंच ऊँची बुद्ध-मूर्ति का उल्लेख किया है, जो उत्तम रूप से सुरक्षित और श्रेष्ठ कला शैली का नमूना है।[१५] 'शाह-जी की ढेरी' नामक स्थान के स्तूपावशेष में एक ताम्र मंजूषा के ढक्कन पर छायामण्डल से युक्त पद्मासीन बुद्ध की मूर्ति है, जिसमें दाहिनी ओर इन्द्र और बाईं ओर ब्रह्मा की मूर्ति है। निचले भाग में अभय मुद्रा में आसीन बुद्ध के दाहिनी ओर सूर्य और बाईं ओर चन्द्र देवता अंकित हैं। सूर्य के बराबर कनिष्क की मूर्ति है।[१६] कनिष्क के स्वर्ण तथा ताम्र सिक्कों पर भी बुद्ध की मूर्ति का अंकन है। दूसरे स्वर्ण सिक्के पर कनिष्क की मूर्ति तथा खड़े हुए बुद्ध की मूर्ति है।[१७]

बुद्ध-मूर्ति के अतिरिक्त बोधिसत्व की मूर्तियाँ भी कुषाण युग में बनती थीं। मार्शल महोदय ने १६ फीट ऊँची बोधिसत्व की प्रतिमा का उल्लेख किया है, जो धोती, शाल, कंकण पहने हुए है, जिसका बायाँ हाथ कमर पर तथा दायाँ हाथ सीने के बराबर उठा हुआ ज्ञान मुद्रा में है।[१८] डॉ० पुरी ने बोधिसत्व सिद्धार्थ की खड़े हुए तथा ध्यानावस्था की मूर्तियों का उल्लेख किया है।[१९] गन्धार की मूर्तियों पर यूनानी प्रभाव होने के कारण गान्धार कला को 'ग्रीको बौद्ध' और अब 'रोमनों बौद्ध' कला कहा जाता है।

बुद्ध और बोधिसत्वों की मूर्तियों के अतिरिक्त गन्धार में पञ्चिक और हारीती की प्रथक प्रथक अथवा संयुक्त भी मूर्तियाँ बनीं। डॉ० अग्रवाल का मत है, कि जिसे मध्य देश में कुबेर अथवा वैष्णव कहते थे, वही देवता गन्धार में पञ्चिक नाम से विख्यात था।.........गन्धार कला में हारीती, सौभाग्य पुत्र-पौत्र, और धनधान्य की अधिष्ठात्री देवी थी। उसकी गोद और कन्धों

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)
पर बालक बैठाये गये हैं। वह गन्धार कला में मातृ देवी के रूप में पूजी जाती थी। हारीती की कुछ चतुर्भुजी मूर्तियाँ मिली हैं जो एक हाथ में कमण्डलु और दूसरे हाथ में त्रिभुज लिये हैं। इनसे सूचित होता है कि दुर्गा और हारीती इन दो देवियों का परस्पर समन्वय किया गया। हारीती बौद्ध देवी थीं।[२०] इन मूर्तियों के अतिरिक्त डॉ० अग्रवाल ने कुषाण कालीन पान गोष्ठियों और वंशीवादन से सम्बन्धित अनेक मूर्तियों का वर्णन किया है।[२१]

कुषाण युग का दूसरा कला केन्द्र मथुरा था। जहाँ गन्धार से कहीं सुन्दर बुद्ध-प्रतिमाओं का निर्माण हुआ। सारनाथ की आदमकद बोधिसत्व की मूर्ति, जो कनिष्क के राज्यकाल के तीसरे वर्ष स्थापित की गई, कौशाम्बी से प्राप्त बोधिसत्व की मूर्ति, जो कनिष्क के राज्यकाल के दूसरे वर्ष स्थापित की गई, मथुरा कला केन्द्र की ही बनी हुई थी। डॉ० अग्रवाल ने कुषाण काल की बुद्ध और बोधिसत्व की मूर्तियों का विस्तृत विवेचन मथुरा कैटालॉग[२२] में किया है।

कुषाण युग में जैन तीर्थंकरों की मूर्तियां भी बनाई गईं। कंकालीटीले के दूसरे स्तूप से प्राप्त तीर्थंकर-मूर्तियों की संख्या अधिक हैं, जिनकी चौकियों पर कुषाण सम्वत् ५ से ९५ तक के लेख हैं। वे प्रतिमाएँ ४ प्रकार की हैं— (१) खड़ी हुई या कार्योत्सर्ग मुद्रा में—जिनमें दिगम्बरत्व लक्षण स्पष्ट है, (२) पद्मासन में आसीन मूर्तियां, (३) प्रतिमा सर्वतोभद्रिका या खड़ी हुई मुद्रा में चौमुखी मूर्तियां। ये भी नग्न हैं। (४) सर्वतो भद्रिका प्रतिमा, बैठी हुई मुद्रा में।[२३]

ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में लिखे गये बौद्ध साहित्य से पता चलता है कि शिव, स्कन्द, नारायण, कुबेर, चन्द्र सूर्य, वैश्रवण, शक्र, ब्रह्मा, लोकपाल आदि ब्राह्मण धर्म सम्बन्धी देवताओं की मूर्तियां बनने लगीं थीं।[२४] अश्वघोष ने सूर्य (अर्क),[२५] वृषध्वज,[२६] शिव,[२७] प्रजापति कुबेर (वैश्रवण)[२८] विष्णु,[२९] कार्तिकेय (षणमुख)[३०] राम,[३१] कृष्ण (कंस विकर्षिण)[३२] और बलराम[३३] का उल्लेख किया है। मथुरा केन्द्र की कुषाण कालीन मूर्तियां भी इसी तथ्य की पुष्टि करती हैं। मथुरा संग्रहालय की विष्णु मूर्तियां नं० ८८३, ८९१, ९१९, ११६८, २००७ और २०५२ कुषाण काल की हैं।[३४] इस युग में शिव और पार्वती की मानवाकृति मूर्तियां मिलती हैं।[३५] चतुर्बाहु[३६] पंचानन[३७] तथा अर्द्धनारीश्वर[३८] भी शिव के रूप मिलते हैं। एक मूर्ति में शिव और पार्वती वृषभ सहित दिखाये गये हैं।[३९] डॉ० अग्रवाल का मत है कि नन्दी वृषकाय का प्रतीक था जो विश्व के सब पदार्थों में सर्वोपरि आनन्द को देने वाला

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

है ।[४०] कुषाण कालीन ब्रह्मा की एक मूर्ति भी मथुरा संग्रहालय में सुरक्षित है ।[४१] ऊपर सूर्य की मूर्ति का उल्लेख 'धातु मंजूषा' के साथ किया जा चुका है । इस युग में कुषाण सम्राट् की भांति सूर्यदेव भी सिर पर पगड़ी, शरीर पर कोट, कमर में पटका, टांगों में सलवार, और पैरों में मोटे जूते पहने हुए हैं ।[४२] डॉ० अग्रवाल का मत है कि कुषाण युग में कार्तिकेय की पूजा अत्यन्त लोकप्रिय थी । कार्तिकेय की बनाई गई अच्छी मूर्तियां मथुरा कला में मिली हैं ।[४३]

अश्वघोष ने शिवोपासना का उल्लेख किया है ।[४४] ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में लिखित संस्कृत बौद्ध साहित्य में यूप[४५] और शिवलिंग[४६] के निर्माण का वर्णन मिलता है ।[४७] यूप, गोशीर्ष चन्दन[४८] रत्न तथा स्वर्ण[४९] के बनाये जाते थे । महाराजाधिराज देवपुत्र वासिष्क के २४वें वर्ष के ईशापुर (मथुरा के पास) से प्राप्त अभिलेख में यूप-प्रतिष्ठापन का उल्लेख है ।[५०] डॉ० अग्रवाल ने इस युग के साधारण शिवलिंगों[५१] के साथ-साथ "एक मुखी"[५२] "द्वैमुखी"[५३] और "पंचमुखी"[५४] शिवलिंगों का भी वर्णन किया है ।

अश्वघोष ने नागों का बौद्ध धर्म से घनिष्ट सम्बन्ध बतलाया है । बुद्ध ने नागों को धर्म-देशना दी थी[५५] सिद्धार्थ के जन्म लेने पर बड़े बड़े नागों (महोरगाः) ने व्यजन डुलाये तथा मन्दार पुष्प बरसाये थे ।[५६] तथागत के महापरिनिर्वाण के समय नाग शोकाकुल हो गये थे ।[५७] महावंश से पता चलता है कि अशोक के समय में नाग लोगों ने बौद्धधर्म ग्रहण कर लिया था।[५८] नागों का समाज में इतना महत्व बढ़ गया था कि उनके नाम पर नगर-द्वारों के नाम रखे जाते थे ।[५९] नागों को विनाशकारी शक्ति माना जाता था ।[६०] नागों की मूर्तियां भी बनाई जाती थीं। कनिष्क के राज्यकाल के आठवें वर्ष की एक नाग मूर्ति मथुरा-संग्रहालय में है।[६१] कुषाण कालीन एक अभिलेख से 'स्वामी नाग' की मूर्ति का पता चलता है । जिसके लिये एक उद्यान तथा सरोवर अर्पित किया गया था ।[६२] प्रदेशीय संग्रहालय लखनऊ में कुषाण कालीन एक चौकोर शिला पट पर उत्कीर्णित अभिलेख में नागदेवता 'दधिकर्ण' का उल्लेख है।[६३] छड़गांव से एक विशाल नागमूर्ति मिली है । उसके दोनों पार्श्व में कुण्डल हैं और कटि प्रदेश में पतली करधनी है । यह मूर्ति बलशाली और बड़े दम-खम की है ।[६४] डॉ० अग्रवाल का मत है कि मथुरा में पूर्वकाल से संकर्षण या बलराम की पूजा प्रचलित थी और उन्हीं के साथ नागदेवता की मान्यता भी मिल गई ।[६५]

नागों के साथ यक्ष यक्षणियों की मूर्तियां भी बनती थीं ।[६६] अश्वघोष ने 'यक्षाधिप' का उल्लेख किया है ।[६७]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

खिलौने—बुद्ध चरित्र में अनेक प्रकार के खिलौनों (क्रीडनक) का वर्णन है, जिन्हें बच्चों के खेलने के लिये बनाया जाता था। अनेक प्रकार के खिलौने विविध रंगों से रंगे जाते थे। इन खिलौनों में हिरण जुते हुए छोटे छोटे स्वर्ण रथ, हाथी, मृग. घोड़े, बछड़े जुते हुए रथ, तथा रंगविरंगी पुतलियां मुख्य थीं।[६८] पकाये हुए खिलौनों को "आदीप्त क्रीडनक"[६९] कहा जाता था।

नगर नियोजन और भवन निर्माण

यद्यपि आचार्य अश्वघोष का संबन्ध बौद्ध धर्म से था और इसलिए उनके काव्यों में धार्मिक तथा दार्शनिक तत्व अधिक हैं, परन्तु साथ ही बुद्ध के जीवन से सम्बन्धित नगर(कपिलवस्तु) तथा "नन्द" भवन और राज-प्रासादों का सांकेतिक उल्लेख करके कवि ने कुषाण कालीन स्थापत्य कला की सुन्दर झांकी प्रस्तुत की है, जिसकी पुष्टि तत्कालीन पुरातात्विक साधनों से भी होती है। नगरों का निर्माण एक व्यवस्थित नियोजन (प्लान) के आधार पर होता था। राज-मार्गों से नगर कई भागों में विभक्त होता था। खेलने के लिये क्रीडोद्यान, जल के लिए कूप और जलाशय तथा यात्रियों के ठहरने के लिये धर्मशालायें भी बनाई जाती थीं। भवन निर्माण के साथ ही साथ विहार, स्तूप और चैत्य तथा गुफाओं और स्तम्भों का निर्माण भी होता था।

कवि ने नगर निर्माण का सुन्दर चित्र सौन्दरनन्द के प्रथम सर्ग में प्रस्तुत किया है। गुरुवों की स्मृति में नगर निर्माण की परम्परा उस समय चल पड़ी थी।

नगर नियोजन

नगर-निर्माण के पहले उसकी रूप रेखा तैयार की जाती थी और तत्पश्चात् उसका निर्माण कार्य प्रारम्भ होता था। कपिलवस्तु नगर का निर्माण "कपिल मुनि गौतम"[७०] की स्मृति में उनके इक्ष्वाकु वंशी[७१] शिष्यों ने करवाया था। कपिल मुनि, अपने जीवनकाल में ही जलपूर्ण घड़े[७२] से हिमालय के पार्श्व में स्थित[७३] अपने आश्रम के चारों ओर जल की धारा गिराकर[७४] शतरंज की तख्ती की भांति अष्टकोणीय चित्र (नक्शा) बनाया और उन राज पुत्र शिष्यों से कहा कि "जल की धारा से चिन्हित इस भूमि पर, मेरे मरने के बाद तुम लोग एक नगर का निर्माण करना"।[७५] मुनि के स्वर्गीय होने पर[७६] उन्होंने उसी नियोजन के आधार पर वास्तुविद्या के पण्डितों से कपिलवस्तु नगर का निर्माण करवाया।[७७] कपिल मुनि गौतम ने पृथ्वी पर जलधार गिराकर वास्तव में नगर निर्माण के लिये चित्र (नक्शा) तैयार किया था, जिसके लिये आधुनिक युग में हजारों रुपया इन्जीनियर लोगों पर व्यय किया जाता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

राजमार्ग और हाट—सड़कों से नगर कई भागों में बंटा होता था। ये सड़कें भव्य और सीधी होती थीं,[७८] जिन्हें राजमार्ग,[७९] राजपथ[८०] तथा महापथ[८१] कहा गया है ! राजा या राजकुमार की सवारी निकलने के अवसर पर सड़कें सजायी जाती थीं, पुष्प[८२] बिखेरे जाते थे, मालायें लटकाई जाती थी तथा स्थान स्थान पर पताकाएँ फहराई जाती थीं।[८३] ऐसे अवसरों पर राजमार्ग पर आर्त (दीन-दु:खी और पीड़ित) जनता का निकलना रोक दिया जाता था।[८४] नगर में प्रत्येक वस्तु के अलग-अलग बाजार बनाये जाते थे।[८५]

उद्यान एवं जलाशय—खेल-कूद के लिये नगरों में क्रीडोद्यान और उपवन[८६] भी होते थे। जिनमें आमोद-प्रमोद करके नगर निवासी अपने चित्त को प्रसन्न रखते और स्वास्थ्य-लाभ करते[८७] थे। नगर के आस-पास चारों दिशाओं में जल प्राप्ति के लिये जलाशयों का भी निर्माण करवाया जाता था, जिनमें उत्तम शुद्ध जल होता था।[८८]

जलकूप और धर्मशालाएँ—नगरों में यात्रियों के विश्राम के लिये धर्मशालाएँ थीं जो सड़क के किनारे और उपवनों के पास होती थीं। इन विश्रामशालाओं में पीने योग्य पानी के लिए कुएँ (कूप) भी होते थे।[८९]

परिखा और प्राचीर—नगर की सुरक्षा के लिए नगर के चारों ओर नदी के समान चौड़ी खाईं (सरिद्विस्तीर्णपरिखं) खोद दी जाती थी, जिसमें पानी भरा होता था। परिखा के अतिरिक्त पर्वत की भाँति ऊँची मिट्टी की चहार-दीवार (शैलकल्प महावप्रं) नगर के चारों ओर होती थी।[९०]

उद्घाटन—शान्ति और समृद्धि के लिये नवनिर्मित[९१] नगरों का महापुरुषों द्वारा[९२] उद्घाटन भी करवाया जाता था।[९३]

भवन-निर्माण

भवन-निर्माण कला का प्रागैतिहासिक युगों से ही महत्व रहा है। हड़प्पा व मोहनजोदड़ो से प्राप्त स्थापत्य के अवशेष इस प्रसंग में उल्लेखनीय हैं। वैदिक काल में भवनों का निर्माण होने लगा था जिसके प्रमाण वैदिक साहित्य में अनेक स्थलों पर मिलते हैं। वैदिक साहित्य में 'स्कम्भ' शब्द अनेक बार प्रयुक्त हुआ है।[९४] ऋग्वेद सहिता में पक्के मकानों तथा दुर्गों का उल्लेख है। धातुयुक्त अथवा धातु से सुरक्षित दुर्गों (पुरः आयसी)[९५] के अतिरिक्त 'शतभुजी' अथवा 'सौ दीवारों वाले पुर' का वर्णन भी ऋग्वेद में मिलता है।[९६] आर्येतर शम्बर के १०० (९९ का भी पाठ मिलता है) किले प्रसिद्ध ही थे, जिन्हें इन्द्र और विष्णु ने नष्ट किया था।[९७] मौर्य युग में

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

पाटलिपुत्र में चन्द्रगुप्त मौर्य का राज प्रासाद भी इतिहास में प्रसिद्ध ही है, जिसका उल्लेख मेगस्थिनीज और कौटल्य ने किया है। अश्वघोष के समय में भी भवन निर्माण कला उन्नति पर थी। कवि ने नन्द के महल का उल्लेख करते हुए उसे 'देव प्रासाद'[९८] तथा 'विमान'[९९] के समान कहा है, जिससे भव्य और ऊँचे भवनों का ही बोध होता है।

सुविधा की दृष्टि से भवन[१००] कई कक्षों में बँटा होता था। प्रवेश के लिये द्वार होते थे और सुरक्षा के लिये उनमें "कपाट"[१०१] लगाये जाते थे। द्वारों का नामकरण कभी-कभी महापुरुषों के नाम पर किया जाता था। पाटलिपुत्र में जिस द्वार से तथागत भगवान गौतम बुद्ध निकले थे उसका नाम "गौतम द्वार"[१०२] रखा गया था। तोरणों को शालभंजिकाओं[१०३] की सहायता से बनाया जाता था।

शुद्ध वायु प्राप्त करने के लिये महलों में झरोखे (वातायन)[१०४] होते थे। ये वातायन इतने छोटे होते थे कि एकाधिक स्त्रियां एक साथ नीचे के दृश्य को कठिनाई से देख सकती थीं।[१०५] वातायन के अतिरिक्त भवनों में हवा और प्रकाश के लिये 'गवाक्ष'[१०६] तथा 'अवलोकन' होते थे।

भवन एक मंजिल से अधिक ऊँचे होते थे। उन पर जाने के लिये "सोपान"[१०७] हुआ करते थे। प्रकाश के लिये स्वर्ण निर्मित 'दियट' जलाये जाते[१०८] थे। राज भवनों में राजकुमारों के लिये हीरककणों से जड़े हुए स्वर्णासन होते थे।[१०९]

राज प्रासादों के साथ-साथ अश्वघोष ने ऐसे भी घरों का उल्लेख किया है जो जीर्ण-शीर्ण तथा अन्धकारपूर्ण रहते थे। ऐसे घरों को कुगृह कहा गया है, जिनमें अन्धकार तथा गन्दगी के कारण सर्प (पन्नग) वास करते थे।[११०]

विहार स्तूप और चैत्य

बौद्धाचार्य अश्वघोष का युग बौद्ध धर्म के पुनरुद्धार का युग था। अतः उस धर्म से सम्बन्धित वास्तुकला में विहार, स्तूप, चैत्य और गुहाओं का निर्मित होना स्वाभाविक ही था।

विहार—विहार, भिक्षुओं का सभा-भवन, मिलने का स्थान, मैदान, अथवा उद्यान में विश्राम या विहार करने का स्थान, भिक्षुओं के रहने का भवन, बौद्ध भिक्षुओं का निवास-स्थान, जंगल में बना घर या भिक्षुओं का डेरा होता था।[१११] बुद्धघोष ने कहा है—विहारोनाम अड्ढयोगादिमुत्तको अवसेसावासो[११२] बौद्ध वास्तुकला में विहार शब्द मन्दिर का भी अर्थ रखता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

भिक्षुओं के अल्पकालीन निवास के लिए विहार होते थे।[११३] जेतवन (श्रावस्ती) में अनाथपिण्डिद ने भिक्षु उपतिष्य की अध्यक्षता में एक विशाल विहार का निर्माण करवाया[११४] था। महोदय अडोफ वेली के अनुसार बौद्ध धर्म दीक्षा ग्रहण करने के संस्मरण के लिए सम्राट् कनिष्क ने अपनी राजधानी पुरुषपुर (पेशावर) में एक विशाल विहार बनवाया था, जिसका इंजीनियर एगेसीलॉस यूनानी स्थापत्य विशारद था।[११५]

सारनाथ के भूखनन में प्राप्त विहार कुषाण युग या कुछ उसके बाद के और गुप्तकाल[११६] के पहले के हैं। इस युग के एक लेख में एक स्तम्भ तथा विहार के निर्माण का उल्लेख है जिसमें चारों ओर से आये हुए भिक्षु पथिक रुकते थे।[११७]

स्तूप—स्तूप को पालि भाषा में 'थूप' कहा गया है, जिसका सामान्य अर्थ है—ढेर। स्तूप एक प्रकार की अर्द्ध अण्डाकार संरचना है। यह गुम्बद की भाँति, उल्टे कटोरे के आकार का ठोस और चारों ओर से बन्द होता है। बौद्ध सस्कृति में स्तूप परिनिर्वृत्त बुद्ध का प्रतीक है। स्तूप व चैत्य की पूजा वस्तुतः बुद्ध की ही पूजा है। प्राचीनतम बौद्धकला में स्तूप-पादुका, बोधिवृक्ष, सिंहासन, आदि तथागत के प्रतीक के रूप में प्रयुक्त हुए हैं। स्तूप एक प्रकार का स्मारक है।[११८]

बुद्धचरित के अनुसार तथागत के महापरिनिर्वाण के पश्चात् उनकी धातुओं (शवदाह के पश्चात् अवशिष्ट अस्थियों) का विभाजन ८ राजाओं में हुआ था।[११९] जिनमें से प्रत्येक ने उन लोकनायक की धातुओं को एक-एक स्तूप में परिस्थापित किया था।[१२०] ये आठ स्तूप श्वेत पर्वतों के समान[१२१] थे। घड़े (सम्भवतः पिण्डपात्र) के ऊपर नवां स्तूप द्रोण[१२२] का और राख के ऊपर बनवाया हुआ दसवां स्तूप पिसल[१२३] लोगों का था।

स्तूपों की पूजा की जाती[१२४] थी। उन पर पताकाएँ भी फहराई जाती[१२५] थीं। कालान्तर में मौर्य सम्राट् अशोक ने ७ स्तूपों की धातुओं (आठवां स्तूप रामपुर में था जो विश्वस्त नागों से रक्षित था उसकी अस्थियां अशोक को न मिल सकी थीं) को एक ही दिन में अस्सी हजार भागों में बांट कर उन्हें इतने ही स्तूपों में सुरक्षित रख दिया था। ये अस्सी (चौरासी) हजार[१२६] स्तूप शरद ऋतु के शुभ्र मेघों की भाँति उज्ज्वल[१२७] थे।

पुरातात्त्विक अन्वेषणों से भी अश्वघोष के समय में स्तूपों के निर्माण की पुष्टि हो जाती है। सारनाथ और तक्षशिला में अशोक-कालीन धर्मराजिका

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

स्तूपों का जीर्णोद्धार इसी युग में हुआ था।[१२८] सारनाथ के धमेक स्तूप का संवर्द्धन भी कनिष्क युग में ही हुआ था।

चैत्य—यह धारणा प्रचलित है कि चैत्य शब्द की उत्पत्ति 'चिता' से हुई है,[१२९] परन्तु यह निश्चिन नहीं है, क्योंकि सभी चैत्यों में तथागत के चितावशेष उपलब्ध नहीं होते। अजन्ता के शैलकृत गुहाविहारों में चैत्य पाये जाते हैं जो स्तूप की भाँति गुम्बदीय न होकर ऊँचाई लिये हुए अण्डाकार हैं। उनके भीतर कोई पवित्र अवशेष नहीं हैं क्योंकि वे चट्टान को ऊपर से नीचे की ओर काटकर बनाये गए हैं। परन्तु चूंकि चैत्य भी पवित्र स्मारक हैं, अस्तु वे भी आदरणीय और पूजनीय हैं। पाणिनि के अनुसार चैत्य शब्द की उत्पत्ति 'चिति' से हुई है।[१३०] सम्भवत: यह चिता से सम्बन्धित था, जिसके ऊपर बनाया गया घर चैत्य कहलाता था,[१३१] जिसका प्रयोग सामान्य रूप से धार्मिक और पवित्र वृक्षों, स्मारकीय शिलाओं, पवित्र स्थलों व मूर्तियों के लिये भी होता है। चैत्य को वस्तुत: बौद्ध धर्म का देवालय कहना चाहिए।

अश्वघोष के युग में विहारों और स्तूपों के साथ-साथ चैत्यों का भी निर्माण हुआ। कवि ने "पाटलिपुत्र चैत्य" का उल्लेख किया है, जहां पर तथागत राजगृह से पाटलिपुत्र पहुँच कर[१३२] रुके थे। दूसरा प्रसिद्ध चैत्य हिरण्यवती नदी के किनारे "मुकुट" नाम से प्रसिद्ध था, जिसके समीप तथागत के महापरिनिर्वाण के पश्चात् उनके सुयश के अनुरूप ही मृत शरीर को जलाने के लिये चिता बनाई गई थी।[१३३]

स्तम्भ—प्रस्तर स्तम्भों का निर्माण सम्राट् अशोक के समय में प्रारम्भ हो गया था। कुषाण युग में पहुँचते-पहुँचते लोहे (स्तम्भमायसम्)[१३४] तथा सोने के विशाल स्तम्भ (हैमो महास्तम्भ)[१३५] बनने लगे थे। गुप्त युग में भी लौह-स्तम्भों की निर्माण कला चलती रही।

इस प्रकार अश्वघोष के ग्रन्थों के आधार पर तत्कालीन चित्र लेखन, प्रतिमाये, नगर-नियोजन, भवन-निर्माण तथा बौद्ध स्मारकों—विहार, स्तूप और चैत्य के निर्माण का वर्णन किया गया है। साथ ही साथ कवि के कथन को तत्कालीन पुरातात्विक साक्ष्यों से पुष्ट किया गया है।

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अध्याय आठ के सन्दर्भ

१. भर्तृहरि : साहित्य संगीत कला विहीनः ।
साक्षातपशुः पुँच्छ विषाण हीनः ।।
२. अग्रवाल, वी०एस०, कला और संस्कृति, भूमिका पृ० ४५
(साहित्य भवन प्रा० लि० इलाहाबाद, १९५८ ई०
३. बु०च० १९।९
४. सौ० ४।१४
५. वही, ४।१६
६. वही, १५।३९
७. बु०च० ८।२५
८. लैफमैन, ललित० १२०।१-२
९. वही, १३०।१५-१६
१०. बु०च० २।१२, ८।१५, ७२
११. वही, ७।३३
१२. पुरी, इ०अ०कु० पृ० १८७
१३. अग्रवाल, भारतीय कला, पृ० ३३५
१४. वही, पृ० ३३७
१५. वही, पृ० ३३७ चित्र ३९४
१६. वही, पृ० ३२७ चित्र ३८०
१७. पुरी, इ०अ० कु०पृ० १८९
१८. बुद्धिस्ट आर्ट ऑफ गन्धार पृ० २५; दृष्टव्य इ०अ०कु०पृ० १९०
१९. पुरी, इ०अ०कु०पृ० १९१
२०. अग्रवाल, भारतीय कला, पृ० ३३८-३९
२१. वही, पृ० ३३०
२२. जे०यू०पी०हि०सो० जिल्द २१ पृ० ४२-९८
२३. अग्रवाल, भारतीय कला पृ० २८३;
जे०यू०पी०हि०सो० २३ पृ० ३५-५१
२४. लैफमैन, ललित १२०।१-२
२५. सौ० ४।२८; बु०च० २।२०

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२६. बु०च० १०।३
२७. वही, १०।३
२८. सौ० ४।२; बु० च० १।३
२९. सौ० १०।८, ८।८१
३०. बु०च० १।८८
३१. वही, ८।८१
३२. सौ० ९।१८
३३. वही, १०।८
३४. जे०यू०पी०हि०सो०जि २२ पृ० १०५-१०७
३५. वही, पृ० १२६ नं० जी० ५२; १२८ नं० २१०६, २४९५
३६. पुरी, इ०अ०कु०पृ० २०३; द्रष्टव्य, वोगेल, केटालॉग ऑफ मथुरा म्यूजियम नं० डी० १४ पृ० ९७
३७. जे०यू०पी० हि०सो० जि० २२ पृ० १२६-२७ नं० ई० १२; यद्यपि श्री डी०बी० डिसकालकर ने ब्रह्मा की मूर्ति माना था, परन्तु डॉ० अग्रवाल इसे पंचानन शिव की मूर्ति मानते हैं। (अग्रवाल, भारतीय कला पृ० ३१४ चित्र ३१३)
३८. जे०यू०पी०हि०सो० जि० २२ पृ० १२८-२९ नं०, ८००, ८७४
३९. वही, पृ० १२८ नं० २१०६
४०. अग्रवाल, भारतीय कला पृ० ३१५
४१. जे०यू०पी०हि०सो०पृ० १०२ नं० ३८२
४२. अग्रवाल, भारतीय कला पृ० ३१६
४३. वही, पृ० ३१७
४४. बु०च० १०।३
४५. दिव्या० ३७।८, १०, ११; ३७७।१९
४६. वही, ३७७।९
४७. सं० बौ०सा०भा०जी० पृ० २३०
४८. दिव्या० ४७।१४-१५, २६
४९. महावस्तु०जि० ३।३७९।८
५०. वोगेल, कै० म० म्यू० पृ० १८९ नं० क्यू० १३
५१. जे०यू०पी० हि०सो० जि० २२ पृ० १२८ नं० ६५२
५२. वही, पृ० १२८ नं० ७७०, ८९९
५३. वही, पृ० १२९ नं० ४६२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

५४. वही, पृ० १२६-२७ नं० इ० १२; भारतीय कला पृ० ३१४-१५
५५. बु०च० १७।७०
५६. वही, १।१९
५७. वही, २६।९९-१००
५८. महावंश अध्याय-१२ पृ० १३८-१३९
५९. बु०च० १७।७०
६०. एपी०इण्डि० जि० १ नं० ३३ पृ० ३९६
६१. वही, जि० १७ पृ० ९-१०
६२. वही, जि० १७ पृ० १०
६३. वही, जि० १ पृ० ३९० नं० १८
६४. अग्रवाल, भारतीय कला पृ० ३०३
६५. वही, पृ० ३०२
६६. वही, पृ० २९९-३०१;
पुरी, इ०अ०कु० पृ० २०४
६७. बु०च० १।१७
६८. बु०च० २।२१-२२
६९. वैद्य, सद्धर्म० ५३।१७
७०. सौ० १।५७
७१. वही, १।१८, २४
७२. वही, १।२८
७३. वही, १।५
७४. वही, १।३१
७५. वही, १।३२-३३
७६. वही, १।३४
७७. वही, १।४१
७८. वही, १।४२
७९. बु०च० ३।४
८०. वही, ३।५
८१. सौ० १।४२
८२. बु०च० ३।५
८३. वही, ३।९
८४. वही, ३।४

Digitization by Hindu-Heritage Foundation of America. HHFA(USA)

८५. सौ० १।४३
८६. वही, १।५१
८७. वही, १।४९
८८. वही, १।५०
८९. वही, १।५१
९०. वही, १।४२
९१. सौ० १।४४
९२. वही, १।४४
९३. बु०च० २२।२-११
९४. ऋग्वेद १।३४।२, ३।८।१-३, ६।४७।५ ८।४१।१०,
९५. वही, १।५८।८, २।२०।८
९६. वही, १।६६।८
९७. वही, ७।९९।५; : राहुल, ऋग्वेदिक आर्य पृ० १०३ (किताबमहल, इलाहाबाद, १९५७)
९८. सौ० ४।२४; बु०च० ३।२०
९९. सौ० ४।२४
१००. बु०च० ५।६७
१०१. वही, १।७४
१०२ बु०च० २२।६
१०३. वही, ५।५२
१०४. वही, ३।१८, १९, २१
१०५. वही, ३।२१
१०६. सौ० ६।२
१०७. बु०च० ३।१५
१०८. वही, ५।४४
१०९. वही, ५।४४
११०. सौ० ९।३७
१११. टी० डब्ल्यू० राइज डेविड्स, पालि इंगिलिश डिक्शनरी, पृ० ६४२,, लन्दन, १९५९
११२. समन्तपासादिका, पी० टी० एस० संस्करण, जिल्द ६, पृ० १२१५
११३. सौ० ५।२० : विद्याविहाराभिमतं विहारं
११४. बु०च० १८।८४-८६

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

११५. ए पैजेन्ट ऑफ इण्डिया पृ० ४७-४८
११६. साहनी, के०सा०म्यू०पृ० १५
११७. एपी०इण्डि० जि० २० पृ० २४
११८. डॉ० मार्कण्डेय शुक्ल : प्राचीन भारतीय कलाओं एवं औद्योगिक शिल्पों का अध्ययन. अध्याय ४।
११९. बु०च० २८।५३
१२०, वही, २८।५४
१२१. वही, २८।५६
१२२. बु०च० २८।१६-५३, ५५
१२३. बु०च० २८।५६
१२४. वही, २८।५७
१२५. वही, २८।५७
१२६. दिव्या० २३९।१७, २४१।५
१२७. बु०च० २८।६५
१२८. अग्रवाल, भारतीय कला पृ० ३२४
१२९. ई०जे० रैप्सन, 'चैत्य', ई०आर०ई०, जि० ३, पृ० ३३५
१३०. पाणिनि ३।३।४१
१३१. शब्दकल्पद्रुम, जि० २, पृ० ४६२; अमरकोष अध्याय २, पुरवर्ग, ७; राइज डेविड्स, पालि इंगलिश डिक्शनरी, पृ० १०४.
१३२. बु०च० २२।२
१३३. वही, २७।७०
१३४. वही, १४।१२
१३५. सौ० १८।२०

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

परिशिष्ट १

राजावली

इस परिशिष्ट में अश्वघोष के काव्यों में उल्लिखित राजाओं का संक्षिप्त परिचय वर्ण कर्म से दिया गया है :—

अज[1]—राजा दशरथ के पिता का नाम था।[2]

अजातशत्रु (कूणीक)—यह बिम्बिसार का पुत्र और उत्तराधिकारी तथा मगध का प्रसिद्ध सम्राट् था। उसने लिच्छवियों पर विजय पाने के लिये अपने मंत्री वर्षकार से पाटलिपुत्र में एक विशाल किले का निर्माण करवाया था।[3] पांच सौ रानियों के साथ 'जीवक' की सहायता से उसके ही आम्रवन में पहली बार अजातशत्रु ने बुद्ध-दर्शन किये थे।[4] महापरिनिर्वाण सूत्र में भी अजातशत्रु को बुद्ध-वन्दना करते हुए दर्शाया गया हैं। मगध सम्राट् द्वारा प्रथम बुद्ध-दर्शन का चित्रण 'भरहुत कला' में भी हुआ है।[5] उसने बुद्ध के महापरिनिर्णाण के बाद उनकी अवशिष्ट धातुओं पर एक स्तूप का निर्माण करवाया था। यह विदित ही है कि कुणीक अजातशत्रु के ही संरक्षण में राजगृह की सप्तपर्णी गुहा में 'प्रथम बौद्ध संगीति' सम्पन्न हुई थी, जिसमें ५०० अर्हतों ने भाग लिया था।[6]

अनरण्य :—प्राचीन काल का प्रसिद्ध राजा था। जिसका राज्य शुद्धोदन के राज्य की भांति स्वस्थ, स्वतन्त्र (परचक्र मुक्त) सुखी और अन्न से परिपूर्ण था।[7]

अत्रिदेव (सांकृति) :—प्राचीन राजा[8] था, जिसने ब्रह्मर्षिपद प्राप्त किया था। परन्तु मुनि वशिष्ट के उपदेश से राज्य-लक्ष्मी ग्रहण की।[9]

अन्धक—ये प्राचीन भारत के प्रसिद्ध लोग थे जो मथुरा के आस-पास बसे हुए थे और वृष्णियों से सम्बन्धित थे। बुद्ध चरित में अन्धक नामक राजा का उल्लेख है,[10] जिसने एक कन्या के लिये युद्ध किया था। इनका विनाश मद्य-पान के कारण हुआ था।[11]

अम्बरीश :—शाल्व जनपद (वर्तमान जोधपुर, जैपुर, और अलवर के क्षेत्र) का राजा (शाल्वाधिप) था, जिसने सपुत्र वन-गमन किया था। परन्तु वहाँ भी

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

प्रजा ने उनका साथ न छोड़ा। अस्तु पुनः राजधानी (पुर) वापस आना पड़ा और राज-मुकुट धारण करना पड़ा।[१२]

अशोक :—मौर्य-वंश का प्रसिद्ध सम्राट् था। "उसने अहंकारी शत्रुओं को शोकाकुल किया, दुःखी लोगों का दुःख दूर किया। वह फल-फूलों से लदे हुए अशोक वृक्ष के समान प्रियदर्शन था।"[१३] पहले उसका नाम 'चण्डाशोक' था परन्तु प्रजा के लिये कल्याणकारी कार्य करने तथा पृथ्वी पर महामानव बुद्ध की अस्थियों पर अस्सी हजार भव्य स्तूपों का निर्माण करवाने के कारण 'धर्माशोक' कहलाया।[१४] दिव्यावदान से पता चलता है कि सम्राट् अशोक ने चौरासी हजार स्तूपों का निर्माण करवाया था।[१५]

आषाढ़ :—राजा आषाढ़ ने घर में रहते हुए भी मोक्ष प्राप्त किया था।[१६]

इलविल :—कल्याणकारी कार्यों के कारण इन्हें स्वर्ग मिला था। परन्तु दुराचरण के कारण यह च्युत होकर समुद्र में कछुआ हुए।[१७]

ऐड :—बुध से उत्पन्न इडा (इला) का पुत्र था। इसे "पुरुरवा" भी कहा गया है। देवता के समान प्रभावशाली, यशस्वी और गुणवान होने के कारण राजर्षि की उपाधि धारण की थी, किन्तु उर्वशी अप्सरा के काम-पाश में बँध-कर वह विनाश को प्राप्न हुआ।[१८]

कराल जनक :—विदेहवंशी मिथिला का राजा था।[१९] डॉ० एच० सी० राय चौधरी पुराणों में उल्लिखित "कृति" की पहचान करालजनक से करना अधिक तर्क संगत मानते हैं।[२०] यह निमि का पुत्र था[२१]। ब्राह्मण-कन्या के हरण जैसे दुराचार से इसने विदेह-श्री को समाप्त कर दिया था।[२२]

कृशाश्व :—धर्मानुसार राज्य-रक्षण के लिये प्रसिद्ध प्राचीन राजा था।[२३] इनकी दो रानियों का उल्लेख मिलता है।[२४]

कंस :—मथुरा का शासक था जिसे कृष्ण ने मारा था।[२५]

जनमेजय :—कुरु राज्य के प्रसिद्ध राजा थे जिन्होंने राजर्षि पद प्राप्त किया था।[२६]

जन्हु :—पौराणिक राजा थे, जिन्होंने गंगा के प्रवाह को रोका था।[२७]

द्रुम :—शाल्व देश का राजा था। सपुत्र वन-गमन करने के बाद भी वापस लौटकर राज्य लक्ष्मी ग्रहण की।[२८] दिव्यावदान में उसे वेत्रवती (वर्तमान बेतवा) के समीपस्थ किन्नर देश का शासक बताया गया है।[२९] इसने अपनी राजकुमारी मनोहरा का विवाह उत्तर पंचाल के शासक 'सुधनु' से किया था।[३०]

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

नहुष :—स्वर्ग में देवताओं का राजा था, परन्तु विषयों में आसक्त होकर पतित हुआ[३१] और सर्प-योनि को प्राप्त हुआ।[३२] नहुष को ययाति का पिता बतलाया गया है।[३३]

नाभाग :—मान्धाता और वसु के समान प्रसिद्ध प्राचीन राजा था।[३४]

निकुम्भ :—प्रसिद्ध राजा था परन्तु धर्म के प्रतिकूल आचरण के कारण काशी में उसका पतन हुआ था।[३५]

पाण्डु —कुरु-वंशी प्रसिद्ध शासक[३६] और विचित्र वीर्य का पुत्र था[३७] इन्होंने माद्री के रूप-गुण से आकृष्ट होकर कामज-सुख का सेवन किया था।[३८]

पुष्कर :—गन्धार का राजा था, जिसने बुद्ध से दीक्षा लेकर राज्य परित्याग किया था।[३९] रीज डेविड्स का मत है कि मगध-राज बिम्बिसार के पास "पुष्कर" या "पुष्कर सारिन" ने अपना दूतमन्डल तथा पत्र भेजा था।[४०] परन्तु बुद्ध चरित से ऐसा ज्ञात होता है कि पुष्कर स्वयं राजगृह आया था और राजगृह में ही बुद्ध ने उसे दीक्षा दी थी।[४१]

पृथु :—प्रसिद्ध पौराणिक राजा था[४२] जिसे पुराणों में आदि राजा कहा गया है।

प्रसेनजित :—बुद्ध के समय में कोशल जनपद के सम्राट् थे।[४३] इन्हें हर्यश्व वंश का बताया गया है।[४४] यह बुद्ध के परम भक्त थे। बौद्ध साहित्य में इनका नाम अति प्रिय नाम बन गया है।

बलि :—राजा बलि[४५] को ध्रुव का छोटा भाई बतलाया गया है।[४६]

बिम्बिसार (श्रेण्य)[४७] बुद्ध के समय मे मगध का प्रसिद्ध राजा था।[४८] इसे हर्यंक कुल[४९] में उत्पन्न, परम बुद्ध भक्त बतलाया गया है। दिव्यावदान में इसे वस्त्राधिप"[५०] कहा गया है।

भगीरथ :—प्रसिद्ध प्राचीन राजा थे।[५१]

भरत :—शकुन्तला से उत्पन्न[५२] दुष्यन्त का वीर पुत्र था।[५३] महाभारत के अनुसार भरत के नाम पर ही इस देश का नाम "भारत" पड़ा।[५४]

भीमक :—प्रसिद्ध बलशाली देवेन्द्र के समान सेनाधिकारी राजा था।[५५]

भीमरथ :—बुद्ध के समय में यह काशी का राजा था।[५६]

भूरिद्युम्न ,—यद्यपि राजर्षि थे परन्तु कर्म-फलों के क्षीण होने पर स्वर्गच्युत हुए।[५७]

मनु :—राजा मनु को सूर्य का पुत्र बतलाया गया है। इनके राज्य में

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

प्रजा को कोई भय न था, सुख, सुभिक्षा (अन्न की सुलभता) तथा सद्गुणों के के कारण लोग प्रसन्न थे। यह सतयुग (कृतयुग) था, जब पाप नष्ट हुआ और धर्म प्रज्ज्वलित हुआ था।[५८]

महा सुदर्शन—प्राचीन भारत का राजा था।[५९]

मान्धाता :—इक्ष्वाकु वंश के प्रसिद्ध सम्राट् थे इन्हें मस्तक से उत्पन्न बताया गया है।[६०] इन्होंने त्रैलोक्य विजय[६१] की थी। पृथ्वीपति[६२] और चतुर्द्वीपेश्वर[६३] उपाधियां उनकी महान विजेता की द्योतक हैं। इन्द्र का अर्द्धासन प्राप्त कर लेने पर भी[६४] विषय-वासना के कारण उन्हें स्वर्ग से च्युत होना पड़ा।[६५]

ययाति :—राजा ययाति[६६] नहुष के पुत्र थे। इनके राज्य में लोग दानी, सत्यनिष्ठ, व्रतवान तथा अहिंसक वृति के थे।[६७] राजर्षि उपाधि धारण करके स्वर्ग प्राप्त किया था[६८] परन्तु विश्वाची अप्सरा के वासना-बन्धन[६९] के कारण स्वर्गच्युत होना पड़ा। विष्णु पुराण से भी इसकी पुष्टि होती है।[७०]

राम (दाशरथि) राम[७१] को 'राघव' भी कहा गया है। राम वन-गमन,[७२] दशरथ का वियोग,[७३] आदि घटनाओं के संकेत बुद्धचरित में मिलते हैं।

रावण (दैत्य) सीता को हरने के कारण विनाश को प्राप्त हुआ था।[७४]

वज्रबाहु :—यह ध्रुव का छोटा भाई था।[७५]

वसु :—प्राचीन भारत का प्रसिद्ध राजा था।[७६]

विदेह राज जनक :—मिथिला के प्रसिद्ध राजा थे जिन्होंने गृहस्थ रहकर[७७] भी योग विधि से मोक्ष प्राप्त किया।[७८]

वृष्णी :—बुद्ध चरित में वृष्णी राजा[७९] का उल्लेख हुआ है। अन्धकों से इनका घनिष्ट सम्बन्ध था।

वैभ्राज :—पौराणिक राजा था।[८०]

शन्तनु :—प्रतिप का पुत्र[८१] और देवापि का अनुज था।[८२] अपने कुल का प्रतापी राजा था जिसने काली[८३] और गंगा[८४] से विवाह किया था। यद्यपि इन्होंने राजर्षि-पद[८५] प्राप्त किया परन्तु काम-वासना वश पतित हुए।[८६]

शम्बर :—शम्बर[८७] कृष्ण-विरोधी राजा था, इसीलिए प्रद्युम्न ने युद्ध में उसे मारा था।[८८]

शिवि :—अत्यन्त दानशील राजा था।[८९] विष्णुपुराण में इन्हें भी राजर्षि कहा गया है।[९०] इन्हीं से सम्बन्धित शिवि जनपद था।

शिशुपाल :—चेदि का अहंकारी राजा था, जिसे कृष्ण ने मारा था।[९१]

शुद्धोदन (शाक्य राज):—इक्ष्वाकु वंशोत्पन्न राजा शुद्धोदन, शरद-चन्द्र के

Digitization by Hindu-Heritage Foundation of America. HHFA(USA)

समान प्रजा सुखदायी,[९२] शुद्ध कर्मी और जितेन्द्रिय थे।[९३] महामाया[९४] और प्रजापति गौतमी[९५] इनकी दो रानियां थीं। राजकुमार सिद्धार्थ महामाया से उत्पन्न शुद्धोदन के पुत्र थे, जिनका पालन-पोषण (माता के स्वर्गवासी होने के कारण) उनकी मौसी गौतमी ने किया था। राजा शुद्धोदन[९६] ने 'शाक्य-राज'[९७] और 'शाक्याधिपति'[९८] की उपाधियां धारण कीं थीं।

सगर :—इक्ष्वाकुवंशी प्रसिद्ध राजा थे, जिन्होंने सागर की बेला निर्धारित की।[९९] भार्गव मुनि ने इनके संस्कार किये थे।[१००]

सेनजित :—राजा सेनजित[१०१] अन्तिदेव, विदेहराज जनक, राम और द्रुम जैसे प्रसिद्ध राजा थे।[१०२]

इस प्रकार अश्वघोष की कृतियों में प्राचीन राजाओं के विवरण प्राप्त होते हैं जिनसे प्राचीन भारत के इतिहास के निर्माण में महत्वपूर्ण सहायता मिलती है।

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

परिशिष्ट एक के सन्दर्भ

१. बु०च० २४।४०
२. वही, ८।७९
३. वही, २२।३
४. वही, २१।६
५. द एज आफ इम्पीरियल यूनिटी पृ० २७
६. बु०च० २८।५९-६२
७. वही, २।१५
८. वही, १।५२, ९।२०
९. वही, ९।७०; सौ० ७।५१
१०. बु०च० २८।२९
११. वही, ११।३१
१२. बु०च० ९।६९; सौ० ७।५१
१३. वही, २८।६३
१४. वही, २८।६४-६५
१५. दिव्या० २७२।१-२
१६. बु०च० ९।२०
१७. सौ० ११।४५
१८. बु०च० ११।१५; सौ० ७।३७
१९. बु०च० १३।५
२०. पो०हि०ए०इ०पृ०८१
२१. वही, पृ०८२
२२. बु०च० ४।८०
२३. वही, २०।१७
२४. विष्णु पुराण का भारत, पृ० १११
(डा० सर्वानन्द पाठक, चौखम्भा संस्कृत सिरीज आफिस, वाराणसी, १९६७)
२५. सौ० ९।१८
२६. वही, ७।४४

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२७. वही, ७।४०
२८. बु०च० ९।२०,७०
२९. दिव्या० २८७।३१
३०. वही, २९९।२३-२४
३१. बु०च० ११।१४, १६; २५।१२
३२. सौ० ११।४४
३३. बु०च० २।११
३४. वही, २४।३९
३५. वही, २०।१७
३६. वही, ४।७९
३७. विष्णु पुराण का भारत, पृ० १११
३८. सौ० ७।४५; बु०च० ७।७९
३९. बु०च० २।१४
४०. बुद्धिष्ट इण्डिया पृ० २८
४१. बु०च० २।१२-८
४२. वही, १।१०
४३. वही, २।१४,१८।१,८२,८७; २०।५;,२१।२९
४४. वही, १८।५८
४५. वही, ११।१६
४६. वही, ९।२०
४७. वही, १०।१६,१६।७२
४८. वही, १०।१०
४९. वही, ११।२
५०. दिव्या० १७२।१०-११, ४६५।२४
५१. बु०च० २४।४०
५२. सौ० १।२६
५३. वही, १।३६
५४. महाभारत आदि प० ७४।१३१
५५. सौ० ७।४३
५६. बु०च० १४।१०७
५७. सौ० ११।४६
५८. वही, ३।४१; बु०च० २।१६

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

५९. बु०च० ८।६२
६०. वही, १।१०
६१. वही, १०।३१
६२. वही, १९।१०,२४।३९
६३. दिव्या० १३१।१८
६४. सौ० ११।४३
६५. बु०च० ११।१३
६६. वही, २४।४०; सौ० १।५९
६७. बु०च० २।११
६८. सौ० ११।४६
६९. बु०च० ४।७८
७०. दृष्टव्य, विष्णु पुराण का भारत पृ० ९५
७१. बु०च० ९।२५,२४।२५
७२. वही, ६।३६,८।८,९।६९
७३. वही, ८।८१,९।९
७४. वही, २८।३१
७५. वही, ९।२०
७६. वही, २४।३९
७७. वही, ९।२०
७८. वही, १।४५,१२।६७
७९. वही, २८।२९
८०. वही, ९।२०
८१. सौ० ७।४१
८२. दृष्टव्य, विष्णु पुराण का भारत पृ० ७२
८३. सौ० ७।४४
८४. वही, ७।४१
८५. विष्णु पुराण का भारत पृ० ६५
८६. सौ० १०।५६
८७. वही, ८।४३
८८. दृष्टव्य, विष्णु पुराण का भारत पृ० १७३
८९. सौ० ११।४१
९०. विष्णु पुराण का भारत पृ० ८५

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

९१. बु०च० २८।२८
९२. वही, ११।१,९।४
९३. सौ० २।१
९४. बु०च० १।२,५,२।१८; सौ० २।४९
९५. बु०च० ८।२४,५१
९६. वही, २।४६,३।४०; सौ० १८।३१
९७. सौ० २।४५,६२
९८. बु०च० १।४९,८८; २।२५,५।१,३६; ६।६०,९।२४,१०।११,१९।३६
९९. वही १।४४
१००. सौ० १।२५
१०१. वही, ८।४४
१०२. बु०च० ९।२०

———

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

सहायक ग्रन्थ सूची

१. आधारभूत ग्रन्थ

ग्रन्थ का पूरा नाम	सम्पादक/अनुवादक/लेखक	प्रकाशन स्थान	सन्/सम्वत्
बुद्ध चरित	ई०एच० जान्सटन (सं०)	कलकत्ता, बैप्टिस्ट मिसन प्रेस	१९३६
बुद्ध चरित	ई० वी० कावेल (सं०)	आक्सफर्ड कलेरेण्डन प्रेस	१८९३
बुद्ध चरित (प्रथम भाग)	सूर्य नारायण चौधरी सं० तथा अनुवादक	संस्कृत भवन, कठौतिया, पूर्णिया (बिहार)	१९५५
बुद्ध चरित (द्वितीय भाग)	सूर्य नारायण चौधरी (सं० तथा अनुवादक)	संस्कृत भवन, कठौतिया, पूर्णिया (बिहार)	१९५३
वज्र सूची	ए० वेबर (सं०)	बर्लिन	१८५०
वज्र सूची उपनिषद	ग० प्रज्ञानन्द (सं० तथथा अनुवादक)	बुद्ध विहार, रिसालदार पार्क, लखनऊ	१९६०
सौन्दरनन्द	हर प्रसाद शास्त्री (सं०)	कलकत्ता	१९१०
सौन्दरनन्द	ई० एच० जान्सटन (सं०)	लन्दन	१९३२
सौन्दरनन्द	सूर्य नारायण चौधरी (सं० तथा अनुवादक)	संस्कृत भवन-, कुठौतिया, पूर्णिया (बिहार)	१९४८

२. सम सामयिक मूल बौद्ध ग्रन्थ

अभिधर्म कोष	राहुल सांकृत्यायन	काशी विद्यापीठ, वाराणसी	सं० १९८८

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१	२	३	४
अवदान शतक जि० १	जे० एस० स्पेयर (सं०)	सेण्ट पिटर्स वर्ग	१९०२
अवदान शतक जि० २	जे० एस० स्पेयर (सं०)	सेण्ट पिटर्स वर्ग	१९०९
अवदान शतक	पी० एल० वैद्य (सं०)	मिथिला विद्या-पीठ, दरभंगा	१९५८
आर्य मंजु श्री मूल कल्प (३ जिल्द)	गणपति शास्त्री	त्रिवेन्द्रम	१९२०-१९२५
जातक माला	सूर्य नारायण चौधरी, (सं० तथा अनुवादक)	संस्कृत भवन, कठौतिया पूर्णिया (विहार)	१९५२
दिव्यावदान	पी० एल० वैद्य (सं०)	मिथिला विद्यापीठ, दरभंगा	१९५९
दिव्यावदान	ई० बी० कावेल तथा आर० ए० नील (सं०)	केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस	१८८६
महावस्तु अवदान (३ जिल्दों में)	ई० सेनार्ट (सं०)	पेरिस	१८८२-१८९७
महावस्तु (इंगलिश ट्रान्सलेशन)	जे० जे० जोन (अनुवादक)	लन्दन	१९४९
माध्यमक वृत्ति	लुइस डेलावली पुसिन (सं०)	सेण्ट्स पिटस वर्ग	१९१३
ललित विस्तर (२ जिल्दों में)	एस० लेफ मैन (सं०)	हाल ए० एम०	१९०२-१९०८
ललित विस्तर	राजेन्द्र लाल मित्रा (सं०)	एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल, कलकत्ता	१८७७
ललित विस्तर (इंलिस ट्रान्सलेशन)	जे० स्पेयर (अनु०)	लन्दन	१८७५
ललित विस्तर	पी० एल० वैद्य	मिथिला विद्यापीठ, दरभंगा	१९५८

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१	२	३	४
सद्धर्म पुण्डरीक	नलिनाक्ष दत्त (सं०)	एशियाटिक सोसायटी, कलकत्ता	१९५३
सद्धर्म पुण्डरीक	पी० एल० वैद्य (सं०)	मिथिला विद्यापीठ, दरभंगा	१९६०

३—प्राचीन ग्रन्थ

क—पालि ग्रन्थ

अंगुत्तर निकाय	आर० मारिस ऐण्ड ई० हार्डी	पी० टी० एस०, लन्दन	१८८२-१९००
अंगुत्तर निकाय	ज० काश्यप (सं०)	नवनालन्दा महा विहार	१९६०
खुद्दक निकाय	ज० काश्यप (सं०)	नवनालन्दा महा विहार	१९५८
थेर गाथा	भिक्षु धर्म रत्न (अनु०)	मधबोधि सभा सारनाथ,	बुद्धाब्द २४९९
दीघ निकाय	ज० काश्यप	नवनालन्दा महा विहार	१९५८
दीघ निकाय	राइज डेविड्स और जे० ई० कारपेण्टर	पी० टी० एस० लन्दन	१८९०-१९११
धम्मपद	राहुल साकृत्यायन	बुद्ध बिहार, रिसालदार पार्क, लखनऊ	१९६५
मज्झिम निकाय	ए० वी० ट्रंकनर तथा आर० चारमर	लन्दन	१८८८-८९
महा परि-निब्बान सुत्त	भिक्षु कित्तिमा (सं०)	अ०चोजन जाव याद, वर्मा,	बुद्धाब्द २४८५
महा परि-निब्बान सुत्त	भिक्षु धर्म रक्षित	बनारस	सं० २०१५
महावंश	गुणपाल वीर शेखर (सं०)	अनुला प्रेस, कोलम्बो	१९५५
मिलिन्द पञ्हों	ट्रन्कनर (सं०)	लन्दन	१८८०
मिलिन्द पञ्हों (इंगलिश ट्रांसलेशन)	टी० डब्ल्यू० राइज डेविड्स	लन्दन	१८९०-९४

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America, HHFA(USA)

१	२	३	४
विनय पिटक	एच० ओल्डेनबर्ग	लन्दन	१८७९-८३
विनय पिटक	राहुल सांकृत्यायन (अनु०)	महाबोधि सभा, सारनाथ	१९३५
संयुक्त निकाय	ज० काश्यप (सं०)	नवनालन्दा महाविहार	१९५९
संयुक्त निकाय	भिक्षु धर्म रक्षित व ज० काश्यप (अनु०)	महाबोधि सोसाइटी, सारनाथ	१९५४

ख—संस्कृत ग्रन्थ

अर्थशास्त्र (कौटलीय)	त० गणपति शास्त्री (सं०)	त्रिवेन्दम	१९२४
अष्टाध्यायी (पाणिनीय)	गंगादत्त शास्त्री (सं०)	गुरुकुल काँगड़ी, विश्व-विद्यालय, हरद्वार	सं० २००७
ऋग्वेद संहिता	श्रीराम शर्मा (सं०)	बरेली	१९६२
कामसूत्र (वात्स्यायन)	माधवाचार्य	लक्ष्मी वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस कल्यान (बम्बई)	सं० १९९१
काव्य मीमांसा (राजशेखर)	सी० डी० दलाल	गायकवाड़ ओरियण्टेल सीरीज, बड़ौदा	१९३४
बृहस्पति स्मृति	के० वी० रामास्वामी आयंगर (सं०)	ओरियण्टेल इन्सटीट्यूट, बड़ौदा	१९५४
मनुस्मृति	स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती (सं०)	पुस्तक मन्दिर, मथुरा	सं० २०१९
महाभारत (छः जिल्द)	राम नारायण दत्त शास्त्री पाण्डेय राम (सं०)	गीता प्रेस, गोरखपुर	सं० २०१२-२०२०
यजुर्वेद	पं० ज्वाला प्रसाद मिश्र (सं०)	वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई	सं० १९५९
विष्णु स्मृति	जूलियन जौली (सं०)	ऐशियाटिक सोसाइटी कलकत्ता	१८८१
शुक्रनीति		वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई	१९८२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

४. आधुनिक सहायक साहित्य

लेखक	ग्रन्थ का पूरा नाम	प्रकाशन स्थान	स०/संवत्
अ—अङ्ग्रेजी ग्रन्थ			
अग्रवाल, वी० एस०	इण्डिया ऐज नोन टु पाणिनि	लखनऊ	१९५३
अनुरुद्ध, आर० पी०	ऐन इन्ट्रोडक्शन इन टू लामिज्म	होशियारपुर	१९५९
आयंगर, के० वी० रामा स्वामी	ऐस्पेक्ट्स ऑफ सोशल ऐण्ड पोलिटिकल सिस्टम ऑफ मनुस्मृति	लखनऊ	१९५१
अम्बेडकर, बी० आर०	हू वेयर द शूद्राज	बम्बई	१९४६
अम्बेडकर, बी० आर०	द राइज ऐण्ड फॉल ऑफ हिन्दू वोमेन (रिप्रिण्ट)	हैदराबाद	१९६५
अम्बेडकर, बी० आर०	बुद्ध ऐण्ड हिज धम्म	बम्बई	१९५७
अल्टेकर, ए० एस०	एजूकेशन इन ऐंशेण्ट इण्डिया	बनारस	१९५१
अल्टेकर, ए० एस० ऐण्ड मजूमदार, आर० सी	द वाकाटक गुप्त एज	पटना	१९६०
अवस्थी, ए०बी० एल०	स्टडीज इन स्कन्द पुराण भाग १	लखनऊ	१९६६
कनिंघम, ए०	ऐंशेण्ट ज्याग्राफी ऑफ इण्डिया	बनारस	१९६३
कनिंघम, ए०	बुक ऑफ इण्डियन एराज	कलकत्ता	१८८३
कर्न, जे०एच० सी०	मैनुवल ऑफ इण्डियन बुद्धिज़म	स्ट्रासबर्ग	१८९६
कीथ, ए० बी०	बुद्धिष्ट फिलासफी इन इण्डिया ऐण्ड सीलोन	आक्सफर्ड	१९२३

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१	२	३	४
कीथ, ए० बी०	हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर	लन्दन	१९२०
कुमार स्वामी, ए० के०	हिस्ट्री ऑफ इण्डियन ऐण्ड इण्डोनेशियन आर्ट	न्यूयार्क	१९६५
कुमार स्वामी, ए० के०	यक्षाज भाग २	वाशिंगटन	१९३१
घोषाल, यू० यन०	ए हिस्ट्री ऑफ हिन्दू पोलिटिकल थियरीज	कलकत्ता	१९२३
घोषाल, यू० यन०	ए हिस्ट्री ऑफ इण्डियन पोलिटिकल आइडियाज	आक्सफर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस	१९५९ १९६०
चनन, डी० आर०	स्लेवरी इन ऐंशेण्ट इण्डिया	नई दिल्ली	
चाटोपाध्याय, एस०	अर्ली हिस्ट्री ऑफ नार्थ इण्डिया	कलकत्ता	१९५८
चेन, के० के० एस०	बुद्धिज्म इन चाइना	न्यूजेरसे	१९६४
जायसवाल, के० पी०	हिन्दू पॉलिटी	बंगलौर	१९४३
टॉलमी	ऐंशेण्ट इण्डिया	लन्दन	१८८५
डे, एन० एल०	ज्याग्राफिकल डिक्शनरी ऑफ ऐंशेण्ट ऐण्ड मेडिवल इण्डिया	लन्दन	१९२७
त्रिवेदी, एच० डी०	कैटालॉग ऑफ द क्वायन्स ऑफ द नाग किन्ग्स ऑफ पद्मावती		१९५७
दत्त, एन०	ऐसपेक्ट्स ऑफ महायान बुद्धिज्म	ल्यूजेक ऐण्ड कम्पनी	१९३०
दत्त, एन०	बुद्धिष्ट सेक्ट्स इन इण्डिया	कलकत्ता	प्रथम संस्करण
नारीमैन, जी० के०	लिटरेरी हिस्ट्री ऑफ संस्कृत बुद्धिज्म	बम्बई	१९२०
पाठक, वी० एन०	हिस्ट्री ऑफ कोशल	वाराणसी	१९६३

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१	२	३	४
पाण्डेय, आर० बी०	हिस्टारिकल ऐण्ड लिट-रेरी इन्सक्रिप्सन्स	बनारस	१९६२
पाण्डेय, आर० बी०	हिन्दू संस्कार	वाराणसी	१९६६
पुरी, बी० एन०	इण्डिया अन्डर द कुषाणाज	बम्बई	१९६५
पुरी, बी० एन०	इण्डिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई अर्ली ग्रीक राइटर्स	इलाहाबाद	१९३९
फ्रेन्कलिन एडगर्टन	बुद्धिष्ट हाइब्रिड संस्कृत	बनारस	१९५४
बुद्ध प्रकाश	इण्डिया ऐण्ड द वर्ल्ड	होशियारपुर	१९६४
ब्राउन, सी०जे०	क्वायन्स ऑफ इण्डिया	कलकत्ता	१९२२
बरुआ, बी० एम०	अशोक ऐण्ड हिज इन्सक्रिप्सन्स	कलकत्ता	१९४६
बेनी प्रसाद	थियरी ऑफ गवर्नमेण्ट इन ऐंशेण्ट इण्डिया	इलाहाबाद	१९२७
बेनी प्रसाद	द स्टेट इन ऐंशेण्ट इण्डिया	इलाहाबाद	१९२८
भट्टाचार्य, विनयतोष	द इण्डियन बुद्धिष्ट आइकनोग्राफी	कलकत्ता	१९५८
भण्डारकर, आर० जी०	शैविज़म, वैष्णविज़्म ऐण्ड माइनर रिलीजस सिस्टम्स	वाराणसी	१९६५
मजूमदार, आर० सी० ऐण्ड पुशालकर, ए० डी०	हिस्ट्री ऐण्ड कल्चर ऑफ इण्डियन पीपुल, जि० २	बम्बई	१९६०
मजूमदार, आर० सी०	द कलासिकल एकाउण्ट्स ऑफ इण्डिया	कलकत्ता	१९६०
मलाल शेखर, जी० पी०	डिक्शनरी ऑफ पालि प्रापर नेम्स (२ जिल्द)	लन्दन	१९६०
मार्शल, सर जॉन	द मानूमेण्ट ऑफ सांची	आर्क्योलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, ऐनुवल रिपोर्ट	१९१३-१४

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१	२	३	४
मिशेज राइज डेविड्स	आउट लाइन्स ऑफ बुद्धिज्म	लन्दन	१९३४
मित्रा, आर० एल०	संस्कृत बुद्धिष्ट लिटरेचर ऑफ नैपाल	कलकत्ता	१८८२
मुकर्जी, आर० के०	डेमोक्रेट्स ऑफ द ईष्ट	लन्दन	१९२३
मुकर्जी, आर० के०	चन्द्रगुप्त मौर्य ऐण्ड हिज टाइम्स	राज कमल	दिल्ली
मुकर्जी, आर० के०	गुप्ता एम्पायर	बम्बई	१९५०
मैकडोनल, ए० ए०	इण्डियॉज पाष्ट	वाराणसी	१९५६
मैकडोनल, ए० ए०	ए हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर	वाराणसी	१९६२
मैक्समूलर, एफ०	ए हिस्ट्री ऑफ ऐंशेण्ट संस्कृत लिटरेचर	लन्दन	१९६०
मोनियर विलियम्स	बुद्धिज्म	वाराणसी	१९६४
राइज डेविड्स, टी० डब्ल्यू०	बुद्धिष्ट इण्डिया	लन्दन	१९२६
राइज डेविड्स, टी० डब्ल्यू० ऐण्ड विलियम स्टीड	पालि इंग्लिश डिक्शनरी	लन्दन	१९५९
राय चौधरी, एच०सी०	पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ ऐंशेण्ट इण्डिया	कलकत्ता	१९५३
रैप्सन, ई०जे०	कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया जिल्द १	दिल्ली	१९६२
ला, बी० सी०	अश्वघोष	कलकत्ता	१९४६
ला, बी० सी०	ज्याग्राफी ऑफ अर्ली बुद्धिज्म	लन्दन	१९३२
ला, बी० सी०	ज्याग्राफिकल एसेज	लन्दन	१९३७
ला, बी० सी०	हिस्टारिकल ज्याग्राफी ऑफ ऐंशेण्ट इण्डिया	पेरिस	१९५४
ला, बी० सी०	सम क्षत्रिय ट्राइब्स इन ऐंशेण्ट इण्डिया	कलकत्ता	१९२४

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१	२	३	४
ला, बी० सी०	क्षत्रिय क्लेन्स इन बुद्धिष्ट इण्डिया	कलकत्ता	१९२२
ला, बी० सी०	बुद्धिष्टिक स्टडीज	कलकत्ता	१९३१
ला, एन० एन०	ऐसपेक्ट्स ऑफ ऐंशेण्ट इण्डियन पॉलिटी	आक्सफर्ड	१९२१
वाटर्स	ऑन युअन्च्वांग्स ट्रेवल्स इन इण्डिया	दिल्ली	१९६१
विन्टरनित्ज, एम०	हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटरेचर जि० २	कलकत्ता	१९६३
वोगेल	कैटालॉग ऑफ मथुरा म्यूजियम	इलाहाबाद	१९१०
शर्मा, आर० एस०	शूद्राज इन ऐंशेण्ट इण्डिया	दिल्ली	१९५८
शास्त्री, के० ए०एन०	सोरसेज ऑफ इण्डियन हिस्ट्री	मद्रास	१९६१
सरकार, डी० सी०	सेलेक्ट इन्सक्रिप्सन्स भाग १	कलकत्ता	१९४२
सरकार, डी० सी०	ज्याग्राफी ऑफ ऐंशेण्ट ऐण्ड मेडिवल इण्डिया	दिल्ली	१९६०
साहनी, डी० आर०	कैटालॉग ऑफ द म्यूजियम ऑफ आर्क्योलॉजी ऐट सारनाथ	कलकत्ता	१९५३
सिन्हा, बी० पी०	द डिक्लाइन ऑफ द किन्गडम ऑफ मगध	पटना	१९५४
सुजुकी, बीट्रिसलेन	महायान बुद्धिज्म	लन्दन	१९५९

ब—हिन्दी ग्रन्थ

अग्रवाल, वी० एस०	पाणिनिकालीन भारत	बनारस	सं० २०१२
अग्रवाल, वी० एस०	कला और संस्कृति	इलाहाबाद	१९५८
अग्रवाल, वी० एस०	भारतीय कला	वाराणसी	१९६६

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१	२	३	४
अवस्थी, ए० बी० एल०	यौधेयों का इतिहास	लखनऊ	१९६१
अवस्थी, ए० बी० एल०	प्राचीन भारत का भौगोलिक स्वरूप	लखनऊ	१९६४
अवस्थी, ए० बी० एल०	प्राचीन भारतीय भूगोल	लखनऊ	१९७२
आचार्य नरेन्द्र देव	बौद्ध धर्म दर्शन	पटना	१९५६
उपाध्याय, भरत सिंह	बुद्ध कालीन भारतीय भूगोल	प्रयाग	सं० २०१८
उपाध्याय, वासुदेव	भारतीय सिक्के	प्रयाग	सं० २००५
उपाध्याय, बलदेव	संस्कृत साहित्य का इतिहास	वाराणसी	पंचम संस्करण
जगदीश चन्द्र	कला के प्राण बुद्ध	मध्य प्रदेश शासन परिषद्	सं० २०१३
बाजपेयी, कृष्ण दत्त	ब्रज का इतिहास (प्रथम खण्ड)	मथुरा	सं० २०११
दत्ता और चाटोपाध्याय	भारतीय दर्शन	पटना	१९६४
दास, रायकृष्ण	भारत की चित्रकला	प्रयाग	सं० २००७
भदन्त आनन्द, कौसल्यायन	जातक ६ जिल्द	प्रयाग	सं० २०१३
भदन्त आनन्द, कौसल्यायन	भगवान बुद्ध और उनका धर्म (अनुवाद)	बम्बई	१९६१
भदन्त बोधानन्द	बौद्धचर्या पद्धति	लखनऊ	१९६२
मुकर्जी, आर० के०	हिन्दू सभ्यता	दिल्ली	१९५५
लाल, ए०	संस्कृत बौद्ध साहित्य में भारतीय जीवन	लखनऊ	१९६८
शास्त्री, हरिदत्त	महाकवि अश्वघोष	कानपुर	१९६३
शुक्ल, डी० एन०	भारतीय वास्तु शास्त्र	लखनऊ	१९५५

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१	२	३	४
सांकृत्यायन राहुल	ऋग्वैदिक आर्य	इलाहाबाद	१९५५
सांकृत्यायन, राहुल	बौद्ध संस्कृति	कलकत्ता	१९५२

५. शोध पत्रिकाएँ

क–अङ्ग्रेजी

आर्क्योलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, ऐनुवल रिपोर्ट
इण्डियन ऐण्टीक्वेरी
इण्डियन कल्चर
इण्डियन नेशनल बिब्लियोग्राफी
इण्डियन हिस्टारिकल क्वारटरली
एनाल्स ऑफ द भण्डारकर ओरेण्टल रिसर्च इन्सटीट्यूट
एपीग्राफिया इण्डिका
ऐंशेण्ट इण्डिया
जर्नल ऑफ इण्डियन हिस्ट्री
जर्नल ऑफ कलिंग हिस्टारिकल रिसर्च सोसाइटी
जर्नल ऑफ रायल एशियाटिक सोसाइटी
जर्नल ऑफ रायल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल
जर्नल ऑफ यू० पी० हिस्टारिकल सोसाइटी
डाइजेष्ट ऑफ इण्डोलाजिकल स्टडीज
द महाबोधि
प्रोसीडिन्ग्स ऑफ द इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस
बिब्लियोग्रेफे बुद्धिके
बुलेटिन ऑफ द कालेज ऑफ इण्डोलॉजी

ख–संस्कृत

सारस्वती सुषुमा — वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय

ग–हिन्दी

धर्मदूत — सारनाथ
भारती — वाराणसी

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

परिशिष्ट ३

शब्दानुक्रमणिका

अ

अंग जनपद १७
अंगनगर १४, ९७, ९९
अंग-राग ५९
अंजन ५९
अकुशल ९४
अकुशलकर्मों ९३
अकुशलमूलों ९४
अक्ष ६३
अक्षति ३७
अक्षमाला ५०
अंगिरा ८३
अग्नि ७९, ८१, ८३, ८९, ९०, ११६
अंगीठी ११६, १५५
अचलेन्द्र २३
अचिरावती २१, २४
अजन्ता १६५, १७३
अजरथकानि ११३
अजात शत्रु १६
अजिन ५७
अजिरावती २४
अटवी २५
अडोफवेली १७२
अण्डाकार १७३
अतिथि-पूजा ८०
अतिथि-सत्कार ४९
अतिथि-समाचार ८०
अत्रि मुनि १५७
अथर्ववेद १५६
अद्रिराज २४
अध्यात्म १६५
अध्यापन १५३, १५६
अध्ययन-अध्यापन १५६
अधिष्ठात्री देवी १६६
अनर्थ १५७
अनागामिफल ९४
अनाज १२०
अनात्म ९५
अनाथपिण्डिद १७२
अनिमित्त ९४
अनुचर १४१
अनुमरण ६४
अनुराग ८८
अनुरुद्ध ८८
अनुलेपन ११६, १५७, १५८
अनुलोमविवाह ५०
अन्तर्साक्ष्य ८
अन्तरिक्ष ८६
अन्धक १४
अन्धक-वृष्णी ५५, ६३
अन्त्यजों ३९
अन्तःपुर १३४

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार ११९, १२०
अपरगोदान १३
अपरगोदानीय १३
अपरगोयान १३
अपराधियों १३९
अप्रमाद ९१
अपानवायु १५७
अप्रणिहित ९४
अपुनर्जन्म ८४
अपौरुषेय ३८
अफगानिस्तान १६, ८५
अभयमुद्रा १६६
अभिधर्म पिटक १६
अभिषेक १३३, १४०
अमरकण्टक १६
अमरकोष ५
अमृतपद ८८
अम्बर ५६
अम्बा ८१
अमात्य ४१, १३०, १३४
अर्क १६७
अर्चा ८१
अर्थ-संचय ४६
अर्थासाधना ४६
अर्हत ९३
अर्हत-पद ९४
अर्हत्व ९४
अराजक १३१, १३५
अराड १५
अराडमुनि २३
अलिन १५
अलंकरण ६४, १२१, १६६
अलंकारों ११५
अल्पेच्छता ९१
अवन्ति-जनपद २३
अवलोकन १७१
अविद्या ८६, ९१
अशोक ३७, ५८, १६८
अशोकवन २५
अशोकावदान ८
अश्व २, ६१, ११२, ११३, ११८, १२१
अश्वघोष १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, १३, १४, ४३, ४५, ४९, ५०, ५४, ५६, ७८, ८०, ८१, ८२, ८३, ८४, ८५, ८६, ८७, ९०, ९१, ९५, ९६, ९७, ९९, ११५, ११९, १२१, १३०, १३६, १४०, १४१, १५१, १५२, १५३, १६५, १६७, १६८, १७१
अश्वघोषत्रयी १
अश्वजित ८८
अश्वरक्षक ११८
अश्वसेना १३६
अष्टकोणीय १६९
अष्टपद ६३
अष्टविघ्न कथा ४
अष्टांगिक ९३
अष्टांगिकमार्ग ४६, ९१, ९३, ९६,
अष्टादशश्रेणियों ११३
असि ११५
असित मुनि १५२
असी २४, २५
असी नदी २०
असुरों २३

State Museum Library Lucknow 7129

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अस्त्र-शस्त्र ५१, ११५, १३६, १३७
अस्थियां ५१, ८६
अस्थिरता ९०
आंगद ११६
आकाश ६३, ८६, ९०, ९६
आक्रमण ११८, १३५
आखेट ६१
आग १५४
आगम १५४
आचार १३१
आचार्य ८६, १५१, १५२
आचार्य नरेन्द्र देव ८७
आजीविका ९२
आज्ञा-व्याकरण ४४
आटविक-यक्ष १४
आठ स्तूप १७२
आढक १२०
आत्मतत्व ३६
आत्मदृष्टि ९३
आत्मा ३९, ९६
आत्मा-रहित ९५
आत्रेय १५६, १५७
आत्रेय ऋषि १५७
आर्थिक १५१
आर्थिकदशा १२२
आदमकद बोधिसत्व १६७
आदि कवि वाल्मीकि ७
आध्यात्मिक कल्याण ९४
आनन्द ५२
आपदजनों १३२
आभूषण ६४, ११२, ११५, १२१, १५५
आमोद-प्रमोद ३६, ५८, ६१, ६२, ११७, १५६, १७०
आम्र पाली २५
आम्र पाली उपवन २५
आम्र वन २५
आम्बिक ८२
आयुष्टोम ८०
आयुध १३७
आयुर्वेद १५३, १५७
आर० पी० चन्द ८२
आर० जी० भण्डारकर ८२
आर० सी० टेम्पलबर्ट ८
आरा ११२
आराम ९८
आर्य ३, ३८, ५५
आर्य-बल ९३, ९६
आर्यभाव १३१
आर्यशूर १५१
आर्य सुवर्णाक्षी ३
आर्यासंग ८७
आलेपन ६०, १५८
आवागमन १२१
आवास-प्रवास ८३
आविष्कार १५४
आश्रम ५७, ९७, १३२, १५१, १५२, १५३
आश्रय ९२
आश्रव ९६
आसक्ति ९१
आसन ८७, १५३
आसीन बुद्ध १६६
आहार-पदार्थ ५३
आहार-शुद्धि ८३

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

इ

इक्षु ५३, १११
इक्षु-रस ५५
इक्ष्वाकुवंशी १५१, १५२, १५३, १६९
इक्ष्वाकु वंशी राजकुमार १८
इन्जीनियर १६९, १७२
इतिहास १७१
इत्सिग ६
इत्र ११९
इन्द्र ७९, ८०, ८३, १६६, १७०
इन्द्रप्रस्थ १५
इन्द्रशिला गुहा २२
इन्द्रिय-निग्रह ८८
इरावती नदी २४
इलविल ८३
इलाहाबाद १८
इषिका ११५
इषु १३७
ईख १११
ईरानी १६६
ईशापुर ७९, ८०
ईश्वर ३९, ९५

उ

उँगलियों ११७
उजुपटिपन्न ४१
उज्जयनी ११९
उत्तम बीज ११०
उत्तम शैल २२
उत्तर ८८
उत्तर कुरू १४
उत्तर दिशा ८३
उत्तर प्रदेश २४, २५
उत्तर वैदिक कालीन ८०
उत्तराधिकार १३३
उत्तराधिकारियों १५१
उत्तरी भारत १७, ८६
उत्तरीय ११४
उत्सव ६१
उदयाचल २१
उदात्त ६१
उद्देशिक ८६
उद्यान ९७, ९८, १३२, १६८, १७१
उद्यान-भूमि ११०
उद्योग, ११३, ११७, १२८
उद्योग-धन्धों ११३, ११५
उपकरण १५४
उपचार १५७
उपज १३६
उपजाति १५४
उपतिष्य २५
उपदेशामृत १५८
उपदेशों १५८
उपधाओं १३५
उपनिषद-युग ३६
उप पुराण १५४
उपमाओं १५३, १५४
उपवन ९७, १३२, १७०
उपवास ४७
उपसेन ८८
उपस्थान ९३
उपांगों १५६
उपादान ३९, ९१
उपाधियां १३३

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

उपाली ३८, ८८
उपाध्याय १५२
उपाय १४०, १४१
उपेक्षा ९४
उपेन्द्र ८१, ८३
उरेल ग्राम १७
उर्द १११
उल्कामुख ११६, १५५
उल्टे कटोरे १७२
उषवदात ८४
उष्णीश १६६
ऊट ६१
ऊनी ५६
ऊष्ट ६१, ११२, १२१
ऊष्णता ९०
ऊर्ध्व वस्त्र ५६
ऊर्णा १६६

ऋ

ऋग्वेद ४४, ५५, ५९, १५६, १७०
ऋग्वेद संहिता १७०
ऋषि ४८
ऋषियों १९, ५०, १५२
ऋषि-मुनि ५७
ऋषि-मुनियों ४९
ऋतु नन्दी ११७

ए

एक जाति ४४
एक वर्ण ४४
एक तन्त्र राज्य १३०
एकाश्मक १६५
एकैवजातिर्लोकेऽस्मिन् ३८
ए० बी० कीथ ८
ए० वेबर ६
ए० एस० अल्टेकर ७९
एफ० डब्ल्यू० टॉमस ४
एगेसी लॉस १७२
एलगज ५१
एलापत्र १५
एलि १५, १६
एशिया १३

ओ

ओइसो ८१
औद्योगिक शिक्षा १५३
औरविल्व काश्यप २२
औषधियाँ १३७
औषधियों ५५, १५५, १५८
औंस १२०

क

कंकण ५९, ११५, १६६
कंकाली टीला १६७
कंधे १५७
कंस १६७
कंस-विकर्षिण ८१, ८२
ककुत्था २४
कच्चा सोना १५५
कच्चे घड़े ११३
कच्छ १४
कटाक्षों ११७
कटि प्रदेश १६८
कटिया ११५
कटियों ११७
कटि-सूत्र ५८

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

कड़वी १५८
कड़ाह ११५
कण १५५
कदफिंसेस ८१, १२०
कदम्बों २३
कनिष्क १, २, ३, ८, ९, ७८, ८१, ८४, ८५, ११४, १३०, १५७, १६६, १६७, १६८
कनिष्क प्रथम ८५
कनिष्क सम्बत ९८
कनिष्ठ अश्वघोष ८७
कन्द १५२
कन्दमूल ५४
कन्दर्प ८१
कन्हेरी १२०
कपाट १७१
कपिजलाद ५०
कपिल मुनि २३, १५३, १६९
कपिल मुनि गौतम ५७, १५१, १५२, १६९
कपिलवस्तु ८, २३, २६, ११७, ११९, १५३, १५५, १६९
कपिलवस्तु नगर १५५
कपिलाह्वयपुर १७
कफ १५२, १५७
कबूतर ६१
कमण्डलु १६७
कर्म ९२
कर्मार ८८
कम्पलकुरू ३९
कम्फिन ८८
कम्बोडिया १४
कर १३५
करणीयमेत्त सुत्त ४२
करधनी १६८
करुणा ८८
कर्णधार १२२
कर्ण फूल ५९
कर्ण शोभन ५७, ५९
कर्णोत्पल ५९
कर्ता ९५
कला १५५, १५६, १६५
कलाओं १५५, १५६
कला-केन्द्र १६७
कल्पना मण्डतिका ६
कवच ९३, ११५, १३७, १३८
कवि ११६, १५१, १५६, १५७
कसिया १९, २०
कांचन पर्वत २१
कांचन शैल शृंग २१
कांची-गुण ५९, ११५
कात्यायन ८८
कात्यानीपुत्र अर्हत ७
काप्य (योगी भिक्षु) ८८
काफिलों ११९
काम-इच्छा ९४
काम-तृष्णा ९१
काम-देव ८१
काम-राग ९४
काम-वासना ८७
काम-साधना ४६
काय-क्लेश ८९

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)
काय-सुख ८९
कायिक रोग १५७
कार्य-कुशलता १३१
कारावास १४०
कार्तिकेय ७९, ८१, १६७, १६८
कार्य कौशल्य १३१
कार्योत्सर्ग मुद्रा १६७
कार्ले १२०
कार्ष १२०
कालाम १५
काली गंगा २४
कालिदास ७, ५३, ५५,
काली ५०
कावेल ५
काव्य ८८, १५४
काव्यों ५०, १२०
काशिक वस्त्र ११४
काशी १५, ११४
काशी नगर १५
काशी नगरी २४
काश्मीर ७, ८५, ११९
काश्यप १९, ८३, ८७, ८८
काषाय ५२, ५७, ८९, ११४
काषाय-धारण ५२
काषाय वस्त्र ५७
कास्केट अभिलेख ८५
किन्नर १४, १५, २३
किन्नरियों २२
किरात १५, २३, ४५
किरातों १७
किरात जनपद १७
किसान ११०
कीथ (ए० बी०) २, ६
कुएँ १११, १७०
कुकु २४
कुक्कुट पक्षी ८
कुगृह १७१
कुटुम्बी-जनों ११८
कुटुम्बिनी ५०, ५१
कुटी ग्राम १९
कुठार ११५
कुण्डल ५८, ५९
कुण्डलवन विहार ८५
कुत्ते ११५, १५५
कुत्तों १३९
कुदेश ३६
कुमार जीव १, ६, ७
कुमार भट्टी ११७
कुमार सिद्धार्थ १३३
कुमुदवती ५०
कुम्भकार ११३
कुरंम ८५
कुरू १४, १५
कुल क्रमात १३३
कुरु वंशी १५
कुलीनता १३१
कुलथी १११
कुल्माष १११
कुल्हाड़ी ११३, ११५
कुवेर ८१, १६५, १६६
कुशल कर्मों ९३
कुश ११०

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

कुशा ९६
कुशाम्ब नगर १८
कुशी नगर १६, २४
कुशीनारा १६, १९, २६, १३७, १४०
कुषाण ५७, ८१
कुषाण-काल ६०, ८४, १२०
कुषाण कालीन ६०, ११६
कुषाण कालीन लेखों ३६
कुषाण-युग ९, ६१, १५३, १५५
कुषाण सम्राट् कनिष्क ८, ८१, ८४, ८६, ११९, १६५, १६६, १६७
कुषाण सम्राटों ७९, १३३
कुषाण सम्बत ८४, ११३, १६७
कुषाण साम्राज्यवाद १३०
कुष्ठधान (भिक्षु) ८८
कूटदत्त ब्राह्मण २१
कूप ९७, १११, १३२, १७०
कूप-निर्माण १११
कृत शास्त्र १५४
कृतास्त्र १५४
कृषपाण्डुगात्र १५७
कृषि ११२
कृमिल ८८
कृषि-कर्म ११०
कृषि-महोत्सव ४०
कृषिकर्मान्त ११०
कृषिकार्य ११०, १११, ११२, ११५
कृष्ण १६, १६७
केदार २४
केयूर ५८, ११५, ११६
केश ५२, ८६, ८९, ९५
केश-मुण्डन ५२
केश-विच्छेदन ५२
केश-विन्यास ५९
केश-प्रसाधन ५९
केश-शृंगार ५९, ६०
केसपुत्त १५
केस मित्त सुत्त १५
कैलास १६५
कोकिल ४३
कोट १६८
कोटा राज्य ७९
कोटिकर्ण ८८
कोटियां १३४
कोड़ा ९६
कोथाकारिक १३५
कोश १३७
कोशल १५, २१
कोशम्बपुर कुटी ८६
कोषागार २१
कोष १३५
कोषाध्यक्ष १३५
कोष्ठागारिक १३५
कोसम ग्राम १८
कौटिल्य १२१, १३४, १७१
कौण्डिन्य ८८
कौन्देय ८८
कौपीन ५७, ५८
कौरव ६३
कौवों १५५
कौशाम्बी ११९, १६७
कौशिक कुटुम्ब ९८

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

कौष्ठिल ८८
क्रियावान १३१
क्रीडनक १६९
क्रीडनम् ११३
क्रीडा ११७
क्रीडोद्यान १६९,१७०
खल्कि ६३
खान पान ३६
खानों ११५,१५५
खिलौने ११३,१६९
खेतिहर भूमि ११०
खोतान १३

ग

गंगा १८,१९,२४,३८,४३
गंगा नदी १९
गट्ठा ५४
गण उद्योग ११०
गणतन्त्र १३०
गणतन्त्रात्मक ४०
गण दक्षिणा १५१,१५२
गण पद्धति ३८
गणराज्य १५,२६'४०,१३०
गणराज्य परम्परा ४०
गण परिषद १३०
गणिकाएँ ११८
गणिका विथि ६३
गण्डी स्त्रोत्र ४,६
गण्डीस्त्रोत्र गाथा ४
गढ़वाल २४
गन्धार १४,१५,२०,७८,१५५,१६५,
१६६
ग० प्रज्ञानन्द ६
गय काश्यप २२
गय शीर्ष २२
गया २२,२४
गर्भगृह ६४
गर्दभ ४३
गर्दभपुत्र २३
गरुड़ध्वज ८२
ग्राम १३,४२,१३५
ग्रेन १२०
गवाक्ष १७८
गाड़ी १११,११३
गान्धार कला १६५,१६६,१६७
गान्धार क्षेत्र १६५
गान्धिक ११६,११७
गाय ४३,११२
गायों ५५,११०,११२
गायिकायें १५३
गांव ८४
गिरनार की पहाड़ियों १११
गिरनार शिलाभिलेख १११
गिरत्या ११७
गिरत्यायसं ११५
गीत ६१
गीत मंडली ६२
ग्रीकों १६६
गुप्तकालीन १५२
गुप्तचरों १४०
गुप्तसम्राट् ७८
गुफाओं १६९
गुफाभिलेख ११२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

गुम्बद १७२
गुम्बदीय १७३
गुरु ९४,१५२,१५३
गुरुकुल ४६
गुरुजन १५३
गुरुजनों ४८
गुरुता १५२
गुरु दक्षिणा १५१,१५३
गुरु दर्शन १५३
गुहाओं १७१
गृद्धकूटपर्वत २२,४८
गृहस्थ ४५
गृहस्थाश्रम ४६
गृहस्वामिनी ५१
गृह विहारों १७३
गेहूँ १११
गैंड़ा ४३
गोद्धिक ११५
गोत्र १५३
गोद १३९,१६६
गोदन्त ८८
गोदावरी ३८
गोधूम १११
गोरथकानि ११३
गोप ११२
गोपस्त्रियाँ ५७
गोशीर्षचन्दन १६८
गौतम गोत्र १५३
गौतम द्वार १७१

घ

घटक १२०
घड़े ६१,१७२
घरेलू उपकरण १५५
घाव १५८
घावों १५७
घी ५३
घृत ५१
घोड़ा ३,४३
घोड़े ११२,११५,१५५,१६९
घोड़ों १३६,१३७
घोसुण्डी ८२

च

चकलादार ६४
चक्रवर्ती १६६
चक्रवर्ती राज्य १३०
चकवर्ती सम्राट् १३०,१३३
चक्रधर तपस्वी ११०
चंचल चित्त ८७
चण्ड ९८
चण्डाल ४१
चतुर्थ बौद्ध संगीति ८५,८६
चतुर्थध्यान ४१
चतुर्द्वीपा १३
चतुर्बाहु १६७
चतुर्भजी मूर्तियाँ १६७
चतुरंग बल १३६
चतुरंगिणी सेना १३६
चन्दन ५१,११६,११९,१५२,१५५
चन्द्र १६५,१६७
चन्द्र देवता १६६
चन्द्रगुप्त मौर्य १७१
चन्द्रमा १३०

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

चमू १३६
चम्पक ४३
चम्बल २२
चरक १५१,१५७
चरक संहिता १५७
चर व्यवस्था १४०
चर कार्य १४०
चरम सीमाओं ९०
चहार दिवार १३५,१७०
चांदक ६२
चांदी ११३,१२०,१२२
चाचा ४८
चाची ४८
चाणक्य १३९
चातुर्वर्ण व्यवस्था ३८
चाप १३७
चामरग्राही १६६
चार आर्यसत्य ९०
चार उपाय १४०
चारण २३
चारध्यान ९३,९४
चिकित्सा १५३,१५६,१५८
चिकित्सा शास्त्र १५६,१५८
चिकित्सकों १५८
चिता १७३
चित्रांकन १५३,१५५,१६५
चितावशेष १७३
चिन्तन स्वातंत्र्य ३९
चित्रकला ११४,१५५,१६५
चित्रकार ११४,१५५,१६५
चित्रकूट २४
चित्रवन २५
चित्रलेखन १७३
चिलिंगुलिक ६३
चीन १४,११९,१२२
चीनी २
चीनी भाषा ३
चुनार ८६
चुनार सैण्डस्टोन ८६
चुन्द ८८
चूर्ण ११६
चैत्य ८६,१६९,१७१,१७३
चैत्यों २५,५१,१७३
चैत्सिक १५८
चैत्ररथवन २५,२६
चोटियाँ २२
चोरी ३६,६३,९२
चोली ११४
चौकियों १६०
चौड़ी खाई १७०
चौड़ी परिखा १३५
चौमुखी मूर्तियाँ १६७

छ

छड़गांव १६८
छन्द ४
छन्दशास्त्र १५४
छन्न ३९
छात्र १५३
छायामंडल १६६
छोटीगंडक २५

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

ज

जटा ५९
जन १४१
जनक ३८
जनकल्याण १५८
जनतंत्रात्मक ३८
जनपदों १३,४३
जन्म ९१
जनमेजय ८३
जन्मोत्सव १३९
जनरल कनिंघम २२,२४
जप ४७,४९
जम्बुक ३९
जम्बू द्वीप १३
जयभट्टि ११५
जरा मरण ९१
जलयान १२१
जलयानों ११९
जलवेग ९९
जल यात्रा १२२
जलाशय १३२,१६९
जलाशयों १७०
जलाहारी ५३
जवाहरात ११९
जह्नु ८३
जहाज ११९,१२१
जागरण १५८
जातक अट्ठकथा ३६
जातकमाला ३६
जातकों ६
जाति ९१
जातियों २३
जानपद १३१
जान्सटन ५,६
जाल ५४,११७
जाह्नवी २४
ज्येष्ठभाई १३३
ज्योतिष १५४,१५६
ज्योतिषियों ४९
ज्योतिष्टोम ८०
ज्योतिष शास्त्र १५४
ज्योतिषशास्त्री १५४
जितमित्रा ११७
जिनदासी ११७
जीवक २५
जीवनदान १३९
जीवलोक ४७
जी० के० नारीमेन २,८
जेतवन २५,२६,१७२
जेदा स्तम्भ अभिलेख ८५
जैन आयोग ४५
जैनतीर्थंकर १६७
जैनधर्म ९९
जौ (यव) १११
जौ की रोटियां १२०

झ

झब्बा ६०
झरनों २३
झरोखे १७१
झांझ ६१
झूला ६२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

ञ

ञायपटिपन्न ४१

ट

टॉलमी ११९

टोपी ५६

ठ

ठगों ११९

ड

डॉ० अग्रवाल १६५,१६६

डॉ० ए० एस० अल्टेकर ८७

डॉ० भंडारकर २२

डॉ० राजेन्द्र लाल मित्रा २२

डॉ० बी० एन० पुरी १५७

डॉ० कुमार स्वामी ९०

डॉ० पुरी १६६

डॉ० वोगेल ९८

डे महोदय १५,२२

डेरा १७२

डोम कुल ३९

ढ

ढक्कन १६६

त

तण्हा ९१

तथाकथित ३९

तथागत २०,२४,४३,५१,५३,६४,८६
९०,९६,११७,१४०,१५८,१६८, १७२

तथागत बुद्ध ५२

तंत्रों-मंत्रों ६३

तंत्रवादी क्रांति ३९

तंत्र-मंत्र ९७

तप ४७,८९,१३२

तपस्वी ८३

तपश्चर्या ८३

तरकस ११५

तृष्णा ९०,९१,९७

तर्क ९४

तलवार ५२,६३,११५,१३६

तलवारें १३७,१३९

त्वचा ९३,९५

तक्षशिला १७२

ताम्र मंजूषा १६६

ताम्रशैली १६६

ताम्रसिक्कों १६६

तांबा ११९

तांबे १२०,१२२

तारानाथ ३

ताल १५३

तालाब ५४,११७

ताल जाङ्घा ८३

ताली ६१

तिब्बती २

तिर्यक्षु ८१

तृतीयफल ९४

तृतीयध्यान ९४

तिल १११

तिष्य ८८

तीर्थ ८२

तीर्थकों २१

तीर्थम्बु ७९

तीर्थों ७९

तीन विमोक्ष ९४

तीनों काश्यप भाइयों २२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

तीर १३७
तूफान १११
तूर्य ६२
तूलिका १६५
तेल ९६
तोरण ९९
तोरण द्वारों ८६
तोरणों १७१
तौल-नाप १२०
तौलिहवा गांव २३

थ

थूप १७२

द

दक्षिण बंगाल १७
दक्षिणी अवन्ति जनपद १९
दण्ड ९८,१३०,१३२,१३९,१४०
१४१
दन्डक १६
दण्डका रण्य १६
दण्डनीति १३०
दण्डीगुरू ३६
दण्डी १४०
दण्डप्रधान १३९
दण्डव्यवस्था १४१
दण्डमुक्त १३९
दमनशक्ति १३१
द्रव्य ८८
द्रवता ९०
दवायें १८८
दर्शक १६५
दर्पण ५९
दर्शन १५१
दशरथ सुत ८२
दशकुशलकर्मपथनिर्देश ४
दश दुष्ट कर्म मार्ग सूत्र ४
दसपद ६३
दस स्तूप ५१
दही ९१
दाँत ११९
दाईं करवट ८८
दान ४७,११९,१२०,१४०
दान प्रदाता १३२
दामाद ८४
दारकाचार्य १५२
द्वाराध्यक्ष ११८,१३५
द्वारपाल ११८
दार्शनिक १५१
दार्शनिकों ३६,१५८
दासियां १३४
दासक ३९
दासीपुत्र ३९
दाह कर्म ५१
दाह स्थान ५१
दक्षिण दिशा ८३
दक्षिण विहार १६
दधिकर्ण ९८,१६८
दिगम्बरत्व १६७
दिग्नाग ८७
दिन ८९
दिव्य १६६
दिव्यावदान १५,२१,४३,४४,११३
११७,११८
द्वितीयफल ९४
दियट १७१

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

दिल्ली १५
द्विज ४५
द्विरद ६१
दिशा ९६
दिशाओं ८८
दीघ निकाय ६०,६१
दीपक ८६,१५४
दीन दुखियों १३९
द्वीप द्वीपान्तर १३,१४
दीक्षा ५२
दीक्षापद्धति ५२
दीक्षा स्थल ५२
दीक्षार्थी ५२
दीक्षा योग्य पात्र ५२
दुकानदार ११७
दुःख आर्य सत्य ९०
दुःख निरोध ९१
दुःख निरोध आर्यसत्य ९१
दूःख निरोध गामिनी प्रतिपदा ९१
दुन्दुभी ६२
दुपट्टा ५७,११४
दुर्गा १६७
दूर्गों १७०
दूत व्यवस्था १४०
दूध ५३,५५,९१
देवताओं ४९,८२,१६५,१६७
देवता चुल्ल कोक्का ६४
देवत्व १३१
देवी देवताओं ८१
देव नामक स्वर्णकार ११६
देवायतन ७९,१३२,१६५
देववाद ३८
देवरिया १६,१९
देवकोष्ठ १६५
देवालय ९७,१७३
देवदत्त २०,२२,२६
देवप्रासाद १७१
देवमंदिर १३२
देवी १३४
देवयज्ञ ४९,८०
देश ११०
देश रक्षण १३१
देशों १३
द्वेष ९४
दैवी उत्पत्ति १३०
दैवीरूप ८५
दैवी स्वरूप १३३
द्वैपायन ५०,८३
दैहिक १५८
दोला ६२
द्रोण १२०,१३७,१४०
द्रोणल ७९
दौत्यकार्य १४०
दौवारिक ११८

ध

धनरक्षा ९०
धनदौलत १३८
धनधान्य १६६
धनिया ३९
धनुष १३६,१३७
धनुष बाण १३७
धनोपार्जन १२३
धम्म ४१
धम्म श्री १४

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

धमेक स्तूप १७३
ध्यानयोग ८८
ध्यानमुद्रा १६६
ध्यानावस्था १६६
धर्म ४६,१३२
धर्मात्मा ४६
धर्म उत्पादन ८९
धर्मघोष २
धर्मचक्रप्रवर्तनसूत्र ९१
धर्मचर्या १३२
धर्मार्जन ४६
धर्म दीक्षा १७२
धर्मपत्नी ५०
धर्मपालन १३३
धर्म परिवर्तन ८४
धर्मपिटक ३
धर्मराज ३९,४०,१३०
धर्मराज्य ३७,४०,१३०
धर्म राजिका १७२
धर्मराज्य स्थापना ४०
धर्म साधना ४७
धर्म शालायें १६९,१७०
धार्मिक क्रांति ४०
धर्मिकोधर्मराजा ४१
धार्मिक सहिष्णुता ७८
धातु १४०
धातुओं १५४,१७२
धातु मंजूषा १६८
धातु स्तूपों २०
धात्री ११८
धात्रियों ११८
धुरी ९६
धृति ९४
धृतातपत्र १३३
धोती ५६,११४
नक्षत्रों १३०
नख ८६
नगर ११८,१३५,१३७,१६९,१७०
नगर द्वारों १६८
नगर निर्माण १५५,१६९
नगर नियोजन १७३
नगरों १३,४२,१६९
नदियाँ १२१
नदियों २३,५४,९३
नदी १११,१३५,१७०,१७३
नदीकाश्यप २२
नथनी १५५
नन्द २०,५२,५८,५९,६०,८८,११८,१५२,१५५,१५८,१६५,१६९
नन्दक ८८
नन्दमाता ८८
नन्दनवन २६
नन्दी ८१,१६७
नमक ५४,१२९
नय १३०,१४०
नरपति १३३
नरदेव १३३
नराधिप १३३
नरेन्द्र १३३
नर्क ८१,८९,९७
नर्मदानदी १९
नलगिरि ४८
नवराजगृह २२
नश्वरता ९२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

नहपान ८४
नहरें १११
नहुष ८३
नाई ११४
नागकेसर ४३
नागक्षत्र ९८
नाग ९७,९८,१६८
नागों १७२
नागदत्त ९७
नागद्वार ८७
नागदेवता १६८
नागपूजा ९७,९८,०९
नागप्रतिमा ९८
नागमूर्ति १६८
नागरिकों १३५
नागसम्प्रदाय ९७
नागार्जुन ७१,९५,१५१
नागसेन ९६
नागिल ९७
नाटक ६१,१५१
नापित ११४
नापितपुत्र ३८,४१
नापित पुत्र उपाली ४१
नामकरण ४९
नामकरण संस्कार ४९
नामरूप ९१
नारायण १६५,१६७
नारीचित्र ११४,१५५
नारी साथिनी ५१
नारी सेविकायें ६०,११७,११८
नाव १२१,१२२
नावें ११३
नासाग्र दृष्टि १६६
नासिक १२०
निगम १३५
निग्रह ९२
निद्रा ८९
नियम १४१
नियुक्ति १३५,१४०
नियोजन १६९
निरंजना २४
निर्यात ११८
निर्यातस्थान ११८
निर्वाण ३६,४७,८६,९३,९४,९५,९६,९७
निर्वाणधर्म २२
निःशब्द ८७
नीति ४१,१३१,१३२,१३५,१३९
नीति कौशल्य १३१
नीतिबल १३३
नीतिशास्त्र १३०,१५४
नीतिशास्त्रज्ञ १३५
नील ११४
नीलवस्त्रों ११४
नीला ११४
नीले १५५
नीवार ५३,१११
नूपुर ५०
नृत्य ५५,६१,११८,१५६
नृत्यकायें ११८
नृदेव १३३
नृप १३३

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

नृपति १३३
नृपश्री १३३
नेपाल ३,१५,२३
नैतिक १५१
नैयायिक मुक्ति ८६
नैष्ठिक कल्याण १५१
नौगढ़ २३
न्यग्रोध वन २६
न्याय १४१
न्याय व्यवस्था १३९

प

पंगचिर ६३
पंचमहायज्ञों ४९, ८०
पंचवर्गीय भिक्षुओं ८९
पंचवीराणाम् ८२
पंचशील ३९
पंचाचलाक नगर २०
पंचानन १६७
पंचशिख २३
पंजर ६१
पकजनपद १६
पक्थ १६
पक्के घड़ों ११३
पक्षियों ८३
पगड़ी ११४
पच्चिक १६६
पटका १६८
पटना ३
पट्टा (व्यंजन) ११८
पट्टिका १५२
पणव ६१, १५३
पडरौना १९
पण्य ११९
पति १५५
पति-पत्नी ४६, ५९
पत्नी ८४, ५१, ११९
पताका ९६, १७०, १७२
पतंजलि ५१, ८१
पथ ६३, १५१
पथिक १७२
पदत्राण ५७
पद्मराग ११४, १५५
पद्मासन १६६, १६७
पद्मासीन बुद्ध १६६
पदाति १३६
पदाति सेना १३६
पदोन्नति १४०
पद्य १५४, १५६
पनशाले १३२
पत्ताल्हक ६३
परलोक ९७
पर्यंक आसन २२
पर्वत ९३, १३५
पराभवसुत्त ४०
परासर ८३
प्राचीर १७०
प्रान्त १११
प्रान्तीय शासक १११
प्रागैतिहासिक युगों १७०
प्रकरण ६
प्राण वायु १५७
प्राणि हिंसा ३६

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

प्रजा १३१, १३४, १३५, १३६, १३९
प्रजापति ८१
प्रजा रंजन १३१, १३३
प्रजापति कुवेर १६७
पर्दा प्रथा ६३, ६४
प्रतिनिधि चिकित्सक १५७
प्रति हिंसा ९४
प्रतियोगिता ६१
प्रतिकृति ८१
प्रति लोम विवाह ५०
प्रतिमा ११४, १६६, १७३
प्रतिमास्थापन ११६
प्रतिज्ञा १३१
प्रत्यक्ष परीक्षा १५१
प्रतीत्यसमुत्पाद ९०, ९१, ९५
प्रतीकात्मक ८६
प्रतीक नाटक ६
प्रथम बौद्ध संगीत ४१
प्रथम ध्यान ९४
पृथ्वी १३, ८३, ८६, ९६, १३२, १३३, १३४
पृथ्वीतल १३
प्रदीप ९६, १२१, १३२
प्रदेशीय संग्रहालय लखनऊ १६८
प्रधान ११३
प्रबन्ध काव्य १५१
प्रभास ८५
प्रवेशद्वार ११८
प्रसवन ४९
प्रस्थ १२०
प्रसेनजित ४९
प्रस्तर अभिलेखों १७३
प्रशिक्षण १५४, १५५, १५६
प्रशिक्षित १५६
प्रज्ञा ९१
प्रज्ञा मार्ग ९१
प्रज्ञा सम्बन्धी मार्ग ९१
प्रासाद रक्षा ११८
परिहार ६३
परिजनों ४१
परिनिर्वाण ४
परिखा १८, १७०
पलाशनी १११
पलंग १७१
प्लान १६९
प्लाश ४३
पवन ९०
पश्चिमी भारत २६, ८२
पश्चिमी विद्वान १६५
पशु-मांस ५४
पशु-योनि ९७
पशुओं ११२, १६५
पशु-पालन ११०, १११
पशु-पक्षियों ११७
पहाड़ पुर ५९
पहिये ९६
पत्रांगुलि ६०
पांचस्कन्धों ९६
पाटलिपुत्र ८, २५, १७१, १७३
पाटलिपुत्र-चैत्य १७३
पाटलिपुत्र-दुर्ग ४१
पाठ्यविषय १५६
पाण्डु ८३
पाण्डु लिपि ५, ६

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

पाण्डवपर्वत २२, २६
पाणिनि ८०, ८१, १७३
पाताल १३, ३८
पारिवारिक सेवा ११७
पानगोष्ठी ५५
पानगोष्ठियाँ १६७
पार्वती १६७
पारलौकिक ३६
पारमिता समास ३
पार्श्व ३, ४
पारसीक ६८
पारायण ब्राह्मण २२
पारावत ४३, ६१
पार्थिव १३३
पार्थिववान १३३
पारिपात्र १६, २२
पारिभोगिक ८६
पालन १३१
पालकी ११३
पालि ११३
पालिसाहित्य २२
पालि भाषा १७२
पावा १६
पावा के मल्ल १६
पावापुर १६, २४
पाषाण पर्वत २२
पिंगल ९८
पिंजड़े ६१
पिण्डपात्र ८, ८६, १७२
पिटकों ८५
पित्त ९३, १५७
पित्तदाह १५७
पित्त ज्वर १५७, १५८
पितरों ८०
पिसल लोग १६
पिशिनघाटी २२
पितृऋण ४६, ४८
पितृ लोक ८१
पिता १३९
पितामह ४८
पितामही ४८
पीत १५५, १५७
पीत वस्त्रों ११४
पीब ९३
प्रीतिसुख ९०
पुण्यतीर्थ ८४
पुण्यशाला ८४
पुण्य यश ३, ४
पुक्कुस ४१
पुतलियाँ ११३
पुर १३०, १३२
पुर आयसी १७०
पुरन्दर ८१, १३७
पुराणों ६, १३, ८४, १२०
पुरूवा ८३
पुरुषपुर १७२
पुरूष सूक्त ४४, ४५
पुरूष सेवाएँ ११२
पुरुषार्थ व्यवस्था ४६
पुरोहित १३४
पुरोहितों ८०
पुष्करणी १३२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

पुष्कर १५
पुष्पवृष्टि १६६
पुत्र-पौत्र १६६
पुत्री १५५
पुत्रों ११३
पूण्यादित्य २
पूण्यश्री २
पूर्ण ८२
पूर्णांक ८८
पूर्णभद्रयक्ष १७, ९९
पूजा-पाठों ४७, ९७
पूर्वजों १५१
पूर्व देवा ८३
पूर्वी भारत ८, ८२
पेय ५३
पेरीप्लस ११९
प्रेत लोक ८१
पेशावर १५, १७२
पैदल ९५
पैसुनी २४
पोखर ९७
पोटनायस ९८
प्रो० स्टेनक्नो ८४
पौण्ड १२०
पौर १३५
पौरजन १३५
पौत्र ४८

फ

फर्रुखाबाद २१
फल-फूल ५४
फल-फूलों १५२
फलगू नदी २४
फलाहारी ५३
फारस १२१
फाहियान २२
फोड़ों १५७

ब

बंगाल ५९
बंशी ६१
बंकक ६३
बकरों के युद्ध ६१
बछड़े ५५, ११२, १६९
बांट १२०
बांध (सेतु) १११
बांबीं ८३
बढ्ढकी ११३
बढ़ई ११३
बन्दरगाह २१, १२१
बन्दियों १४०
बन्धु-बान्धवों १३२
बनर्जी (सर्वानन्द) ५
बनारस ३
बहुजन हिताय ३६
बहुजन सुखाय ३६
बहु विवाह ५०
व्यवसाय १२२
व्यापार ९२, १२२
व्यापारिकनगर २१
बर्छी-बर्छियाँ १३७, १३८
ब्रह्मा १६५, १६६, १६७, १६८
ब्रह्मचर्य ४५, ४६, १५२
ब्रह्मवादी ब्राह्मण १५२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

ब्रह्मवाद १५२
ब्रह्मयोनि २२
ब्रह्मायु २०
ब्रह्मचिन्तन ८२
ब्रह्म यज्ञ ८०
ब्रह्मजाल सुत्त ६१
बल ८६, १३०, १३६
बलि १३६
बलराम ८१, ८२, १६७, १६८
बलरामपुर २६
बांका तहसील २२
बाघ २३
बाज १४७
बाजा ६१
बाण ११४, १२६, १५८
बानर ४३
बारात ५१
ब्राह्मण ब्राह्मणों ४०, ४३, ४४, ६७, ७२, ८४, १२०, १३४
ब्राह्मण धर्म ३९, ७८, ८४, ८५, ८८, ८२, ९०
ब्राह्मणक्षत्रिय संघर्ष ३८
ब्राह्मण ऋषि ५६
ब्राह्मी अभिलेख ११६
बालक सिद्धार्थ १५२
बालमीकि ८३
बालमीकि रामायण ८
बाष्प ८८
बिम्बिसार १६, २६, ४९
बिहार प्रदेश १९
ब्रिटिश संग्रहालय ५७, ५८, १२०
बीज १११
बीज वपन ११०
बी० एम० बरुआ १३
बीर योद्धा १३६
बी० सी० ला १२
बुद्ध २२, ४१, ४२, ८६, १५१, १६७, १६८
बुद्ध अस्थियाँ ८, ४१
बुद्ध क्रान्ति ४७
बुद्धगया २२
बुद्धघोष १७१
बुद्ध चरित १, २, ३, ५, ६, ७, १४, १५, १६, ४८, ५२, ६२, ६४, ८०, ८८, ९७, ९९, १२०, १२१, १४७, १५३
ब्रुद्ध चरित काव्य ४
बुद्ध चरित महाकाव्य ४
बुद्ध तन्त्र ४७
बुद्ध धातु १६
बुद्ध यान ३७
बुद्ध प्रतिमा १६५, १६७
बुद्ध विहार २५, ५२
बुद्ध भगवान १५२
बुद्ध मूर्ति ८७, १६५, १६६
बुद्ध युगपुरुष ३७
बुद्ध वाणी ९०
बुद्ध शिक्षा ३
बुद्ध शिष्यों ८७
बुद्ध ज्ञान ३७
बुनकर ११३
बुनकर उद्योग ११४

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

बुन्देल खन्ड १६
बूलर महोदय ५१
वृषभ-युद्ध ६७
बेतवा २२
बैल ११२
बैलगाड़ी १२१
बैलों ११०, १११, ११२, १२१, १७३
बोध गया १७
बोधि अंग ९३
बोधि वृक्ष ८३, ८४, १७२
बोधिसत्व ८३, ८६, ९९, ११४, १३६, १६७
बोधिसत्व, अश्वघोष १, २, ७, १५
बोधिसत्व सिद्धार्थ १६६
बौद्ध कला १७२
बौद्धचर्या ४३
बौद्धाचार्य १, ८९, ९०, १५६, १६५
बौद्धाचार्य अश्वघोष ५२
बौद्ध दीक्षा पद्धति ५२
बौद्ध देबी १६७
बौद्ध विहार ९८
बौद्ध भिक्षुओं ३, ५६
बौद्ध युग १३
बौद्ध वास्तु कला १७१
बौद्ध संघ १५२
बौद्ध संस्कृति १७२
बौद्धिक साहित्य ३८, १६७, १६८

भ

भक्ति ८१
भक्ति भावना ८५
भगवत वासुदेव ८२
भगवान बुद्ध १८, २५, ९१, १५५
भगवान गौत्तम बुद्ध १७१
भग्ग १६
भड़ौच ११९, १२१
भदन्त ४
भदन्त अश्वघोष ८०
भद्दालि ८८
भद्र १९
भद्र नगर १८
भद्रजित ८८
भद्रायण ८८
भरहुत मूर्ति कला ६४
भरहुत ९९, १२०, १६५
भर्ग १६
भव ९१
भवन १५५
भवतृष्णा ९१
भवन निर्माण १५५, १६९, १७१
भवानी ८१
भागल पुर २२, २३
भागवत ८२
भागवत धर्म २५
भागीरथी २५
भारत ३८, ११९, १५६
भारद्वाज गोत्रीय ७९
भारतीय १११
भारतीय औषधियों १५७
भारत वर्ष ५९
भारिया ५०
भार्या ५०, ५९
भाला ११५, १३८

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

भाष्यकार पतंजलि ८१, १४१
भित्ति चित्रों १६५
भिषक् १५८
भिक्षाटन ५८
भिक्षापात्र ८९
भिक्षु १७२
भिक्षु संघ २५
भिक्षुओं ५२, ८९, ११४, १७१
भिक्षुवल ८५, ८६, ११४
भिक्षु-भिक्षुणियों ८८
भिक्षु नागसेन ९५
भिक्षु उपतिष्य १७२
भिक्षुचर्या १५२
भीमक ८२
भुजंग ११७
भू १३
भूत-प्रेतों ३८, ६३
भूप १३३
भूपति ४
भूमि पति १३३
भूमिपाल १३३
भूमिप १३३
भूमि १३५
भूमिकर १३६
भृगु ८८, १३०
भृगुकच्छ १४
भृतृहरि १६५
भृत्य १३६, १४१
भेंट १३८
भैंस (महिषी) ४३, ११२
भोग ८९
भोगाचार १५२
भोजन १२०, १५७
भोज्य सामग्री १२०
भोमुक ९८
भोजों १४
भौहों ८७

म

मंगल कर्मों ९७, १३२
मंजीरा ६१
मंजुघोष १५६
मंत्र ४१
मंत्र बद्ध ११७
मंत्रणा १३३
मंत्रधर १३४
मंत्राधिकृत १३४
मंत्रिमंडल १३४, १३५
मंत्रियों १३४
मंत्रिपद १३५
मंत्री १३४
मंत्रीपुत्र १३३
मंत्रों ११७, १५८
मकन्द ऋषि १९
मगध जनपद २०
मगधाधिप सम्राट् अजातशत्रु ४१
मछली ११५
मछलियां ५४, ११७
मछुवे लोग ५४, ११७
मणिदीयमहाकांरुणिकदेवपंचस्तोत्र ४
मणिकार ११५, ११६
मणि १२१
मणियों १३७, १५२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

मणिमुक्ता ५९
मतिसचिव १३४
मथुरा २१, ५३, ६२, ७८, ८४, ११५, ११६, ११९, १२०, १६७, १६८
मथुरा अभिलेख ८२
मथुरा कैटालॉग १६७
मथुरा-केन्द्र १६७
मथुरा कला केन्द्र ५७
मथुरा कला १५५, १६६, १६८
मथुरा संग्रहालय ५६, ५८, ९८, ११४, १६८
मद्यपान १४, ८९
मद्य १४
मध्य प्रदेश १, २२, २३
मध्यम मार्ग ९०
मध्य एशिया ६, १४
मध्यस्थता १४०
मधु ५५
मधुर हास ११७
मधुमक्खियों ५५
मन्थाल गौतम ८३
मन्दर पर्वत २२
मन्दराचल २२
मन्दाक्रान्ता १५४
मन्दाकिनी २४, २५
मन्दार पुष्प ९७, १६८
मन्दिर ७८, ९९, १६५, १७१
मनु ४४
मनुष्य जाति ४४
मनुष्य वर्ग ४४
मनुष्यत्व १३१
मनुस्मृति ८०
मनोरंजन ११७, ११८, १५६
म्यान १३७
मयूर ४३, ४४, ८१
मरणासन्न १५८
मर्कट २१
मर्कट हत्या २४
मरहम १५८
मरुस्थलों ११७, ११९
मल्ल ४१
मल्लों १९, ४१, १४०, १३७
मसूर १११
मशाले ११८
महाकवि ८७, ११५, १५४
महाकवि अश्वघोष ११५
महाकवि कालिदास १५४
महाकारुणिक २६
महाकाव्य ५, १५१
महाकाश्यप ८७
महाक्षत्रप राजवुल ८२
महाक्षत्रप रुद्रदामन प्रथम १११
महा गिरि २३
महानागों ९८
महापंथक ३८
महा पंडित राहुल सांकृत्यायन ५५
महा पथ १८, १७०
महा पणेभ्या ११७
महापरिनिर्वाण १७, १८, २६, ८५, १३७, १६८, १७३
महा प्रजापती गौतमी ८८
महाप्रज्ञापारमिताशास्त्र ७

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

महा भारत १५६
महाभाष्य ८१
महाभिनिष्क्रमण ८, ५२
महाभिषक् १५८
महा मंगल सुत्त ४०
महामानव १४, २०, ३९
महामानव बुद्ध ४९, ९९
महामुनि ५२
महायान १, २, ७८, ८५, ८७
महायानभूमिगुह्यवाचामूलशास्त्र ४
महायान श्रद्धोत्पाद ८७
महायान श्रद्धोत्पादशास्त्र ४
महायान सम्प्रदाय १, २
महायान सूत्रालंकार १,७
महाराज १३३
महाराजाओं ११५
महाराजा अशोक २०
महाराजाधिराज १३३
महाराजाधिराज देवपुत्र वासिष्क ७९, १६८
महावंस ९८, १६८
महावादी अश्वघोष १
महावर ६०
महावस्तु ४५, ९६, ११४
महाशय ८७
महावणिक् ११३, ११७
महावत ११८, ११९
महावप्र १३५, १७०
महा विभाषाशास्त्र ८५
महासत्व २१
महासांघिक ८५, ८७
महासांघिकों ८७
महासेन ८१
महा सेनापति १३६
महास्थविर ४
मही १३
महीतल १३
महीश्वर १३३
महेन्द्र १९, २१, ८३
महेश्वर १३३
मोह ९४
महोरगा ९७
महोषधि १५८
माणविका १५३
मात्स्य न्याय ४०
माता ४८, ११७
माताओं १३७
मातृ चेट ३, १५१
माध्यमक ८७
मान्धाता ८३
मानवकृति १६७
मानसिक १५७
मानसिक व्याधि १५७
मानसिक व्याधियां १५८
मानसिक विकारों १५८
मानसिक एकाग्रता ९४
मान सरोवर २२
माया देवी ४८
मार्ग ९१
मार्शल १६६
मालाएँ ११७
मालाओं ५८

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

मालाएँ ११७,१७०
मांस ९२,९५
मांसाहारी ५३,५४
मासक २१
माशा १२०
माष १११
मिथ्याचरण ३८
मिथिला ३८
मिनेण्डर १४,९५
मिलिन्द ९६
मिलिन्द पञ्ह २३
मिलिन्द प्रश्न ९५
मिस्र ११९
मित्र ९३,११५,१३०,१३१,१३२,१३८
मित्र सम्पत्ति १३८
मित्र सम्पदा १३८
मीमांसा १४६,५८
मुक्ति ४६
मुकुट चैत्य २५
मुकुट ५२,६०,१७३
मुख १५५,१५८,१६५
मुखोपाध्याय ६
मुजफ्फरपुर १६
मुनि ४८,४९,१५१,१५२
मुनिश्रेष्ठ ५
मुनि-अराड १५
मुनियों ५६
मुनि वशिष्ठ ५०
मूँग (मुद्रग) १११
मूछों ६०,११४,१५५,१६५
मूँठ १३७
मूर्ति ९९
मूर्ति-पूजा ८५
मूर्तियाँ १५५,१६५,१६७,१६८
मूल ५२
मूल फलाम्बुभक्षी ५४
मृग ११३,१५५,१६९
मृगों ८३,११७,१५५
मृगया ६२
मृगदाव २६
मृगमांस ५४
मृगरथ ११३
मृत्यु ९०
मृत्युदण्ड १३९
मृतक ९०
मृत संस्कार ५१
मृतस्नान ५१
मृदंग ६१,११७
मेकल १६
मेखला ५९
मेगस्थनीज १७१
मेरठ १५
मेढ़ों ११२
मेरु २३
मेष ६१
मैनाक २३
मैनाक पर्वत २३
मैत्री ८७
मैत्री सम्बन्ध १४०
मोक्खचिक ६३
मोती ११९

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

मोर २३
मोराप्रस्तरखन्ड ८२
मोरों ७९
मोह ९४
मोहनजोदड़ो ११७
मोहराज ८७
मोहपाश ३९
मोक्ष ४६,४७,८३
मौद्गल्यायन ६,८८
मौर्य सम्राट अशोक १७२
मौर्ययुग १७०
मौसी ४८

य

यक्ष १७,९९,१६६
यक्षदासी ९९
यक्षपूजा ९९
यक्षाधिप ९९,१६८
यक्ष यक्षिणियों १६८
यक्षिणी ६४,९०
यक्षिणीपूजा ९९
यक्षिला ९९
यक्षी ९९
यज्ञ ४५,४७,१३६
यजुर्वेद १५६
यज्ञों ७९
यज्ञोपवीत ५८,८०
यमक १५४
यमुना ३८,४३
यमुना नदी १८
ययाति ८३
यवनराज तुषास्प १११
यश ८८
यशोद ८८
यशोधरा ५०
यसोज ३९
याज्ञवल्क्य ३६
यातायात १२२
यात्रा २६
यात्रियों १७०
यान ३६,१३८,१२१
याम ८९
युग १५३
यूनानियों १३६,१६३
युवराज १३३,१४०
यूनानी ७८,१६६
यूनानी प्रभाव १६६
यूनानी राजा मलिन्द ९५
यूप ७९,८०,१६८
योक्त्र ११५
योग ६७
योगफल ८७
योगसाधन ८७
योगविधि ६७
योगाचार ८७,८९,१५४,१५८
योगाचारी ८७,८८
योगानुकूल ८७
योगाभ्यासी ८८
योगारूढ़ ८८
योगी १६६

र

रंग ११९
रंगों १५५

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

रंगबिरंगी पुतलियां १६९
रक्षक ९३,९६
रजक ११४
रजतकार ११६
रजत निर्मित ११६
रण-भूमि ९३
रणभेरियों १३७
रत्न ५९,१६८
रत्नगिरि २२
रत्नद्वीप १४
रत्नहार १५५
रत्नांगुलीय ५८,५९
रथ ९५,९६,१११,११२,११३,१२१,
१३६,१५५
रथ चालक १३६
रथ प्रणेता १३६
रथ संचालक ११८
रथसेना १३६
रमणीय देश ३६
रश्मिधर ११८,१३६
रस्सियां ९६
राक्षस २१
राज उत्सवों १३९
राजकार्य १३०
राज कर्तव्यों १३१
राजकुमार ५०,१२१,१३३,१३४,
१५१,१५२,१५३,१५४,१७०,१७१
राजकुमार जेत २५
राजकुमार सिद्धार्थ ६२,११३,१५१,
१५२,१५६,
राजगृह १४,४८,१४३,१७३
राजछत्र १३३
राजतन्त्र १३३
राजदरबार ३८
राजदीक्षा १३३
राजदूतों १४०
राजदोषों १३४
राजधर्म १३१,१३९
राजधानी १३२,१३५,१७२
राजनीति १३४
राजनीतिक १५१
राजपथ १७०
राजपूताना ७९
राजपत्नी १३४
राजपद १३३
राजपुत्र १३९,१४०
राजपुरुष १४१
राजभृत्य १४१
राजर्षिगय १५२
राजमहलों १५३
राजशास्त्र १३५,१५४,१५६
राजमार्गों १६९,१७०
राजप्रासाद ११८,१७१
राजकीय आय १३५
राजहित १३५
राजलक्ष्मी १३३
राजविरुद १३३
राजघरानों ११८
राजवुल ८२
राजतन्त्रात्मक ४०
राजतन्त्रात्मक पद्धति ४१
राजनीतिक विप्लवों ११०

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

राजव्यवस्था १३०,१३१
राजा ११५,११८,१३०,१३१,१३२,
१३३,१३४,१७०
राजा शुद्धोदन ८,७९
राजा वसु १५
राजाधिराज १३३
राज्य १३०,१३२,१३५,१३७,१३९
राज्यांग १३०
राज्यरथ १३४
राज्यरक्षण १३९
राज्यप्रबन्ध १४०
राज्य प्रासादों १६९
राज्यलक्ष्मी ३८
राज्यश्री १३२
राजाज्ञा १३५
राप्ती नदी २४
राध ८८
रानी १३४
राम ८,८१,८२,१६७
राम-वन-गमन ८
रामग्राम २०
रामपुर २०,१७२
रामायण ६,१५६
राष्ट्र १३५
राष्ट्रहित ४४
राष्ट्रपाल २१
राहुल सांकृत्यायन ८५
रात्रि ८८,८९
रीछ ४३
रुद्र ८१
रुद्र हिमालय २३
रुद्रदामन १११
रुद्रिल ७९
रुधिर ९५
रुरु ८३
रेवत ८८
रेशमी वस्त्र ११४
रोग १५७,१५८
रोगदोष १५७
रोगी १५८
रोगोत्पत्ति १५७,१५८
रोगोत्पादक १५६
रोम ११९,१२०,१२२
रोमनो-बौद्ध १६६
रौप्य-निर्मित ५८

ल

लंहगा ५७,५८,११४
लक्ष्मी ११३,१२४
लखनऊ संग्रहालय ५७,५९,६०,११४
लगाम ११८
लड़ाकू हाथियों १३६
लड़ी ११५
लम्बी चोली ५८
ललित विस्तर १६५
लवण १२०
ला महोदय २३
लाल १५५
लाल चन्दन १६०
लालन-पालन ११८
लि-तई-सन-पाओ-ची ७
लिच्छवीसंघ ४१
लिच्छवी ५६,१४०

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

लिपिशाला १५२
लुब्धक ११७
लुम्बिनी २६
लुम्बिनी वन २६
लुटेरों ११९
लोक ३,९७
लोक कल्याण ३७,१३२
लोक तांत्रिक पद्धति ३८
लोकतन्त्रात्मक ३८
लोक तांत्रीय धर्म राज्य ४१
लोकतन्त्र परम्परा ३९
लोकतन्त्र प्रणाली ४१
लोक और परलोक ४६
लोक सेवकों ११७
लोक नायक १७२
लोक नायक बुद्ध ५,३९,१३७
लोकनेता १३१
लोकपाल १६५,१६७
लोक हृदय १३०
लोहा ९७,११५,११९,१३९
लोहार ११५
लोहित चन्दन ६०
लोध्रवन २६
लोभ ९४
लौकिक ३७
लौह अंकुश १३६
लौहकार ११५
लौह गोलियों ६१
लौह स्तम्भ ११५
लौह-स्तम्भों १३९,१५५,१७३

व

वंश लक्ष्मी ३३
वंशस्थ १५४
वंशानुगत १३२
वंशीवादन १६७
वकनपति ८३,८४
वचन ९२
वज्र ८९
वज्रयानमूलपतिसंग्रह ४
वज्र सूची ४,६,१५६
वज्रसूचीकार १५६
वज्जिय संघ ४१
वत्स ८८
वदकसा ८४
वद्यभूमि ४१
वट ४३
वरुण १३९
वल्कलधारी ५७
वल्कलि ८८
वल्चर पीक २२
वसुधा १३
वसुन्धरा १३
वसुमित्र ८५
वसुवन्धुचरित ७
वसुधैव कुटुम्बकम् ९४
वस्त्रों ११७
वणिक् ११७,११९
वणिक व्यवस्था २६
व्यभिचार ९२
व्यवसाय ४५
व्यवसायी ११३
व्याकरण १५६
व्याकरण शास्त्र १५१
व्याध ४५,५२

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

व्यापार ४४,११०,११९
व्यापारिक मार्ग ११९
व्यापारिक वर्णन ११९
व्यास ५०,८३,१५४
व्यूह रचना १३७
वर्च्छी ११५
वर्ण चतुष्क ४४
वर्ण व्यवस्था ३६
वर्धकि ११३
वर्धकि कन्या ११३
वर्धमान ११६,११७
वर्म १३८
वर्षकार १४०
वर्षगांठ १४०
वर्षाकार १४०
वर्षावास २०
वृण १५८
वृत्त ४७,९७
वृहस्पति ६४,१३०,१५६
वृषध्वज १६७
वृषभ १६७
वागीश ८८
वातायन १७१
वात्स्यायन ६४
वादिकायें ११८,११९
वाद्य यन्त्र ६१,१५३
वाद्यहेतु ६०
वानप्रस्थ ४५
वाणिज्य ११०
वामन १७
वामन जनपद १७
वाराणसी २०,२५,८९
वाराणसी नगर २०,२५
वाल्मीकि १५६
वारमुख्याः १५६
वासव ८१
वासुदेव ८२
वास्तुकला १७१
वास्तुविद्या १६९
वास्तुज्ञ १५६
विकर्षण १६७
विचारधारायें १५३
विचारयोग ४१
विजय १४०
विजितसेन ३९
विज्ञान ९१,९६
वितर्क ९४
विदिशा ९६
विदेह १३
विदेह गण २०,२५
विदेहगणराज्य १७
विदेह पर्वत २३
विधवा प्रथा ६३
विधि प्रणेता १३०
विद्या विहार ५२
विद्यार्थी १५१,१५२
विद्यार्थी जीवन १५१
विद्यारम्भ १५२
विद्याध्ययन १५३
विद्यायें १३३,१३४,१५४
विनय ४१,१३१,१३२
विन्ध्य २३

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

विन्ध्य पर्वत २५,१५१
विन्ध्याचल २०
विन्टरनित्ज २३,६७,७८
विनायक २१
विनिमय ११०
विनीतानुचर १४१
विप्र ४८
विपुल पर्वत २३
विभव तृष्णा ४१
विम ८१
विमकदफिसेस ८४
विमल ८८
विमान १७१
विराट् पुरुष ४५
विलेपन ६०,११६
विवाह संस्कार ५०,५१
विविध क्रीडाओं ११७
विविध छन्दों १५४
विविधरंगों १६
विविधागम १५४,१५६
विहार २१,२५,२६,६०,१६९,१७१
१७२,१७३
विहार प्रदेश २०
विश्व १६७
विश्वम् १३
विश्वामित्र ८३
विशुद्ध चतुर्थ ध्यान ९४
विशेषक ११६
विष १५८
विषयों १५६
विषय-वासनाओं १५४
विषाण ८१
विष्णु ६४,८१,८२,१६७,१७०
विष्णु मूर्तियाँ १६७
विश्राम शालाओं १७०
वीणा ६२,१५३
वीर ९३
वीरांगनाओं १३७
वीरमल्ल १३७
वुन्देलखण्ड २४
वेदना ९१,९२,९६
वेदज्ञान १३४
वेदी ९९
वेदों ३८,५०,१५१,१५४,१५६,१५७
वेद पुराणों ८
वेद वेदांगों १५३,१५४,१५६
वेदवाद ३८
वेदांगों १५६
वेणु कटक २६
वेणुग्राम २०
वेणुमतीग्राम २०
वेरुल १६५
वेश्या ५०
वेश-भूषा ३६,५८
वैदिक १५,४४,७९
वैदिक काल ४५,१७०
वैदिक मन्त्रों ७९
वैदिक यज्ञों ७९,८०
वैदिक साहित्य १७०
वैद्य १५७,१५८
वैडूर ११६
वैडूर्य मणि ११६

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वैवस्वत ८२
वैश्य ४०,४३,४४
वैश्य पुष्पगुप्त १११
वैशेषिक दर्शन १५६
वैष्णव ७९,८१,८२,१६५,१६६
वैष्णव सम्प्रदाय ८१,८२
वैश्रवण ८१,१६७

श

शकट १११,११३,१२१
शक्तुक ५४
शक महाक्षत्रप १११
शक्र ८१,१६७
शक्त १२०
शतपंचशतकनामस्तोत्र ४
शतभुजी १७०
शब्दावली १६५
शम्बर १७०
शमित ८८
शयन ८९
शर १३७
शरणागत १३२
शरदऋतु १७२
शरद चन्द्र १३२
शरीर ९५
शल १३७
शल्य ११४,१३७,१५३,१५८
शल्यचिकित्सा १५८
शाहाबाद १६
शस्त्र १३०
शत्रु ११८,१३१,१३२
शत्रू-दमन ३२,१३६,१३७
शत्रु निग्रह १३५
शत्रु विनाश १३७
शत्रुसेना १३२
शाक ५३,५४
शाकाहारी ५३
शाक्य कुमारों ३८
शाक्यगण १७
शाक्य स्त्रियाँ ६४
शान्तनु ८३
शान्ति परायण २२
शारद्वतीपुत्र ८८
शारिपुत्र प्रकरण ३,६
शारिपुत्र ६
शारीरिक शृंगार ११७
शाल १६६
शाल भंजिकाओं १७१
शालवन २५,२६
शाल वृक्षों २४,१५२
शाली ५३,१११
शाहजी की ढेरी ८५,१६६
शाही दीर्घ जीवन ३
शासन व्यवस्था १३०
शास्ता ४१
शास्त्र १३४,१३५,१५४,१५६
शास्त्र प्रणेताओं १३१
शास्त्रानुकूल ५
शिक्षा-दीक्षा १३४
शिक्षा-स्तर १५१
शिखि ७९
शिखिन ६१
शिक्षा-केन्द्र १५२,१५६

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

शिक्षकों १५२
शिक्षा प्रणाली १५६
शिक्षा-शुल्क १५५
शिखरणी १५४
शिरीश ४३
शिरोवेष्ट ४८,५६
शिल्प कला ९९
शिल्पी संघों ८४
शिलापट्ट ९८
शिल्पियों १६६
शिव ७९,८१,१६७
शिव-भक्ति ८१
शिव लिंग १६८
शिवालिक पहाड़ियाँ २३
शिवि ८३
शिविका १२१
शिविर १९
शिवोपासना १६८
शिशुपाल १५
शिष्ट १५६
शिष्यों १५२,१६९
शिष्यत्व १५१
शीघ्रवाहन ११२
शील ८९,९१
शीलव्रत ९३
शाल सम्बन्धी मार्ग ९२
शीलाचारी ४२
शीतोपचार १५८
शुक्र ४३,७९,८१,१३०,१६५
शुभ्रमेघों १७२
शुल्क १५८
शूद्र ३९,४०,४१,४३,४४
शूद्रक ५३
शून्य ९५
शून्यता ९४
शूर्पारक ११९,१२१
शूर ३
शेतविक वन २५,२६
शैव ८१
शैवमत ८२
शैव सम्प्रदायों ८१
शैल वर्द्धकि ११४
शैल रुपकार ११४
शैवल ८८
शोक कालीन ५८
शोण ८८
शोधन १५४,१५६
शोणापरान्त ८८
श्वेत ११४
श्वेत चद्दर ५१
श्वेत वस्त्रों ११४

श्र

श्रद्धा ८९
श्रमसेवा ११७
श्रमण सम्प्रदाय १५२
श्रावस्ती ८५,११९,१७२
श्री १८१
श्रीवृद्धि १३१
श्रोतापत्ति फल ९३
श्रीधर वर्मन १११
श्रेणी ११३
श्रेष्ठ वेश्याओं १५६

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

श्रेष्ठि ९७
श्रेष्ठिन् १११
श्रोण ८८

ष

षडमुख ८१,१६७
षडायतन ९१

स

संकाश्य २१
संग्रहालय ८७
संगीत १५६
संगीत वादन ६१
संगीत-वाद्य १५६
संज्ञा ५६
संघ ४१,४३,१३७
संवगुह्य ३
संघमित्र १४
संघ राज्य १३०
संघीय लोक ४०
संचान ३
संचालक १२१
संडसी १५८
संतोष ९१
संदस १५८
संयम १४१
संयतेन्द्रिय ८८
संयोजनोत्पन्न ९३
संसार ४५
संस्कार ३६,४९,५२,९५,९६,१३३,१५८
संस्कृतभाषा ५
संस्कृत बौद्ध साहित्य ७
संस्कृति १७२
सक्तना १२०
सकृदागामिफल ९४
स्रगधरा छन्द ६
सचल-शिक्षा संस्था १५२
सचिव १३४
सड़कों १७०
सताग्रयक्षों २३
सती प्रथा ६३
सत्तू ४४,१२०
सत्यक २१
सपेरे ११७
सप्त ९३
सप्तद्वीपा १३
सप्तांग राज्य १३८
सप्तांगों १२४,१३०
सभा भवन १७१
समचरिया २७
समरभूमि १३८
समाज ९९,११०
समाधि ९१,९३
समानता ११०
समाचरण ८७
समासों १५४
सम्राट् ८१,८५
सम्राट् अशोक ८,१४,६१,८५,१११,१३०,१३२,१७३
सम्राट् कनिष्क ५५,७८,९८,१७२
सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य ११
समिधाहारक १५३
समुद्रगुप्त १४

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

समुद्रवसना १३
सम्वृतबोधिसत्वभावनोपदेश
वर्ण-संग्रह ४
सम्यक् आजीविका ९१,९२
सम्यक् कर्मान्त ९१,९२
सम्यक् दृष्टि ९२
सम्यक् प्रयत्न ९२
सम्यक् वचन ९१,९२
सम्यक् व्यायाम ९१,९२
सम्यक् संकल्प ९१,९२
सम्यक् समाधि ९१,९२,९३
सम्यक् स्मृति ९१,९२,९३
सन्यास आश्रम ४६
सयानपथ २११
सर जान मार्शल ५७,८७,९९
सरमोनियर विलियम्स ९३
सरयू ४३
सरसों (सर्षप) १११,११७,१५३
सरस्वती पुत्र सारस्वत १५६
सरस्वती देवी ११५
सरोवर २३,९८,१६८
सर्ग १५४
सर्पदास ८८
सर्वं अनात्मम् ९५
सर्वं दुखम् ९५,९६
सर्वमनित्यम् ९५
सर्वं शून्यम् ९५
सर्वधर्मव्यवस्था १६२,१३९
सर्व लोक ईश्वर १३३
सर्वास्तिवादी ८५,८६
सर्वानन्द बनर्जी ५
सलवार १६८
सलाक ६३
सवारी १२१
सहचरी ५०
सहमरण ६४
सहरी बहलोल १६६
सहेत २६
सहेत-महेत २१
सहेली ५१
साकेत १३
साक्यसिंह २६
साँख्य १५६
सागराम्बरा १३
सांङ्ग्राहक ११८
साँची ५७,८६,९९,१६५
साँची अभिलेख १११
साड़ी ५७
सात्विक वृत्ति १३१
साम १३९
सामरिक १३६
सामवेद १५६
सामाजिक १५१
सामाजिक-क्रान्ति ४४
सामाजिक-शिक्षा १५२
सामीचिपटिपन्न १५१
साम्राज्यवाद १३२
साम्राज्यवादिता १३३
सारनाथ २६,८५,८६,८७,८९,११४,
१६७,१७२,१७३
सारनाथ संग्रहालय १५२
सारथि ११८

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

सारथी छन्दक ७
सारस्वत १५४
सार्थवाह ११९
साहित्य १५१,१५३,१५४
साहित्यकारों १५१,१५६
सिक्के ८१,१२०
सिंचाई १११
सिंचाई के साधन १११
सिन्धु प्रदेश ८५
सिद्धार्थ ८,२६,८०,९७,९९,१३३,
१५२,१६८
सिलवालेवी २
सिंह २१,२२
सिंहद्वार ११८
सिंहल १४
सिंहासन १६६,१७२
सींग १६५
सीर ११०,११५
सीरा १११
सुकुमार मुखोपाध्याय ६
सुगन्धित तेलों ५१,११८
सुगन्धित द्रव्य ११९
सुजाता २४,८८
सुत्रालंकार शास्त्र १,२,४,६
सुदर्शन ८८
सुनार ८८
सुनीत ३९
सुपारा १२०,१२१
सुभूति ८८
सुमार्गगामी ४१
सुमेरु पर्वत १३,२३
सुरक्षा १४१
सुरक्षा प्राचीर १३७
सुरापान ५५
सुरामेरेय ३९
सुर्वण कर्मार ११५
सुवर्ण सिकता ११
सुवर्णाक्षी १
सुविभक्तान्तरापण १८
सुश्रुतवाद १५७
सुहृत १३०
सूकर ६१,११२
सूत ११२
सूती कपड़े ११९
सूप्पिय ३९
सूर्पारक १४
सूर्य ८१,१६५,१६७,१६८
सूर्य देव १६८
सूर्य नारायण ५
सेट्ठी ११३
सेठ साहूकार ४१
सेतु १११
सेनजित ५०
सेन हस्तिन ९८
सेनाक ५०
सेन्ग यिन्ग ७
सेना १३६
सेनापति १३६
सेनाधिकारी १३६
सैन्य-अंग १३६
सैमुअल बील ५

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

सोना ८८,११५,११६,१२०,१२२, १५४,१५५
सोने की लगाम ११५
सोपान ९२,१७१
सोपाक ३९
सोमरस ५४
सोम-पान ८०
सोम यज्ञों ८०
सोमवर्मा ८३
सौन्दरनन्द ८,१२,३५,४४,४७,५०, ५२,५७,८६,८७,९१,९५,९९,११३, १२०,१२१,१३४,१५३,१५६
स्कन्द ८१, १६७
स्कम्भ १७०
स्टील ११९
स्तम्भ १७२,१७३
स्तम्भों १६९
स्तम्भमायसम् ११५,१७३
स्तूपावशेष १६६
स्तूपों १६,१८,२०,८६,१६७,१६९, १७१,१७२,१७३
स्त्री विघ्न ९३
स्त्री-शिक्षा १५१,१५३
स्थल के साधन १२१
स्थविर १
स्थविर अश्वघोष १२
स्थविरवाद ८५
स्थापत्य कला १६९,१७०
स्थूलपति ४
स्थूलशिरा ८३
स्नानविधि ११७
स्नायु ९५,१७२
स्मृति उपस्थान ९६
स्मृतिपूर्वक ८७
स्मारक १७२
स्वर्ग ८१,९७,१३९
स्वर्गीय १६९
स्वर्ग नर्क ८१
स्वजनों ४१
स्वप्न विद्या १५४
स्वप्नविद्याविशारद १५४
स्वप्नविदोद्विजः १५४
स्वर्ण १६८
स्वर्णकार ११६
स्वर्णमय १५५
स्वर्ण मुद्रायें १५५
स्वर्ण-शुद्धि ११५
स्वर १५३
स्वर्णभूषणों ५७
स्वामी ११८
स्वामीनाग ९८,१६८

ह

हथकड़ियाँ १३६,१३७
हंस ४३
हग्गुदेव ११५
हड़प्पा १७०
हत्थारोहकपुत्र ३९
हथवाल पुत्र ३९
हर प्रसाद शास्त्री ५
हरि दत्त शास्त्रीं ६६
हरित कलाप ५४
हरिषेण १५४
हल ११०,१११,११५
हवन ७९

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

ह्वेनसांग २२
हस्त ६३
हस्तक १४
कुमार हस्तक १४
हस्ति १२१
हस्ति युद्ध ६१
हस्तिनापुर १५
हस्तिरक्षक ११२
हस्ति सेना १३६
हर्ष चरित २५
हाट १७०
हाथी ४३,६१,११२,११३,११८,
११९,१३६,१३७,१५५,१६९
हाथी दांत १२१
हार ५८
हारीती १६६,१६७
हिन्दू ७९
हिन्दूकुश ११९
हिन्दू देवताओं ७९
हिंसा ८८
हिमवान २४
हिमालय १५,१६,५७.१५२
हिमालय वन २६
हिमालयी हाथी २३
हिमांचल प्रदेश १५
हिरण १६९
हिरण्यकार ११५,११६
हिरण्यवती २५,२६
हिरन्ना २५
हिल्योद्र ८४
हीन यान २,८६
हीरक कणों १७१
हीरे ११९
हुविष्क ५८,८१,९८,१२०
हेमभाण्डम् ११५
हेमवतागजा: २३
हेमो महास्तम्भ ११६,१५५,१७३
होम ४९,७९

क्ष

क्षमा ९४
क्षत्र ८६
क्षत्रप सोदाम ८२
क्षत्रिय ४३,४४,५१
क्षत्रियवर्ण ४५
क्षार १९४
क्षार गाँव ९८
क्षिति १३
क्षेमा ८८
क्षेत्र ११०

त्र

त्रिदोषों १५७
त्रिधातु प्रकोप १५७
त्रिधातु रोग १५७
त्रिपिटिकाचार्य ८५
त्रिभुज १६७
त्रिवर्ग पुरुषार्थ ४७
त्रिशूल ८१,११५,१३७

ज्ञ

ज्ञान-प्रस्थान शास्त्र ७
ज्ञान मुद्रा १६६

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

लेखक के सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक शोध ग्रन्थ

संस्कृत बौद्ध साहित्य में भारतीय जीवन

(प्रथम शताब्दी से तृतीय शताब्दी तक के विषय में)

विद्वानों की सम्मतियाँ

कृष्णदत्त वाजपेयी
टैगोर प्रोफेसर तथा अध्यक्ष,
प्राचीन भारतीय इतिहास,
संस्कृति तथा पुरातत्व विभाग

सागर विश्वविद्यालय
सागर (म.प्र.)
दिनांक ११-१-६८

प्रिय डा० अंगनेलाल,

आशीष !

आपका १३-१-६८ का पत्र, ग्रंथ की प्रति के साथ मिला। 'संस्कृत बौद्ध साहित्य में भारतीय जीवन' पुस्तक को मुद्रित रूप में देखकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हुई। यह आपके उत्कट प्रयास का फल है। संस्कृत बौद्ध साहित्य में उपलब्ध सामग्री के आधार पर प्रथम बार इस पुस्तक में भारतीय जीवन का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। प्राचीन संस्कृति के अध्येताओं के लिए यह पुस्तक निःसंदेह बहुत उपयोगी सिद्ध होगी। विभिन्न विषयों का विवेचन मार्मिक ढंग से किया गया है। इस महत्वपूर्ण रचना के लिए हार्दिक बधाई।

भवदीय

कृष्णदत्त वाजपेयी
प्राचार्य तथा अध्यक्ष,
प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति
तथा पुरातत्व विभाग,
सागर विश्वविद्यालय

डा० अंगने लाल
५१२।४३१, सिद्धार्थ पार्क,
बस रोड, निशातगंज,
लखनऊ (उ०प्र०)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

V. V. MIRASHI
prof. & Head of the
Department of
Ancient Indian HIstory and Culture,
NAGPUR UNIVERSITY

"Kamalasadan",
Dharampeth, Nagpur,
29 January, 1968

Dear Dr. Anganelal,

I have to thank you heartily for your kindness in sendin me your book "Indian Life in Buddnist Sanskrit Literature" I have gone through it with great interest. You have collectec with great patience and labour ample data bearing on vario aspects of ancient Indian life such as political, religiou social etc. Your book has made a noteworthy contribution t our knowledge of life in ancient India in the early centurie of the Christian era. The book is fully documented and wi prove very useful to students of ancient Indian history. congratulate you on tne publication of your thesis and hop that it will have wide circulation.

Yours sincerely,
V.V. Mirashi

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

राज्य संग्रहालय पुस्तकालय
प्रो॰ बी॰ एन॰ पुरी
संग्रह
लखनऊ

State Museum Library
7129
Lucknow

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)